nbt.india
एकः सूते सकलम्

पुस्तक संस्कृति

साहित्य और संस्कृति की द्विमासिकी

वर्ष - 6 • अंक - 3 • मई - जून 2021 • मूल्य ₹40.00

• दृष्टिहीनों के लिए वरदान ब्रेल लिपि • भारतीय रेल और दिव्यांगजन • दिव्यांगों का सहारा–समीर घोष

• दिव्यांगजनों की कला में सक्षमता और आर्ट थेरेपी • दिव्यांगों के लिए स्वावलंबन • विकलांगों का व्यवसायगत पुनर्वास

सीएसआईआर-केंद्रीय सड़क अनुसंधान संस्थान

(आईएसओ प्रमाणित आरएंडडी प्रयोगशाला)

<u>राजभाषा गृह पत्रिका "सड़क दर्पण"</u>

"राजभाषा हिंदी का प्रचार एवं जन-मानस में वैज्ञानिक चेतना का प्रसार"

❖ वैज्ञानिक तथा तकनीकी लेख
❖ जनमानस के लिए लोक रूचि के विषय
❖ संस्थान की विभिन्न गतिविधियों की जानकारी
❖ संस्थान के अनुसंधान और विकास (आरएंडडी) संबंधित जानकारी
❖ विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के विविध पहलु
❖ हिंदी में साहित्यिक अभिव्यक्ति
❖ समसामयिक जानकारी

संपर्क -

संपादक, 'सड़क दर्पण'
राजभाषा अनुभाग, सीएसआईआर-केंद्रीय सड़क अनुसंधान संस्थान
दिल्ली-मथुरा मार्ग, डाकघर सीआरआरआई, नई दिल्ली- 110025
दूरभाष : 26929175, 26831760, 26832325, 26832427/165
ई-पत्रिका का लिंक : **https://www.crridom.gov.in/content/sadak-darpan-hindi-magazine**

प्रधान संपादक
प्रो. गोविंद प्रसाद शर्मा

संपादक
पंकज चतुर्वेदी

सहायक संपादक
दीपक कुमार गुप्ता

संपादकीय सहयोग
विजय कुमार, मोहन शर्मा

विज्ञापन एवं प्रसार
कंचन वांचु शर्मा

उत्पादन
अनुज कुमार भारती, पवन दुबे

रेखाचित्र
ब्रजेश कुमार

सज्जा/डिजाइन
ऋतुराज शर्मा, समरेश चटर्जी

शब्द संयोजन/कार्यालयीन सहयोग
प्रवीन कुमार

सदस्यता शुल्क
व्यक्तियों के लिए
एक प्रति : ₹ 40.00
वार्षिक : ₹ 225.00
(शुल्क भारत के लिए मान्य)

संपादकीय पत्र-व्यवहार
संपादक
पुस्तक संस्कृति
राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत
पता : नेहरू भवन, 5 इंस्टीट्यूशनल एरिया
फेज़-II, वसंत कुंज, नई दिल्ली-110070.
फोन : 011-26707876
ई-मेलः editorpustaksanskriti@gmail.com

प्रकाशक व मुद्रक अनुज कुमार भारती द्वारा नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया (राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत) नेहरू भवन, 5 इंस्टीट्यूशनल एरिया, फेज़-II, वसंत कुंज, नई दिल्ली-110070 के लिए प्रकाशित और रेक्मो प्रेस प्रा. लि., सी-59, ओखला इंडस्ट्रियल एरिया फेज़-I, नई दिल्ली-110020 से मुद्रित।

संपादक
पंकज चतुर्वेदी

सर्वाधिकार सुरक्षित : प्रकाशित सामग्री के उपयोग के लिए लेखक और प्रकाशक की अनुमति आवश्यक है। प्रकाशित रचनाओं के विचार से प्रकाशक का सहमत होना आवश्यक नहीं है। राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत से संबंधित सभी विवादास्पद मामले केवल दिल्ली न्यायालय के अधीन होंगे।

पुस्तक संस्कृति

साहित्य एवं संस्कृति की द्विमासिकी

वर्ष-6; अंक-3; मई-जून, 2021

>> **दिव्यांग विशेषांक** <<

इस अंक में

संपादकीय	*प्रो. गोविंद प्रसाद शर्मा*	2
रिपोर्ट	**विश्व का सबसे बड़ा वर्चुअल पुस्तक महाकुंभ**	4
आलेख	**दृष्टिहीनों के लिए वरदान ब्रेल लिपि**—*डॉ. संध्या कुमारी*	17
आलेख	**भारतीय रेल और दिव्यांगजन**—*अरविंद कुमार सिंह*	20
लेख	**दिव्यांग-कल्याण को समर्पित राष्ट्रीय संस्थान**—*दीपक पाण्डेय*	23
व्यक्तित्व	**दिव्यांगों का सहारा–समीर घोष**—*सविता प्रथमेश*	26
आलेख	**दिव्यांग नर में नारायण देखता नारायण सेवा संस्थान**—*अंकुर पारीक*	29
शब्द ज्ञान	**आओ भारतीय भाषाएँ सीखें**	32
आलेख	**दिव्यांगजनों की कला में सक्षमता और आर्ट थेरेपी**—*सुमन 'पुष्पश्री'*	34
शख़्सियत	**दिव्यांगों को चैंपियन बनाते हैं चंगेज़ खान**—*सीमा 'असीम' सक्सेना*	37
प्रौद्योगिकी	**विशेष आवश्यकता वाले बालकों की शैक्षिक आवश्यकताओं के लिए सहायक तकनीकी एवं प्रौद्योगिकी**—*डॉ. किरन जोशी*	39
आलेख	**माधव राव सप्रे स्मृति समाचार पत्र संग्रहालय एवं शोध संस्थान**—*राजेश बादल*	43
आलेख	**दिव्यांगों के लिए स्वावलंबन**—*डॉ. आरती स्मित*	47
स्मृति	**असमिया साहित्य के प्रथम कवि 'हेम सरस्वती'**—*दीपज्योति बरा*	50
आलेख	**विकलांगों का व्यवसायगत पुनर्वास**—*प्रीति दुबे*	53
पुस्तक समीक्षा		56
साहित्यिक गतिविधियाँ		62
पुस्तकें मिलीं		64

शोध और हमारी शोध दृष्टि

मनुष्य का आदिकाल से आज तक का विकास उसकी शोधात्मक प्रकृति के कारण हुआ है। प्रारंभ से ही मनुष्य ने अपने चारों ओर के वातावरण को देखा, उसमें चीजों को समझने की जिज्ञासा जागी और यहीं से शोध भी प्रारंभ हुआ। शोध चीजों के वास्तविक स्वरूप और उनके कार्य-कारण संबंधों को जानने और उसे समाज के सामने लाना है।

व्यवहार में हम 'खोज' और 'शोध' शब्दों का प्रयोग करते हैं। खोज का तात्पर्य मूलतः उन चीजों और तथ्यों को सम्मुख लाना है जो पहले से समाज को या व्यक्ति को मालूम न हों अथवा ज्ञात न हों। उदाहरण के लिए, मनुष्य ने बहुत पूर्व आग जलाने की खोज की, पर उसने उस समय अग्नि पैदा होने के कार्य-कारण संबंधों को नहीं जाना। शोध किसी ज्ञात चीज के कार्य-कारण संबंध को जानना है। इस संबंध को जानने के लिए निश्चित तकनीक का प्रयोग करना या वैज्ञानिक प्रयोगशालाओं में विभिन्न प्रयोगों द्वारा तथ्य और कार्य-कारण संबंध को जानना उसकी पद्धति है। अतः पत्थर से पत्थर रगड़कर ऊर्जा पैदा हुई, यह खोज मानी जाएगी, पर पदार्थ के सूक्ष्म कणों के बीच धनात्मक और ऋणात्मक आवेशों एवं उनके बीच उत्पन्न चुंबकीय प्रभावों से ऊर्जा पैदा होती है, यह जानना तथा एक प्रकार की ऊर्जा के दूसरे प्रकार की ऊर्जा में परिवर्तित होने के सिद्धांत को जानना, शोध हुआ। सन् 1995 में पहली बार यह खोजा गया कि सौरमंडल के बाहर ग्रह हैं। अभी तक ऐसे 750 से अधिक एक्सो प्लेनेट खोजे जा चुके हैं। उनमें जीवन की संभावनाओं को परखना शोध है। उत्खनन के परिणामस्वरूप जो सामने आता है, वह खोज है। God Particle, 'बिग बैंग' को सामने लाना खोज है।

शोध का क्षेत्र बहुत व्यापक है, वह जीवन के वैज्ञानिक, समाजशास्त्रीय तथा बहुविधि अध्ययन से लेकर विश्वव्यापी समस्याओं के अध्ययन, उससे भी आगे प्रकृति और उसके व्यवहार के अध्ययन तक विस्तृत है। भविष्य में भी जो ज्ञात होगा, उसके कार्य-कारण संबंधों का अध्ययन, उसका स्वरूप, प्रभाव, संभावनाएँ और सावधानियों का अध्ययन शोध की परिधि में आएगा। शोध एक व्यवस्थित अध्ययन विधि है जो यह जानना चाहती है कि क्या हो रहा है? कैसे हो रहा है? और क्यों हो रहा है? उसे वह स्वयं देखकर, दूसरों से पूछकर (बाह्य स्रोतों के द्वारा) और शोध करके प्राप्त करता है। मानव जीवन में शोध सतत चलने वाली प्रक्रिया है। जिस प्रकार प्रकृति नहीं रुकती, जीवन नहीं रुकता, उसी प्रकार शोध भी नहीं रुकता। शोध के रुकने का अर्थ होगा मानव प्रगति का थमना।

भारतीय समाज सदैव शोधपरक समाज रहा है। हड़प्पा सभ्यता का विकास, वेदों में निहित ज्ञान, विज्ञान, निरंतर और सतत शोध के परिणाम थे। तत्व को जानने की जिज्ञासा ने हमारी शोध दृष्टि को विकसित किया, उसी का परिणाम था कि प्राचीन भारत ज्ञान, विज्ञान, दर्शन, कला, साहित्य, ज्योतिष, व्याकरण, गणित, खगोलशास्त्र, तकनीक, वास्तुशास्त्र, आयुर्वेद आदि में उन्नत था। हमारे ज्ञान का विस्तार देश की सीमाओं से बाहर तक हुआ। परिणामतः हम और हमारा धर्म, विचार, जीवन दृष्टि, संस्कृति, सभ्यता, मूल्य भी बाहर गए, उसका लाभ आज तक विश्व और हमें मिल रहा है। इतिहास में एक कालखंड ऐसा भी आया, जब हमारी शोध की ओर प्रवृत्त करने की मूल प्रेरणा-जिज्ञासा कम होती चली गई। फलतः हमारे विचारों में और हमारी अन्वेषण प्रवृत्ति में ठहराव आ गया। इस समय हम ज्ञान को न तो गति दे पाए और न ज्ञान की चेतना विकसित कर सकने वाले संस्थानों को सक्रिय कर पाए। इस ठहराव के लिए हम प्रायः बाह्य कारणों को उत्तरदायी मानते रहे हैं। इसमें बाह्य आक्रमण और परकीय राजसत्ता प्रमुख हैं, पर यही एक कारण नहीं था, ऐसा मान लेना अन्य कारणों को कमतर आँकना होगा, जो आंतरिक प्रकृति के थे। वस्तुतः ज्ञान के ठहराव के लिए हम स्वयं अधिक उत्तरदायी रहे हैं। भारतीय ज्ञान चेतना को आगे न ले जा सकने के कुछ आंतरिक कारणों को हमें समझना होगा। इसमें एक कारण था—समाज और व्यक्ति के रूप में हममें आत्मसंतुष्टि के भाव का विकसित होना। हमें यह लगने लगा कि हम सब कुछ जानते हैं, अब जानने को कुछ बचा नहीं है। एक विचार चल पड़ा कि 'वेद में सब कुछ है, जो वेद में नहीं, वह ज्ञान नहीं, जो ज्ञान है, वह वेद में है।' इस विचार और धारणा ने हमारी जिज्ञासा वृत्ति को धीरे-धीरे कुंठित किया। इस प्रकार हमारा अपार ज्ञान ही हमारी ज्ञान चेतना को मंद करने का कारण बना।

हमने देश से बाहर जाना बंद कर दिया और अपने में ही सिमटने लगे। हमने अन्य देशों को 'म्लेच्छ' कहना आरंभ किया। क्षेत्रीय विचार जागृत होने लगा, यहाँ तक कि जब शंकराचार्य शिक्षा प्राप्त करने के लिए केरल से बाहर गए और मरणासन्न माँ की सेवा के लिए वापस अपनी जन्मस्थली कलाडी गाँव पहुँचे तो उनसे भी कहा गया कि तुम पराए देश जाकर म्लेच्छ बन गए हो, नंबूदरी ब्राह्मण होकर केरल त्याग करके तुम जातिभ्रष्ट हो गए हो। लोकमान्य तिलक और महात्मा गांधी को भी ऐसी ही स्थितियों का सामना करना पड़ा। विदेश की यात्राओं का सबसे बड़ा लाभ यह होता है कि हमारे विचार दूसरों के सम्मुख आते हैं तथा हम भी दूसरों के श्रेष्ठ विचारों को आत्मसात कर पाते हैं। वैचारिक आदान-प्रदान सदैव वैकल्पिक सोच और समझ को परखने का अवसर देता है, पर हमने ऐसा करना बंद कर दिया। प्रो. अल्तेकर का कहना है कि "यदि वे (भारतीय) यात्राएँ करते और दूसरे देशों के संपर्क में आते तो वे अपने विचार जल्दी ही बदल डालते, क्योंकि उनके पूर्वज ऐसे संकुचित मन के नहीं थे, जैसी यह वर्तमान पीढ़ी है।" (प्राचीन भारत में शिक्षा 1957, पृ. सं. 250)

इसी तरह हमने अन्य भाषाओं को सीखना, पढ़ना और अध्ययन करना लगभग बंद कर दिया। संस्कृत देव भाषा है, यह कहना

प्रारंभ किया। यह तो ठीक है, पर इसके परिणामस्वरूप समाज की सक्रियता, गतिशीलता और चीजों को समझने की हमारी प्रकृति की व्यापकता कम हुई। हम 'अहो रूपं अहो ध्वनि' की संकीर्ण मानसिकता में कैद होने लगे। धीरे-धीरे हम वैचारिक दृष्टि से आलसी बन गए। हमारे समाज का बहुत बड़ा वर्ग भाग्यवादी हो गया। हम पर आक्रमण होते रहे, धर्मस्थल तोड़े जाते रहे और हम सोचते रहे कि भगवान हमारी रक्षा करेगा, जो भाग्य में है, वह होगा। स्वयं के श्रेष्ठ समझने का भाव घर कर गया। इसने हमारी शोध की वृत्ति को नकारात्मक रूप से प्रभावित किया। इसका परिणाम यह हुआ कि हम विश्व में उभरने वाली उन शक्तियों से लगभग अपरिचित रहे, जो अन्य धर्मों और समाजों के व्यक्तियों को अपने अधीन करती रहीं और उनका बलात् धर्म-परिवर्तन करती रहीं। सही मायने में देखें तो हमने न तो अल्लाह के संबंध में कुछ जानने की कोशिश की, न ही बाइबिल में वर्णित जिहोवा को समझने की। प्रसिद्ध विचारक रामस्वरूप का कहना है, "हिंदुओं ने मुस्लिम हमलावरों और अपने इलाकों में जम गए मुस्लिम राजवंशों से लड़ाई लड़ी, लेकिन हमलावरों के मजहबी और पंथानुशासनात्मक पक्षों और प्रेरणाओं का अध्ययन संभवतः नहीं किया, उसकी उपेक्षा की हिंदू विद्वानों ने (उसकी प्राचीन गरिमा का जो भी अंश अवशिष्ट रह गया था उसने)। पुराने शास्त्रीय नियमों एवं विवेचनों का अनुशीलन तो जारी रखा, परंतु अपने वैचारिक लोक में इस्लाम जैसे नए तत्वों की मीमांसा को कोई स्थान शायद नहीं दिखा। उदाहरण के लिए, 13वीं शताब्दी तक, जब मलिक काफूर, आचार्य श्री रामानुज की पीठ के प्रभाव वाले क्षेत्र, धुर दक्षिण में हमले कर रहा था, तब उन महान गुरु के अनुयायियों ने आपस में जो शास्त्रार्थ, मनन और विमर्श किए, उनमें इस प्रत्यक्ष तथ्य के प्रति कोई सजगता दिखाई नहीं पड़ती।" (योग की अध्यात्म विद्या एवं सेमेटिक धर्म पंथ : रामस्वरूप अनुवाद एवं संपादक रामेश्वर मिश्र 'पंकज' पृ.सं.-13)। राजसत्ता के प्रति हममें तटस्थ भाव जागृत होने लगा, हम कहने लगे 'कोउ नृप होय हमें क्या हानी।' भाग्यवादी विचारों और संस्कारों और राजसत्ता के प्रति तटस्थ भाव ने प्रतिकूल समय में चिंतन-मनन के साथ ही शोधवृत्ति को भी कुंठित किया।

हमारी यही शोधपरकता की कमी यूरोपियनों, अंग्रेजों, फ्रांसीसियों, पुर्तगालियों आदि के साथ भारत में संघर्ष की स्थिति बनने पर भी उजागर हुई। हम उन्हें, उनके कार्य के पीछे की नीयत, उनके मजहब और उनकी पद्धति तथा कूटनीति को समझने में असफल रहे। पिछली शताब्दी से हम शोध की ओर पुनः अग्रसित हुए हैं, स्वतंत्रता के बाद शोध की ओर हम तेजी से आगे बढ़े भी हैं, इसके अनुकूल परिणाम भी आए हैं। विज्ञान, प्रौद्योगिकी, रक्षा और अंतरिक्ष के क्षेत्र में भारतीय मेधा द्वारा अर्जित शोधपरक ज्ञान के कारण हमारी विश्वस्तरीय पहचान बनी है, पर समाज विज्ञान के क्षेत्र में अभी बहुत कुछ करना शेष है। स्वतंत्रता पूर्व अंग्रेजों ने समाज विज्ञान और भाषा के क्षेत्र में, अपने हित में शोध किया और कराया, जिसका परिणाम अंग्रेजपरक दृष्टि को विकसित करने में हुआ। शोध द्वारा वे तथ्य, मूल्य और निष्कर्ष निकाले गए, जिनके कारण हममें जातीय हीनता विकसित हुई और हम अपने को हर क्षेत्र में अंग्रेजों से हीन समझने लगे तथा स्वयं अपने को और अपने समाज को, उनकी (अंग्रेजों) नजरों और उनके द्वारा स्थापित मापकों के द्वारा देखने लगे। हमें यह ध्यान रखना होगा कि हम एक विशिष्ट समाज हैं, जिसमें अनेक क्षेत्रीय परंपराओं और मान्यताओं के बीच राष्ट्रीय ऐक्य और सांस्कृतिक एकता सदैव रही है। हमारे जीवन मूल्य, प्रेरणा स्रोत, इतिहास पुरुष और आस्था केंद्र समान रहे हैं। पराधीनता के काल में समाज में भेद पैदा करने के लिए शोध किए गए। आज हमारी शोध दृष्टि सामाजिक एकात्मकता विकसित करने की होनी चाहिए। शोध नकारात्मक मुद्दों के स्थान पर सकारात्मक मुद्दों पर होने चाहिए।

हमारी विचार दृष्टि और शोध सामाजिक ताने-बाने को मजबूत करने के होने चाहिए, न कि उसे कमजोर करने के। आज की आवश्यकता ऐसे शोध की है जिनसे ऐसे विचारों को मजबूती मिले, ताकि हम संवैधानिक दायित्वों को समझें, प्रजातांत्रिक मूल्यों के लिए कार्य करें तथा न्यायसम्मत समतावादी समाज रचना को बल मिले। भेदभाव पैदा करने वाले तथा सामाजिक दूरियों को बढ़ाने वाले शोध समाज को नहीं चाहिए।

हमारी समृद्ध पारंपरिक ज्ञान परंपरा समाज के विभिन्न वर्गों में फैली हुई है। ज्ञान आयोग ने भी इसे स्वीकार किया है। इस पारंपरिक ज्ञान को संकलित करने की दृष्टि से व्यापक शोध की आवश्यकता है। शोध के क्षेत्र में प्रयुक्त कई अंग्रेजी शब्द वास्तविक अर्थों को उसी रूप में व्यक्त नहीं करते, जिस रूप में वे भारतीय चिंतन और परिवेश में प्रयुक्त किए जाते हैं, उदाहरणार्थ—अंग्रेजी में प्रयुक्त 'रिलीजन', न तो अपने समाज में प्रयुक्त 'धर्म' शब्द के भाव को व्यक्त करता, और न ही 'सेक्युलर' का अनुवाद 'धर्मनिरपेक्ष'। शोध कार्य में हमें भारतीय संकल्पनात्मक शब्दों को उनके अंग्रेजी अनुवाद और अर्थ से मुक्त रख, उनके मूल अर्थ और भाव के रक्षण के प्रति सचेत रहना होगा।

शोध कार्य के विकास में सरकार, उद्योग जगत और अन्य संस्थाओं की भी भूमिका है। शोध के प्रति सरकार की नीति राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 में स्पष्ट दिखाई देती है। इसमें ज्ञान के सृजन और अनुसंधान को राष्ट्रीय विकास का आधार माना है। हायर सेकेंड्री विद्यालयों में 'अटल टिंकरिंग लैब' की स्थापना के अच्छे परिणाम आ रहे हैं। नई शिक्षा नीति में स्नातक स्तर पर चार वर्षीय कोर्स में शोध सहित डिग्री देने की योजना निश्चित रूप से शोध भावना/संस्कृति विकसित होगी। राष्ट्रीय अनुसंधान फाउंडेशन की स्थापना का सुझाव और केंद्रीय शिक्षा मंत्रालय द्वारा शोध हेतु अगले पाँच वर्ष के लिए पचास हजार करोड़ रुपये की वित्तीय सहायता की व्यवस्था निश्चित रूप से स्वागत योग्य है।

ज्ञान को प्रत्येक युग में सम्मान मिला है। वैश्वीकरण के युग में ज्ञान विकास और वर्चस्व का शस्त्र है। प्रसिद्ध वैज्ञानिक रघुनाथ माशेलकर के अनुसार, "ज्ञान नामक नए ताप नाभिकीय हथियारों से, ज्ञान बाजार में भविष्य का युद्ध लड़ा जाएगा।" यह ज्ञान शोध से ही मिलेगा। आज आवश्यकता ऐसे शोध की है जो हमें अपनी दृष्टि और अपनी सोच दे सके तथा पश्चिम के घेरे से निकलकर स्वतंत्र चिंतन के गौरव को स्थापित कर सके।

(प्रो. गोविंद प्रसाद शर्मा)

प्रधान संपादक, **पुस्तक संस्कृति**

रिपोर्ट

विश्व का सबसे बड़ा वर्चुअल पुस्तक महाकुंभ

थीम : राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020

उद्‌घाटन

"भले ही हम दूर-दूर हैं, इस बार पुस्तक मेला वर्चुअल है, लेकिन प्रगति मैदान में लगने वाले वार्षिक पुस्तक महाकुंभ की तरह ही आप इस बार

भी हिस्सा ले रहे हैं। इस आयोजन की प्रतीक्षा हम सभी को हर सर्दियों में रहती है। हालाँकि इस बार इसकी प्रतीक्षा थोड़ी लंबी करनी पड़ी, जिसका कारण कोरोना काल की अव्यवस्था रही। इसके बावजूद राष्ट्रीय पुस्तक न्यास का प्रयास सराहनीय है। न्यास पुस्तक संस्कृति को बढ़ावा देने के अपने लक्ष्य के प्रति तत्पर है व उसी वैभव के साथ इस मेले का वर्चुअल आयोजन कर रहा है।" ये उद्‌गार विश्व पुस्तक मेला के वर्चुअल संस्करण के औपचारिक शुभारंभ के दौरान माननीय शिक्षा मंत्री डॉ. रमेश पोखरियाल 'निशंक' ने व्यक्त किए। उन्होंने देश के समस्त साहित्यकारों, कलाकारों, प्रकाशकों, पुस्तक-प्रेमियों व पूरे न्यास परिवार का स्वागत और अभिनंदन किया।

व्यक्ति निर्माण, चरित्र निर्माण, राष्ट्र निर्माण

श्री निशंक ने पुस्तक संस्कृति के माध्यम से देश के लोगों का चरित्र निर्माण में योगदान देने के लिए राष्ट्रीय पुस्तक न्यास को बधाई दी। साथ ही, कोरोना काल के दौरान न्यास द्वारा प्रकाशित कोरोना से संबंधित सात पुस्तकों का उल्लेख भी किया। उन्होंने पुस्तकों की महत्ता पर प्रकाश डालते हुए कहा कि किस तरह जब रवींद्रनाथ टैगोर को 1913 में उनके साहित्य के लिए नोबेल पुरस्कार प्रदान किया गया तो उनकी कृति को विश्वभर ने पढ़ा। 1893 में स्वामी विवेकानंद ने शिकागो में ऐतिहासिक भाषण दिया और उसे किताबों ने संजोकर रखा, जिसके पथ-प्रदर्शन से कई व्यक्तित्व निर्माण हुए। यह पुस्तक संस्कृति ही आपको अद्‌भुत बनाती है। उन्होंने प्रधानमंत्री के कथन पर ध्यानाकर्षित किया—"जो रीड करता है, वही लीड करता है।"

श्री निशंक ने इस बात पर खुशी ज़ाहिर की कि राष्ट्रीय पुस्तक न्यास ने इस बार के पुस्तक मेले का केंद्रीय विषय—'राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020' रखा है। यह नीति भविष्य में नई उम्मीदें साथ लेकर आई है। नई शिक्षा नीति मानव को महामानव बनाएगी। यह देश इस संस्कृति के कारण ही विश्वगुरु के रूप में जाना जाता है।

शिक्षा मंत्री ने राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 की महत्ता को उक्त बिंदुओं के माध्यम से बताते हुए कहा कि यह नीति "लोकल तक पहुँचती है और उसे ग्लोबल तक पहुँचाती है।" डॉ. पोखरियाल ने यह उम्मीद भी जताई कि भारत के पौराणिक ग्रंथों; जैसे आयुर्वेद पर भारतवर्ष के विद्वानों के काम, सुश्रुत के ग्रंथों को प्रकाशन के माध्यम

से आगे लाएगा। इसी तरह 'चरक संहिता' को विभिन्न भाषाओं में प्रचार-प्रसार की आवश्यकता है। दुनिया के तमाम देशों ने इस तरफ रुचि दिखाई है। इसके अलावा ऋषि कणाद के अणुओं के ज्ञान को भी प्रसारित किया जाना चाहिए। पुस्तकों का प्रकाशन इसमें बेहतर भूमिका निभा सकता है। भारत के पौराणिक ज्ञान से विश्वभर के लोग प्रभावित रहे हैं। उन्होंने देशभर के लेखकों से अपील की है कि न्यास के नेतृत्व में लेखकगण हमारी प्राचीन संपदा को नवाचार के साथ आगे बढ़ाएँ।

हम टैलेंट को ढूँढेंगे, उत्कृष्ट कंटेंट का निर्माण करेंगे, उसका विस्तार और उसको पेटेंट करेंगे। उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि यंग इंडिया को विजन और मिशन की आवश्यकता है।

Nation First, Character Must

राष्ट्रीय शिक्षा नीति के माध्यम से भारतीय भाषाओं को और सशक्त बनाने की आवश्यकता है। जैसा कि प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी का सपना है—'21वीं सदी का स्वर्णिम भारत हो!' आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस को साथ लेकर चलने वाली यह नीति विद्यार्थियों को खुला अवसर प्रदान करेगी कि वे अपने पसंदीदा विषयों का चयन किसी भी विषय क्षेत्र के साथ कर सकें।

इस अवसर पर राष्ट्रीय पुस्तक न्यास के अध्यक्ष प्रो. गोविंद प्रसाद शर्मा ने शिक्षा मंत्री, न्यास परिवार, प्रकाशक, पुस्तक विक्रेता,

पुस्तक-प्रेमियों व पत्रकारों का आभार व्यक्त किया। उन्होंने कहा कि संस्था का उद्देश्य प्रकाशन के माध्यम से पुस्तकों का वितरण व खरीद-फरोख्त मात्र ही नहीं, बल्कि पुस्तक संस्कृति को विकसित करना भी है। उन्होंने कहा कि वे कल्पना करते हैं कि, 'यदि पुस्तकें नहीं होतीं, छपाई नहीं होती और पाठकों के हाथ में पुस्तकें नहीं होतीं तो विश्व का स्वरूप कैसा होता?' विचारों को तेजी से विश्वभर में फैलाने का श्रेय पुस्तकों को जाता है। पुस्तकों ने पाठकों को संस्कारित जीवन दिया है।

इस दौरान संस्था के निदेशक श्री युवराज मलिक ने मुख्य अतिथि डॉ. रमेश पोखरियाल 'निशंक' का स्वागत किया और उनका

आभार जताया। उन्होंने कहा कि राष्ट्रीय पुस्तक न्यास वर्ष 1957 से अनवरत पुस्तक संस्कृति को बढ़ावा देने में योगदान कर रहा है। भारत का 'नॉलेज पार्टनर' होने पर हमें गर्व है।

कार्यक्रम का संचालन न्यास के वरिष्ठ संपादक कुमार विक्रम ने किया। इस दौरान उन्होंने राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 विषय के अंतर्गत प्रकाशित 17 द्विभाषी पुस्तकों की औपचारिक घोषणा की।

सत्रह द्विभाषी पुस्तकों का लोकार्पण

नई दिल्ली विश्व पुस्तक मेला-2021 के उद्घाटन समारोह में माननीय शिक्षा मंत्री डॉ. रमेश पोखरियाल 'निशंक' द्वारा राष्ट्रीय पुस्तक न्यास की 17 द्विभाषी पुस्तकों का विमोचन किया गया। इन पुस्तकों को

राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 के अनुरूप तैयार किया गया है। माननीय मंत्रीजी ने कहा कि न्यास ने द्विभाषी पुस्तकों के रूप में जो कदम बढ़ाया है, दुनियाभर में इस तरह की पुस्तकों की माँग है। कार्यक्रम में न्यास के निदेशक श्री युवराज मलिक ने कहा कि न्यास पहला ऐसा संस्थान है, जो एनईपी के अनुरूप पठन-सामग्री लेकर आया है। न्यास के अध्यक्ष प्रो. गोविंद प्रसाद शर्मा ने कहा कि इन पुस्तकों की सामग्री वैज्ञानिक सोच विकसित करती है। विद्यार्थी अपनी मातृभाषा के अंतर्गत प्रारंभिक शिक्षा लें, एनईपी 2020 के इस लक्ष्य को ध्यान में रखते हुए हम द्विभाषी पुस्तकें लेकर आए हैं। हमारे इस प्रयास से अवश्य ही दुनियाभर में द्विभाषी पुस्तकों की माँग बढ़ेगी। हिंदी-अंग्रेजी में प्रकाशित इन बाल पुस्तकों में चंदा गिनती भूल गया, क्यों, पक्की दोस्ती, भक्त सालबेगा, फू-कू, मुझे दुनिया पसंद है, एक दिन, रूपा हाथी, फूल और मधुमक्खी, पेड़ क्या है आदि शामिल हैं।

पहला दिन

सीईओ स्पीक

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत व भारतीय वाणिज्यिक एवं उद्योग महासंघ (फिक्की) के संयुक्त तत्वावधान में 'सीईओ स्पीक' कार्यक्रम आयोजित किया गया। इस कार्यक्रम का मुख्य विषय 'नई शिक्षा नीति-2020 के परिप्रेक्ष्य में प्रकाशकों के लिए चुनौतियाँ एवं अवसर' था। इस वर्चुअल प्लेटफॉर्म पर देश-विदेश के विभिन्न प्रकाशन प्रमुखों ने हिस्सा लिया। कार्यक्रम दो सत्रों में संपन्न हुआ। पहले सत्र में फिक्की पब्लिशिंग कमेटी के अध्यक्ष श्री रत्नेश झा ने कहा कि कोरोना काल ने प्रकाशन उद्योग को बहुत प्रभावित किया है। नई शिक्षा नीति के आने के बाद से प्रकाशन उद्योग में लगभग 20 प्रतिशत वार्षिक वृद्धि हुई है। हमारी यह जिम्मेदारी है कि इस नीति के लिए

सहयोगात्मक रवैया अपनाएँ। कार्यक्रम की अध्यक्षता करते हुए राष्ट्रीय पुस्तक न्यास के अध्यक्ष प्रो. गोविंद प्रसाद शर्मा ने कहा कि पुस्तकें शिक्षा का सबसे बड़ा माध्यम हैं। शिक्षा के संप्रेषण के लिए पुस्तकों की आवश्यकता है और इस महती कार्य में अहम भूमिका प्रकाशक निभाते हैं। शिक्षा नीति के दो पक्ष हैं—वैचारिक व

व्यावहारिक पक्ष। वैचारिक दृष्टि से इसका उद्देश्य एक अच्छे इनसान का विकास करना है। सोच की दृष्टि पर नीति कहती है कि इससे नैतिक मूल्य विकसित होंगे। नीति का उद्देश्य भारत को ज्ञानवान समाज बनाना है, ज्ञान को विकसित करना है। शिक्षा नवाचार लाती है। व्यावहारिक पक्ष यह है कि शिक्षा नीति में संरचनात्मक परिवर्तन हुआ है। पहले औपचारिक शिक्षा कक्षा एक से शुरू होती है, लेकिन अब परिवर्तन यह आया है कि स्कूल पूर्व शिक्षा को इसमें जोड़ दिया गया है।

न्यास के निदेशक श्री युवराज मलिक ने कहा कि यह शिक्षा नीति लगभग चार दशकों के बाद आई है। इस दौरान वैश्विक, निजीकरण, सामाजिक-आर्थिक सुधार हुए, लेकिन सबसे महत्वपूर्ण सुधार शैक्षिक सुधार है जो कि इस शिक्षा नीति से हुआ है। यह नीति सभी हितधारकों—शिक्षक, प्रकाशक, कंटेंट लेखकों को एक साथ लाई है। यह हमारे आने वाले समय के लिए विजन दस्तावेज है। हम इसे कार्यान्वित कैसे करें? हम राष्ट्र निर्माण की संस्था हैं। इस उद्योग से जुड़ने वाले हर व्यक्ति को समझना चाहिए कि वे उत्पाद नहीं बना रहे हैं, बल्कि वे राष्ट्र निर्माण कर रहे हैं। हमें इनसान बनाने का प्रयास करना चाहिए, जो राष्ट्र निर्माण में सहायक हो। उन्होंने इस नीति के माध्यम से शिक्षा के वैश्वीकरण, वैश्विक प्रभाव, द्विभाषी किताबों आदि प्रमुख बिंदुओं पर ध्यान आकृष्ट किया।

दूसरे सत्र में नई शिक्षा नीति के कार्यान्वयन पर परिचर्चा का आयोजन किया गया, जिसमें अमर चित्र कथा मीडिया की अध्यक्ष सुश्री प्रीति व्यास ने कहा कि यह नीति प्रकाशन उद्योग के लिए एक उपहार है। यह शिक्षण पर ध्यान केंद्रित करती है। यह तथ्यों को याद करने पर नहीं, बल्कि उन्हें अपने जीवन में अपनाने की बात करती है। एड-टेक दो लीडर की वक्ता व सलाहकार सुश्री कार्ला एट्र्स ने कहा कि यह नीति सीखने पर ध्यान केंद्रित करती है। यह शिक्षार्थी और प्रकाशक दोनों को सशक्तीकरण प्रदान करेगी। इसमें प्रकाशन उद्योग बड़ी भूमिका निभाएगा। ओरेहम ग्रुप, अमेरिका की प्रबंधन सलाहकार सुश्री एमा हाउस ने कहा कि यह एकदम नई और प्रेरणात्मक नीति है। मेरा मानना यह है कि यह एक विश्वस्तरीय नीति है। यह प्रकाशकों के लिए एक अवसर लेकर आई है। रत्नासागर प्रकाशन की सुश्री अतिया जैदी ने कहा कि स्कूली शिक्षा के चार मुख्य बिंदु हैं—समग्र, एकीकृत, सुखद, आकर्षक। नई शिक्षा नीति के आने से हमें स्कूल पूर्व के लिए प्रशिक्षित शिक्षकों की आवश्यकता होगी, जिनकी बुनियादी स्तर पर बड़ी जिम्मेदारी होगी। कार्यक्रम का संचालन फिक्की पब्लिशिंग कमेटी के सह अध्यक्ष श्री नीरज जैन ने किया। कार्यक्रम के समापन में न्यास के संपादक श्री कुमार विक्रम ने सभी प्रतिभागियों को धन्यवाद ज्ञापित किया।

किताबों में आजादी का वह दौर

विश्व पुस्तक मेले में 'पढ़ने का आनंद : स्वतंत्रता आंदोलन में उर्दू काव्य पर केंद्रित, साहित्यिक विनोद एवं व्यंग्य' विषय पर कार्यक्रम में

मशहूर पटकथा लेखक प्रो. दानिश इकबाल ने कहा कि आजादी से पहले जिन किताबों को छापा नहीं जा सका और आजादी मिलने के बाद वे प्रकाशित हुईं, अगर गहराई से देखा जाए तो उनमें एक ख़्वाब मिलता है और वह ख़्वाब हिंदुस्तान को मजबूत व बेहतर मुल्क बनाने का है। इस अवसर पर अभिनेता, निर्देशक व क्रिकेटर अभिनव चतुर्वेदी ने बचपन के दिनों को याद किया कि पहले घरों में पढ़ने के लिए बहुत किताबें हुआ करती थीं। यह भी सच है कि अच्छा लिखने के लिए अच्छा सुनना-पढ़ना बहुत जरूरी है। किताबें पढ़कर लोग प्रेरणा लेते हैं, खासकर पुरानी किताबों में बहुत-सी ऐसी बातें होती हैं, जिन्हें हम जीवन में अपनाना चाहते हैं।

शिक्षाविद् कौसल इस्माइल साहिबा ने कहा कि बचपन में कविताओं, गीतों, अल्फाजों के जरिए हमने पढ़ना सीखा और इससे देशप्रेम की प्रेरणा लेते गए। कार्यक्रम का संचालन प्रो. दानिश इकबाल ने किया।

गीतों भरी महफिल का आयोजन

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास द्वारा आयोजित 'कविता, गीत एवं दोहों का गान' कार्यक्रम का संचालन करते हुए हास्य कवि व व्यंग्यकार महेंद्र

शर्मा ने कहा, "आज पूरा विश्व चिंताओं में डूबा हुआ है, लेकिन चिंता करने से जीवन नहीं थमता, क्योंकि कविताओं, गजलों, गीतों के माध्यम से जीवन की सच्चाई हमारे सामने है, हम न रुके हैं और न रुकेंगे।" कवि दीपक सरीन ने वसंत के मौसम पर प्रेम की कई गजलें प्रस्तुत कीं। कवयित्री ममता किरण ने अपनी कविताओं, गजलों, गीतों के माध्यम से समाज के बदलते परिप्रेक्ष्य, तकनीकी युग में बच्चे, युवा आदि के व्यवहार में आए परिवर्तन, बेटे के लिए तड़पती माँ का दुख, परिवार में आए अलगाव के कारणों आदि विषयों पर प्रकाश डाला। प्रसिद्ध गीतकार, गजलकार, कवि लक्ष्मी शंकर वाजपेयी ने महामारी के कठिन समय में अपनी कविताओं के माध्यम से लोगों में उत्साह व जोश भरने का कार्य किया।

द्विभाषी पुस्तकों का वैश्विक दृष्टिकोण

राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 के अनुरूप प्राथमिक स्तर पर मातृभाषा में शिक्षा देने के लिए द्विभाषी पुस्तकों की भूमिका पर एक परिचर्चा का

आयोजन किया गया। इस वेबिनार में विदेशी मेहमानों को भी जोड़ा गया, जिनमें कैरो, मिस्र से साहित्यिक अनुवादक सुश्री फातिमा एच. अब्बास और प्रसिद्ध लेखक और बहुभाषी अनुवादक लॉरेंस शीमेल भी कार्यक्रम में शामिल थे। न्यास के निदेशक श्री युवराज मलिक ने कहा कि भारत में 22 मान्यता प्राप्त भाषाएँ हैं, लेकिन विशेष बात यह है कि बच्चों को किस भाषा में शिक्षा मिले। जब एक बच्चा अपने माता-पिता से किसी विषय के बारे में पूछता है तो उसे जन्म से सुनी जाने वाली भाषा में समझाना ज्यादा प्रभावशाली होगा। यही भाषा की ताकत है और किसी भी भाषा पर किसी एक का अधिकार नहीं है, वह वैश्विक होती है। फातिमा एच. अब्बास ने नई दिल्ली विश्व पुस्तक मेले को दुनिया के लिए खास बताया। उन्होंने कहा कि बच्चों के लिए द्विभाषी पुस्तकें जरूरी हैं। अगर बच्चा किसी भाषा विशेष में सहज नहीं है, तो वह विषयों को अपनी मातृभाषा में सीख सकता है। वे किस भाषा में पढ़ व सीख रहे हैं, यह अहम नहीं है, बल्कि अहम यह है कि उसे विषय अच्छे से समझ में आए।

परिचर्चा में लॉरेंस शीमेल ने राष्ट्रीय पुस्तक न्यास को द्विभाषी पुस्तकों की शृंखला के लिए बधाई दी। उन्होंने कहा कि दो या तीन या बहुभाषाओं की पुस्तकें तैयार करना बेहद चुनौतीपूर्ण कार्य है। डच-अरेबिक, डच-तुर्किश, जर्मन-स्पेनिश, हिंदी-अंग्रेजी—द्विभाषी पुस्तकों में हर भाषा के लिए अलग-अलग रंगों का उपयोग करना, चित्र इस तरह के बनाना जो दोनों भाषाओं की सभ्यता, संस्कृति के अनुकूल हों, भाषा के अनुसार शीर्षक देना और सबसे महत्वपूर्ण—विषय का भाव समान रखना बहुत जरूरी है। न्यास की मुख्य संपादक और संयुक्त निदेशक श्रीमती नीरा जैन ने दोनों विदेशी मेहमानों की बातों, सुझावों के प्रति सहमति व्यक्त करते हुए कहा कि हम आगे भी इसी तरह के प्रयास जारी रखेंगे। कार्यक्रम की अध्यक्षता न्यास के अध्यक्ष प्रो. गोविंद प्रसाद शर्मा ने की। उन्होंने विश्वास दिलाया कि परिचर्चा में जो नए बिंदु, सुझाव मिले हैं, उन्हें भविष्य में व्यवहार में लाया जाएगा। संचालन न्यास के संपादक कुमार विक्रम ने किया।

विज्ञान को प्रकृति से समझना

बच्चों के मन में विज्ञान से जुड़े बहुत से सवाल उठते हैं, उनकी जिज्ञासु प्रवृत्ति के चलते राष्ट्रीय पुस्तक न्यास के राष्ट्रीय बाल साहित्य केंद्र की संपादक कंचन वांचु शर्मा ने दिल्ली विश्वविद्यालय के वनस्पति विज्ञान

की सेवानिवृत्त सह-प्राध्यापिका डॉ. गीता माथुर से बात की। डॉ. गीता ने विज्ञान में प्रकृति की क्या भूमिका है और जो हमारे आस-पास हो रहा है, उसे प्रकृति के माध्यम से किस तरह समझा जा सकता है? बहुत से विद्यार्थी या बच्चे विज्ञान के नाम से ही डरते हैं, तो क्या हम विज्ञान को एक अलग नजरिए से देख सकते हैं, जिससे हमारा डर निकल जाए?, जैसे सभी सवालों के जवाब दिए। उन्होंने विज्ञान को प्रकृति के जरिए मजेदार ढंग से सीखने पर जोर दिया।

यूनेस्को के दक्षिण एशिया प्रमुख से परिचर्चा

राष्ट्रीय शिक्षा नीति और दक्षिण एशिया में शिक्षा की स्थिति पर यूनेस्को के दक्षिण एशिया प्रमुख श्री एरिक फाल्ट के साथ न्यास के

निदेशक श्री युवराज मलिक की परिचर्चा हुई जिसमें श्री मलिक ने कहा कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 ने मूलभूत सुधार किए हैं। यह समकालीन है और आने वाली पीढ़ियों के लिए न केवल भारत, बल्कि विश्व के लिए भी रोडमैप तैयार करेगी। यह विश्व स्तर पर मानव संसाधन विकसित करेगी। नीति का सिद्धांत यह है कि वैश्विक स्तर पर मूल्यों को भारतीय आधार देना है। हमें पाँच मूलभूत बिंदुओं पर ध्यान आकर्षित करना है—गुणवत्ता, समानता, पहुँच, सामर्थ्य, जवाबदेही। इस नीति में सीखने पर ध्यान केंद्रित किया गया है। इस बात को ध्यान में रखते हुए पाठ्यक्रम को 5+3+3+4 में विभाजित किया गया है। एरिक फाल्ट ने कहा कि यह नीति बहुत अच्छी, विकासशील, वैज्ञानिक और प्रमाणित नीति है। इस नीति में तीन बिंदु खास हैं—लिंग समानता, आंचलिक भाषा में शिक्षा और उच्च शिक्षा का अंतरराष्ट्रीयकरण। यह निश्चित रूप से भारत को वैश्विक स्थान प्रदान करेगी। इससे एक महत्वाकांक्षी रोडमैप तैयार होगा। कार्यक्रम का संचालन न्यास के संपादक श्री कुमार विक्रम ने किया।

पढ़ने का आनंद : स्वतंत्रता आंदोलन में उर्दू काव्य पर केंद्रित, साहित्यिक विनोद एवं व्यंग्य

कार्यक्रम को देश के विभिन्न शिक्षण संस्थानों में देखा गया। ऐसा ही एक चित्र बिहार के जहानाबाद में स्थित कायनात इंटरनेशनल स्कूल से प्राप्त हुआ है जहाँ लगभग 2000 बच्चों ने अपनी कक्षाओं में बड़ी स्क्रीन पर इस कार्यक्रम का आनंद लिया।

दूसरा दिन

राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 और भारतीय ज्ञान परंपरा

'राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 और भारतीय ज्ञान परंपरा' पर आयोजित परिचर्चा में प्रो. ओऽम् प्रकाश पाण्डेय व शिक्षाविद् डॉ. संजीव राय ने भाग लिया। डॉ. राय ने कहा कि हमारे परिवेश की भाषा हमारे ज्ञान

को समृद्ध करती है। चूँकि भाषा सांस्कृतिक उत्पाद है इसलिए इसके माध्यम से हम अपनी परंपराओं व पुरातन मूल्यों से जुड़ते हैं। शिक्षा हमें बड़ा विस्तार देती है। इसलिए प्राथमिक शिक्षा का आधार मातृभाषा में होना चाहिए, साथ ही अन्य भाषाओं को सीखने का विकल्प भी खुला रहना चाहिए। परंपरा से रिश्ता भी रहना चाहिए और आधुनिकता पर दृष्टि भी होनी चाहिए। तकनीकी शिक्षा के बदलते भारतीय मूल्य के एक प्रश्न के जवाब में डॉ. राय ने कहा कि व्यावसायिक शिक्षा के संदर्भ में सबसे बड़ी चुनौती है तकनीकी। इसके लिए माँग के अनुसार एक खाका तैयार करना होगा क्योंकि हमें ज्ञान मीमांशा और व्यापार में भी दक्ष लोग चाहिए। दूसरा यह कि हमें डिग्री के साथ-साथ पुनर्कौशल की आवश्यकता है। इसके अलावा हमें व्यावसायिक शिक्षा पर बहुत काम करना पड़ेगा।

प्रो. पाण्डेय ने कहा कि हमारे यहाँ तकनीकी ज्ञान पुरातन है। हम पर्यावरण अनुकूल कृषि करते थे। हमारी आधुनिक शिक्षा यूरोपीय ज्ञान परंपरा को विकसित कर रही है जो हमारी वैज्ञानिक परंपरा को दरकिनार कर रही है। हमारा देश उद्योग प्रधान था। हमारी पुरातन शिक्षा व्यवस्था आपको प्रतिष्ठापित करती थी। आधुनिक शिक्षा व्यवस्था ने आपको विस्थापित कर दिया है जो कि संस्कार विहीन करती है। आज की शिक्षा व्यवस्था में यांत्रिक प्राणियों का विकास हो रहा है। इसे बदलना पड़ेगा जिसका प्रयास नई शिक्षा नीति में किया गया है। भारतीय ज्ञान परंपरा और वैश्विक ज्ञान परंपरा में नई शिक्षा नीति के सामंजस्य के एक प्रश्न पर प्रो. पाण्डेय ने कहा कि मैकॉले ने जो शिक्षा नीति बनाई, उसने पूरे देश का कायाकल्प कर दिया। शिक्षा नीति एक प्रदर्शक है जिसके लिए हमें अपनी संकल्पना स्पष्ट करनी होगी। नई शिक्षा नीति में शोध पर जोर दिया गया है। मातृभाषा में शिक्षा देने की नीति बनाई गई है।

कार्यक्रम के अंत में अपनी पुस्तक 'भारत वैभव' पर चर्चा करते हुए प्रो. पाण्डेय ने कहा कि इस पुस्तक में भारत की ज्ञान परंपरा को 16 अध्यायों में जोड़ा गया है, जिसमें भाषा का विस्तार, विज्ञान, दर्शन, कृषि, अर्थशास्त्र, पर्यावरण संचेतना, आयुर्वेद, गणित, राजनीति, कला और साहित्य जैसे विषयों पर विस्तृत जानकारी दी गई है। कार्यक्रम का संचालन न्यास के हिंदी भाषा के संपादक श्री पंकज चतुर्वेदी ने किया।

संस्कृत हमारी भाषाओं की दादीमाँ

संस्कृत को बढ़ावा देने के लिए न्यास की ओर से 'संस्कृत हमारी भाषाओं की दादीमाँ' विषय पर आयोजित संगोष्ठी में आकाशवाणी

के संस्कृत समाचार अनुवादक व उद्घोषक डॉ. बलदेवानंद सागर ने संस्कृत की महत्ता पर जोर देते हुए कहा कि संस्कृत में वह सब उपादान सामग्री है, जो किसी भाषा या बोली को विकसित होने के लिए चाहिए। यह ध्वनि-विज्ञान है यानी शब्दों को कैसे बोला जाए, यह संस्कृत से सीखा जा सकता है। यह सभी भाषाओं की आत्मा है, तत्व है, सत्व है, पहचान है। यदि हम इस भाषा को सीखना चाहें, तो केवल अभ्यास की जरूरत होगी। संस्कृत विद्वान श्री संपदानंद मिश्र ने संस्कृत के संबंध में दुनियाभर में फैले मिथ्या प्रचार के बारे में बताया कि अधिकतर लोग यह पूछते हैं कि वे संस्कृत क्यों सीखें, जबकि अब इसका कोई उपयोग नहीं है? दूसरा, वे मानते हैं कि यह बहुत कठिन भाषा है। तीसरा, वे इसे 'हिंदुओं की भाषा' कहते हैं। लेकिन ऐसा कहना गलत है। आज भी संस्कृत का बहुत उपयोग किया जाता है। यदि मातृभाषा के समान इसे भी हम अपने व्यवहार व स्वभाव में लाएँ, तो यह सबसे सरल भाषा है। संस्कृत में केवल 10 से 15 प्रतिशत सामग्री ऐसी है, जिसमें पाठ-अध्यात्म आदि की बातें हैं, अन्यथा 85 प्रतिशत से अधिक संस्कृत में विज्ञान, भूगोल, प्रकृति, गणित आदि विषयों पर लिखा गया है। अतः यह सार्वभौमिक भाषा है, जिसका प्रचार-प्रसार अब विदेशों में भी तेजी से हो रहा है। प्रख्यात लेखक व चिकित्सा विज्ञानी डॉ. रमेश बिजलानी ने इस बात पर जोर दिया कि यदि हमें अपनी आध्यात्मिक प्रवृत्ति को बचाए रखना है, तो संस्कृत को व्यवहार में लाना बहुत जरूरी है। मधुर व शिष्ट होने के कारण संस्कृत से ही हर भाषा को बोलने में परिशुद्धता व स्पष्टता आती है। संगोष्ठी का संचालन न्यास के गुजराती संपादक श्री भाग्येंद्र बहादुरभाई पटेल ने किया।

मातृभाषा में पढ़ने का आनंद

'मातृभाषा की भूमिका और बच्चों के लिए पठन-पाठन को आनंददायक कैसे बनाया जाए', इस पर आयोजित परिचर्चा में अटल बिहारी वाजपेयी हिंदी विश्वविद्यालय के कुलपति श्री रामदेव भारद्वाज ने कहा कि नई शिक्षा नीति के अंतर्गत लक्ष्य रखा गया है कि बच्चों में उनके घर, परिवार और विद्यालय के सहयोग से मातृभाषा के प्रति एक विशेष अनुराग पैदा हो। जब हम या कोई बच्चा अपनी मातृभाषा में किसी विषय पर बोलता है तो उसके मस्तिष्क पर किसी विशेष प्रकार का दबाव नहीं होता।

कार्यक्रम में राष्ट्रीय पुस्तक न्यास द्वारा प्रकाशित प्रख्यात लेखक एवं शिक्षाविद् प्रेमपाल शर्मा की पुस्तक 'प्लेजर्स ऑफ रीडिंग' का भी विमोचन किया गया। लेखक ने बताया कि उनकी इस पुस्तक का मूल

उद्देश्य यही है कि शिक्षा में भाषा की भूमिका और बच्चों के लिए पठन को किस तरह रोमांचक बनाया जाए। दुनियाभर के देश बार-बार यह कह रहे हैं कि जो बच्चे अपनी भाषा में पढ़ते हैं, उनमें रचनात्मकता अधिक होती है। मनोविज्ञानी श्रीमती गीतांजलि कुमार ने कहा कि जो शब्दावली बच्चा अपने माता-पिता या अभिभावकों के साथ उठते-बैठते समय संयोजित करता है, उन्हीं शब्दों या भाषा में वह अपने उद्गारों व भावनाओं को व्यक्त करने के लिए सक्षम बनता है। एनसीईआरटी की प्राध्यापिका डॉ. उषा शर्मा ने कहा कि जब बच्चे मातृभाषा में किसी विषय को पढ़ते हैं तो उन्हें किसी प्रकार का संघर्ष नहीं करना पड़ता। यहाँ तक कि मातृभाषा में पढ़ने या बात करने का जो आनंद है, वह अन्य भाषा या बोली में नहीं आता। शिक्षाविद् श्रीमती मृदुल सिंह ने अपना अनुभव साझा किया कि जब हम बच्चों को आम बोलचाल की भाषा में सिखाते हैं तो वे ज्यादा अच्छी तरह से सीखते हैं। हम बच्चों पर किसी भाषा को थोप नहीं सकते। दूसरी भाषा तो जरूरत पड़ने पर हम कभी भी सीख सकते हैं।

मातृभाषा में ब्रेल पुस्तकें और दृष्टिबाधितों का काव्य संसार

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत एवं ऑल इंडिया कन्फेडरेशन ऑफ द ब्लाइंड (एआईसीबी) के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित साहित्यिक कार्यक्रम दो सत्रों में विभाजित था। पहले सत्र में नई दिल्ली विश्व

पुस्तक मेला-2021 के केंद्रीय विषय के अंतर्गत 'मातृभाषा में ब्रेल पुस्तकों की भूमिका व दिव्यांग विद्यार्थियों के लिए संभावनाएँ एवं चुनौतियाँ' पर एआईसीबी के महासचिव पद्मश्री श्री जे.एल. कौल ने कहा कि देश में आज ब्रेल पुस्तकों की कमी है। इसकी एक बड़ी समस्या यह है कि एनसीईआरटी की ब्रेल में मातृभाषा की कुछ पाठ्य पुस्तकें हैं, लेकिन वे विद्यार्थियों को उपलब्ध नहीं हो पाती हैं। न्यास द्वारा ब्रेल पुस्तकों के प्रकाशन क्षेत्र में एक बड़ी शुरुआत सन् 1998 में भारत सरकार के तत्कालीन उपराष्ट्रपति द्वारा की गई। उन्होंने अंग्रेजी एवं हिंदी सहित अन्य भारतीय भाषाओं में ब्रेल पुस्तकें प्रकाशित करने की यह जिम्मेदारी न्यास को दी। तब से लेकर वर्तमान समय तक न्यास की सभी भाषाओं की पुस्तकों का मुद्रण एआईसीबी द्वारा किया जा रहा है। ब्रेल में प्रकाशित इन पुस्तकों को न्यास के सहयोग से देशभर के नेत्रहीन स्कूलों, विश्वविद्यालयों एवं पुस्तकालयों में निशुल्क भेजा जा रहा है।

दूसरे सत्र में आमंत्रित सात दृष्टिबाधित विद्यार्थियों द्वारा 'देशप्रेम' विषय पर केंद्रित कविताओं का सुंदर एवं ओजपूर्ण पाठ किया गया। न्यास की ओर से सभी प्रतिभागियों को दो-दो ब्रेल पुस्तकें सम्मानस्वरूप भेंट की गईं। कार्यक्रम का संचालन संपादकीय विभाग की डॉ. कमलेश कुमारी द्वारा किया गया।

हिंदी नाटक और रंगमंच : यहाँ से कहाँ

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास द्वारा आयोजित संगोष्ठी 'हिंदी नाटक और रंगमंच : यहाँ से कहाँ' का संचालन आकाशवाणी केंद्र की नाट्य प्रमुख डॉ. काजल सूरी ने किया। प्रसिद्ध रंगकर्मी प्रताप सहगल के साथ नाटक निदेशक रवि तनेजा, मारवाह स्टूडियो के डीन सतीश आनंद और कथक केंद्र के निदेशक व संगीत नाटक अकादमी के उपसचिव सुमन कुमार मंच पर उपस्थित थे। रवि तनेजा के शब्दों में,

नाटक में मंच, लाइट, दर्शक और सबसे महत्वपूर्ण एक अच्छी स्क्रिप्ट का होना बहुत जरूरी है, लेकिन आज प्रताप सहगलजी जैसे मौलिक लेखन करने वाले लेखक बहुत कम हैं, जो आर्यभट्ट जैसे किरदारों को सामने लाते हैं। हमारे सामने चुनौती है कि हम नाटक के जरिए क्या दिखाने जा रहे हैं? पहले की तरह अब हमारे नाटक देखने वाले दर्शक हैं या नहीं? नाटक केवल खाली खाका है, उसमें रंग दर्शक ही भरते हैं। सुमन कुमार ने कहा कि कलाएँ लोकतंत्र का आईना हैं और रंगमंच को उसकी जीवंतता के कारण विशेष माना गया है। नाटक स्वीकृत किया गया प्रयोग होता है और एक विषय को बार-बार दिखाकर फिर भी वह नया ही रहता है। सतीश आनंद ने कहा कि रंगमंच की यात्रा अनंत है। डिजिटल युग में हमें रंगमंच में भी गति लानी होगी। आज वे दर्शक नहीं हैं, जो तीन घंटे का नाटक देखें, बल्कि उन्हें डेढ़ घंटे का नाटक भी बहुत लंबा लगता है। प्रताप सहगल ने इस बात का समर्थन किया और कहा कि यदि हमें अपनी कला को बचाए रखना है तो तकनीक से बचने की बजाय उसका उपयोग करना चाहिए।

पाँच बांग्ला पुस्तकों का विमोचन

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत द्वारा बांग्ला भाषा में प्रकाशित पाँच पुस्तकों का विमोचन किया गया। ये पुस्तकें थीं—बंकिम चंद्र चट्टोपाध्याय की 'आनंदमठ', शरतचंद्र चट्टोपाध्याय की 'पाथेर डाबी', अद्वैतमल बर्मन की 'तितास एकटि नदीर नाम', राममोहन राय

की 'राममोहन राय निर्बाचितोरचना समग्रह' और प्रो. सब्यसाची भट्टाचार्य की 'महात्मा ओ काबी'। ये पाँचों पुस्तकें भारत की स्वाधीनता से पूर्व बंगाल में देशप्रेम की भावना को प्रतिस्थापित करती हैं। श्री बर्मन की पुस्तक बंगाल में गंगा किनारे रहने वाले मछुआरों के जीवन संघर्ष का जीवंत दस्तावेज है। 'महात्मा ओ काबी' पुस्तक गुरुदेव टैगोर और महात्मा गांधी के बीच संवाद की बानगी है। विमोचित पुस्तकों पर डॉ. अनंतबंधु चट्टोपाध्याय, श्री अबीर मुखोपाध्याय, डॉ. बरीदबरन घोष, प्रो. पार्थसारथी भौमिक व डॉ. नवकुमार बासु ने पुस्तकों को लेकर परिचर्चा की। बांग्ला भाषा के संपादक श्री ब्रतिन डे ने कार्यक्रम का संचालन किया।

समकालीन हिंदी साहित्य पर विमर्श

हिमाचल कला संस्कृति एवं भाषा अकादमी द्वारा 'समकालीन हिंदी साहित्य' विषय पर कार्यक्रम में कथाकार सुदर्शन वशिष्ठ ने 'कहानी में कहानी की वापसी', कथाकार गीताश्री ने 'स्त्री लेखन', युवा

आलोचक डॉ. सुनीता ने 'समकालीन कहानियों के शिल्प', कथाकार चरण सिंह पथिक ने 'हिंदी साहित्य पर बनने वाली फिल्मों की लोकप्रियता', कवयित्री सुश्री ऊषा दसोरा ने 'कविता में शब्दों का आचरण', कवयित्री सुश्री सुलोचना ने 'समकालीन कविता में स्त्री की दखल और उसकी पहचान', कवयित्री रति सक्सेना ने 'कविता थेरेपी' पर चर्चा की। संचालन हिमाचल कला संस्कृति एवं भाषा अकादमी की चंद्रकांता ने किया।

तीसरा दिन

वैश्विक लेखन में महिलाएँ

अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस के अवसर पर गुजराती महिला लेखन के बीते हुए समय और आज के लेखन तथा भविष्य की संभावनाओं पर प्रकाश डाला गया। इस वेबिनार में अहमदाबाद की अग्रणी महिला साहित्यकार डॉ. उषा उपाध्याय, राजकोट से गजलकार व गीतकार

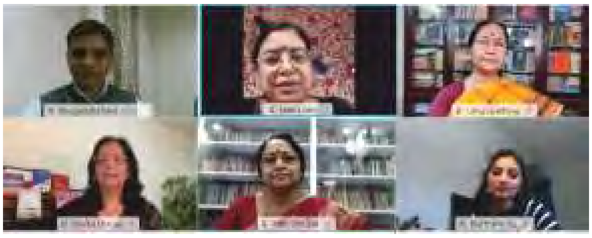

श्रीमती लक्ष्मी डोबरिया, न्यास की मुख्य संपादक व संयुक्त निदेशक श्रीमती नीरा जैन, न्यूजर्सी (अमेरिका) से युवा लेखिका सुश्री प्रार्थना जहा और टेक्सास (अमेरिका) से लेखिका एवं कवयित्री सुश्री देविका ध्रुव ने अपने विचार साझा किए। डॉ. उषा उपाध्याय ने बताया कि गुजराती महिला लेखन में पिछले वर्षों में बहुत उत्कृष्ट साहित्य लिखा गया है। यह परंपरा वर्तमान दौर में अविरत रूप से जारी है। आज इलेक्ट्रॉनिक माध्यम और सोशल नेटवर्क किसी वरदान से कम नहीं हैं। नवोदित लेखिकाओं में इन प्लेटफॉर्म का इस्तेमाल करने का भारी उत्साह देखा गया है, इसलिए लेखन में महिलाओं का भविष्य बहुत उज्ज्वल है।

श्रीमती लक्ष्मी डोबरिया ने वर्तमान में लिखे जा रहे गुजराती लेखन की विशेषताओं पर प्रकाश डाला। उन्होंने बताया कि बदलते दौर का असर अन्य क्षेत्रों की तरह महिला लेखन में भी देखा गया है। पहले महिलाएँ खुलकर अपने विचार व उद्गारों को समाज के सामने नहीं ला पाती थीं, लेकिन अब महिला सशक्तीकरण पर जोर दिया जा रहा है। देविका ध्रुव ने बताया कि गुजरात की नारियाँ विदेश में स्थायी होकर भी अपनी मातृभाषा में लेखन कर रही हैं और विदेशी माहौल में भी अपना गुजरातीपन बरकरार रखे हुए हैं। उन्होंने अपना लेखन न केवल कागज-कलम तक सीमित रखा है, बल्कि रेडियो और सोशल मीडिया में भी अपनी लेखनी का चमत्कार दिखाया है।

प्रार्थना जहा ने कहा कि वे इस बात को लेकर बेहद गंभीर व सजग हैं कि उनका लेखन हमेशा समाजोपयोगी बना रहे। वेबिनार के अंत में श्रीमती नीरा जैन ने कहा कि इन लेखिकाओं के प्रयास से न केवल गुजराती लेखन, बल्कि भारतीय लेखन समेत वैश्विक महिला लेखन को भी एक नई पहचान मिली है। आधुनिक समय में किसी भी सृजनात्मक क्षेत्र में महिलाएँ कहीं भी पीछे नहीं हैं। साहित्य लेखन में भी अनेक लेखिकाओं ने अपने उत्तम कार्यों से यह बात सिद्ध कर दी है। संचालन न्यास के गुजराती भाषा के संपादक श्री भाग्येंद्र बहादुरभाई पटेल ने किया।

कोविड-19 का प्रकाशन उद्योग पर असर

"मैं एक आशावादी व्यक्ति हूँ। प्रत्येक त्रासदी अपने साथ नए अवसर लेकर आती है। हमने भी कोरोना की चुनौती को अवसर में बदला है। पूर्ण लॉक डाउन में हमने पहले चार सप्ताह में कोरोना के मानसिक प्रभावों पर पुस्तकों की श्रृंखला का प्रकाशन किया। वैश्वीकरण,

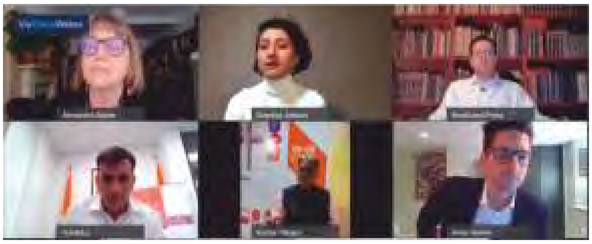

आर्थिक उदारीकरण, औद्योगीकरण, कंप्यूटरीकरण के बाद राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 का दस्तावेज क्रांतिकारी बदलाव का रास्ता दिखाता है।" उक्त उद्गार राष्ट्रीय पुस्तक न्यास के निदेशक श्री युवराज मलिक ने 'कोविड-19 के बाद प्रकाशन एवं पुस्तक मेले के प्रति नया दृष्टिकोण' विषय पर व्यक्त किए।

जॉर्जिया की गोआंसा जुआबा ने कहा कि महिला दिवस पर उम्मीद करती हूँ कि दुनिया भर में और अधिक महिलाएँ प्रकाशन उद्योग में भागीदार होंगी। कोरोना शुरू होने पर हमें पुस्तकें पाठक तक पहुँचाने में काफी मुश्किलों का सामना करना पड़ा। बुकलैंड प्रेस के जनरल मैनेजर रॉबर्ट मोरगेन ने कहा कि मार्च 2020 में कोविड-19 के आने के बाद का समय बहुत चुनौतीपूर्ण रहा है। इससे हमें प्रेरणा मिली है कि प्रकाशन के क्षेत्र में हम कैसे आगे बढ़ सकते हैं। एलेक्जेंड्रा बोशर ने कहा कि महामारी में हम मुद्रण से डिजिटलीकरण की ओर तेजी से प्रवृत्त हुए। हम वैचारिक हुए हैं और पुस्तकों के मामले में भारत की तरफ आशान्वित हैं। एंडी वेंट्रिस ने कहा कि कोविड के बाद प्रकाशन उद्योग को अब नए आयाम छूने होंगे क्योंकि हम इस महामारी में पाठकों तक पुस्तक पहुँचाने में असमर्थ रहे हैं। हमें पाठकों को यह महसूस कराना है कि वे प्रकाशन उद्योग का ही हिस्सा हैं। कार्यक्रम का संचालन न्यास के संपादक श्री कुमार विक्रम ने किया।

युवा लेखकों के लिए अध्ययन के नए प्रतिमान

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, आईटीएल पब्लिक स्कूल एवं एक्सप्रेशंस

इंडिया के संयुक्त तत्वावधान में युवा लेखकों पर केंद्रित कार्यक्रम 'अध्ययन के नए प्रतिमान' आयोजित किया गया। न्यास के संपादक श्री कुमार विक्रम मुख्य वक्ता रहे। कार्यक्रम का संचालन डॉ. जितेंद्र नागपाल व ऋतु शर्मा ने किया।

श्री विक्रम ने कहा कि इस समय युवा पाठकों व सामान्य पाठक की भी वैज्ञानिकता को समर्थित, तथ्याधारित, विवेचनात्मक पुस्तकों में रुचि है। ऐसी पुस्तकें जो भारतीय परंपरा को बढ़ावा देने वाली हों, पाठक उनमें रुचि दिखा रहे हैं। उन्होंने युवाओं के लेखन कार्य पर अपने विचार प्रकट करते हुए कहा कि रस्किन बॉन्ड, महादेवी वर्मा, एनी फ्रेंक जैसे लेखकों के लेखन को अल्पायु में ही प्रसिद्धि मिल गई थी।

'पसंदीदा पुस्तक' पर परिचर्चा में युवा लेखक हितेच्छा साहनी और संचिता दास ने सक्रिय सहभागिता दर्ज की। इस दौरान उन्होंने अपनी सबसे पसंदीदा पुस्तक की चर्चा करते हुए उसके कुछ प्रभावित करने वाले बिंदुओं पर अनुभव साझा किए।

सुश्री ऋतु शर्मा ने पुस्तकों को 'एक बाग, एक अच्छी मार्गदर्शिका' की संज्ञा दी। इस दौरान आईटीएल पब्लिक स्कूल की प्रधानाध्यापिका डॉ. सुधा आचार्य ने पुस्तकों की व्यक्ति के निजी जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका पर चर्चा की। इस अवसर पर मनोचिकित्सा सलाहकार डॉ. नागपाल ने व्यक्ति की मनोदशा में पुस्तकों की अनिवार्यता व उनके अनेक अनछुए पहलुओं पर अपने विचार प्रकट किए।

थीमेटिक पुस्तक प्रदर्शनियों की भूमिका

नई दिल्ली विश्व पुस्तक मेला 2021 की थीम 'राष्ट्रीय शिक्षा

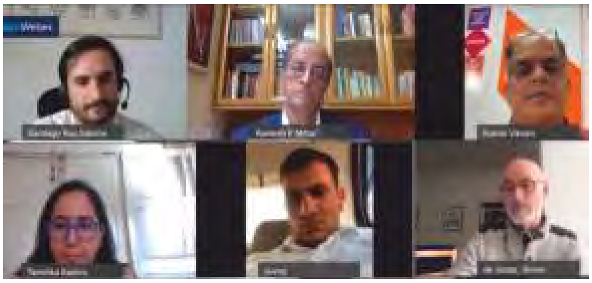

नीति-2020' रही। इस तरह की विषयगत प्रदर्शनियों को बढ़ावा देने के लिए एक वेबिनार के दौरान राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत के निदेशक श्री युवराज मलिक ने कहा कि थीमेटिक प्रदर्शनियाँ भविष्य हैं। इनसे यह तय करने में मदद मिलती है कि हमें आगे क्या नया करना है, हम पाठकों को क्या नया दे सकते हैं। फेडरेशन ऑफ इंडियन पब्लिशर्स के अध्यक्ष श्री रमेश के. मित्तल ने कहा कि विषयगत पुस्तकें विषय का गहन अध्ययन करने में हमारी मदद करती हैं। भविष्य में क्या नए काम किए जाएँ, इसकी प्रेरणा भी मिलती है। इस वेबिनार में मेक्सिको दूतावास, नई दिल्ली से कल्चर एंड एडुकेशन अटेचे के प्रमुख सेंटिआगो सेनचेज ने कहा कि थीमेटिक प्रदर्शनियों का भविष्य बहुत ही उज्ज्वल है। इनसे विविधता व रचनात्मकता बढ़ती है।

कनाडा के क्यूबेक एडिशन कमिटी के अध्यक्ष श्री साइमन डि जोकास ने कहा कि इस तरह की प्रदर्शनियाँ व्यवसाय व नए पाठक वर्ग तक पहुँचने का अवसर प्रदान करती हैं, साथ ही इस तरह की प्रदर्शनियों से दुनियाभर के पाठकों का ज्ञान भी बढ़ता है। राष्ट्रीय डिजाइन संस्थान (एनआईडी), अहमदाबाद की सीनियर फैकल्टी श्रीमती तनिष्का काचरू एक डिजाइनर होने के नाते मानती हैं कि इस तरह की थीमेटिक प्रदर्शनियाँ बहुआयामी दृष्टिकोण प्रदान करती हैं। इससे डिजाइन क्षेत्र में नई कड़ियों को जोड़ने में मदद मिलती है।

बाल साहित्य में चित्र व संपादन की चुनौतियाँ

बच्चों की कहानियों, कविताओं, रचनाओं का संपादन करते और उनके चित्र बनाते समय कौन-कौन-सी चुनौतियाँ सामने आती हैं, इस पर राष्ट्रीय पुस्तक न्यास के हिंदी भाषा के संपादक श्री पंकज चतुर्वेदी, जानी-मानी बाल-साहित्य लेखिका व 'नंदन' की संपादक डॉ. क्षमा शर्मा और प्रसिद्ध बाल-चित्रकार श्री पार्थ सेनगुप्ता के बीच महत्वपूर्ण चर्चा हुई। डॉ. क्षमा शर्मा ने बाल साहित्य के

संपादक के सामने आने वाली चुनौतियों पर कहा कि हमारा पारंपरिक ज्ञान तो पहले से ही बहुत धनी है। बच्चों के लिए बहुत से विषय पहले से उपलब्ध हैं। ऐसे में जो नहीं हैं, वे कैसे आएँ? वे कैसे सरल भाषा में आएँ? उनकी प्रस्तुति कैसे अच्छी तरह से हो, जिससे अन्य भाषा के पाठक भी उसकी तरफ आकर्षित हो सकें और इसके अलावा उसमें वह सब कुछ हो जो बच्चों के लिए आवश्यक है। उसमें किसी तरह की असहज बातें न हों। पार्थ सेनगुप्ता ने एक चित्रकार के सामने आने वाली चुनौतियों पर विस्तार से बताया, "चित्र बनाते समय क्षेत्र विशेष की सभ्यता व संस्कृति को ध्यान में रखना पड़ता है। जब हमें पता होता है कि इस बाल-कहानी को उत्तर का पाठक भी पढ़ेगा और दक्षिण का भी, तो यह बहुत चुनौतीपूर्ण काम बन जाता है, लेकिन जैसे-जैसे हम आगे बढ़ते हैं, परेशानियाँ दूर होने लगती हैं। चित्र बनाते समय मैं यह कोशिश करता हूँ कि लेखक ने जो कहानी में नहीं कहा, मैं उसे चित्र के माध्यम से लेकर आऊँ, ताकि लेखक और चित्रकार दोनों मिलकर एक अच्छी पुस्तक बना सकें। बच्चों के लिए चित्र बनाते समय बच्चे के नजरिए से ही सोचना पड़ता है।"

फ्रांस में प्रकाशन उद्योग

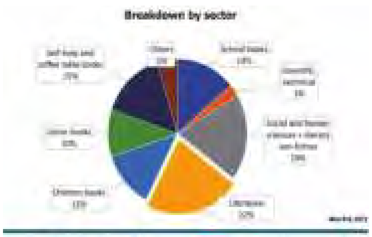

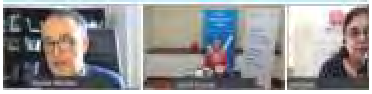

फ्रांस में प्रकाशन उद्योग को कोरोना के कारण हुए नुकसान तथा इस चुनौती से निबटने के लिए फ्रांस की तैयारियों पर बी.आई.ई.एफ. के निकोलस रोशे ने प्रस्तुति दी।

समकालीन हिंदी साहित्य पर विमर्श

हिमाचल कला संस्कृति एवं भाषा अकादमी द्वारा 'समकालीन हिंदी साहित्य' विषय पर कार्यक्रम में व्यंग्यकार प्रभात गोस्वामी ने 'व्यंग्य में

मुहावरों और लोकोक्तियों का असर', विज्ञान कवि यशपाल सिंह 'यश' ने 'विज्ञान और कविता', प्रतिलिपि डॉट कॉम की वीणा वत्सल सिंह ने 'प्रिंट बुक्स बनाम ई-बुक्स, ऑडियो बुक्स', कथाकार चरण सिंह पथिक ने 'हिंदी साहित्य पर बनने वाली फिल्मों की लोकप्रियता' पर चर्चा की। कार्यक्रम में हिमाचल कला संस्कृति एवं भाषा अकादमी के सचिव डॉ. कर्म सिंह ने संस्था के मुख्य उद्देश्य के बारे में बताया। संचालन संस्था की चंद्रकांता ने किया।

चौथा दिन

शिक्षा और संस्कार की बुनियाद 'मातृभाषा'

'मातृभाषा व्यक्तित्व निर्माण में शिक्षा और संस्कारों की बुनियाद है' विषय आयोजित वेबिनार में गुजराती शिक्षाविद् और लेखक श्री

रणछोड़ शाह ने कहा कि व्यक्तित्व निर्माण में मातृभाषा में दी गई शिक्षा का स्थान सर्वोपरि है। उन्होंने स्वयं संचालित विद्यालय में एक विषय के रूप में मातृभाषा गुजराती में प्रकाशित एक पुस्तक, जो पाठ्यक्रम से बाहर की है, उसे सभी कक्षाओं में पढ़ाने का प्रबंध कर रखा है।

जाने-माने गुजराती विद्वान और चिल्ड्रेंस यूनिवर्सिटी के माननीय कुलपति श्री हर्षद पी. शाह ने कहा कि मातृभाषा से व्यक्तित्व विकास में न केवल शिक्षण, बल्कि संस्कारिता की बुनियाद भी मजबूत होती है। गर्भस्थ शिशु भी माता की संवेदनाओं को ग्रहण करता है, अतः

जन्म से पहले बालक में माता के द्वारा दिए गए संस्कार रोपित किए जा सकते हैं। ऑस्ट्रेलिया से जुड़े प्रसिद्ध गुजराती कवि, लेखक और चिंतक डॉ. विनोद जोशी ने मातृभाषा के बारे में कहा कि यह ईश्वरप्रदत्त नहीं है, बल्कि हमारा स्वयं प्राप्त किया गया गुण है और सामान्यतः हम सभी उस उम्र से गुजरते हैं, जब भाषा मिलती है। विचारों को जब ध्वनि मिलती है तो बात प्रकट होती है, और यह बात बोलने वाला और सुनने वाला या लिखने वाला और पढ़ने वाला तभी समझ पाएगा, जब वे दोनों ही अपनी-अपनी संस्कृति या कहें संस्कारिता में माहिर होंगे। कोई भी भाषा स्थिर नहीं होती, वह हमेशा प्रवाहित होती रहती है। संचालन गुजराती भाषा के संपादक श्री भाग्येंद्र बहादुरभाई पटेल ने किया।

नई शिक्षा नीति में गांधीवादी दृष्टिकोण

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास द्वारा आयोजित कार्यक्रम में 'नई शिक्षा नीति में गांधीवादी दृष्टिकोण' विषय पर म्यूजियम ऑफ कंस्ट्रक्टिव प्रोग्राम्स ऑफ महात्मा गांधी के निदेशक डॉ. टी. रविचंद्रन ने अपने विचार रखे। उन्होंने कहा कि महात्मा गांधी ने भारतीय संस्कृति उन्मुख शिक्षा में प्रयोग किए। गांधीजी ने शिक्षा के क्षेत्र में पहला प्रयास बिहार के चंपारण में किया। 13 नवंबर, 1917 को छपरा में पहला स्कूल खोला। वे लॉर्ड मैकॉले की शिक्षा नीति के विरुद्ध थे जो दमनकारी ब्रिटिश साम्राज्य के लिए मानव संसाधन का निर्माण करती थी और उन्होंने राष्ट्रीय विद्यापीठ की स्थापना का निर्णय लिया।

गांधीजी का मानना था कि स्कूल प्रयोगात्मक कार्य और शोध के लिए होने चाहिए। बच्चों को सभी तरह की शिक्षाएँ प्रदान की जानी चाहिए। उन्हें वास्तविक जीवन के साथ-साथ शिल्प, तकनीक और सामाजिक वातावरण के अनुकूल शिक्षा प्रदान करनी चाहिए क्योंकि बच्चा जो कुछ भी सीखता है, उसी तरह की गतिविधियाँ उसके द्वारा संपन्न की जाती हैं। इसी बात को नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति में लागू किया गया।

नई शिक्षा नीति : मातृभाषा की भूमिका

'नई शिक्षा नीति में मातृभाषा की भूमिका' पर आयोजित परिचर्चा में प्रख्यात शिक्षाविद् व आंध्र प्रदेश एससीईआरटी के सेवानिवृत्त प्रो. एन. उपेंद्र रेड्डी ने कहा कि मातृभाषा में पढ़ाई-लिखाई बच्चों के संपूर्ण विकास के लिए आवश्यक है। बहुत सारे विदेशी विश्वविद्यालय हर क्षेत्र में समृद्ध होने के बावजूद मातृभाषा में शिक्षा देते हैं। हालाँकि अंग्रेजी पढ़ना भी जरूरी है, लेकिन जो प्राथमिक ज्ञान बच्चे को उसकी

मातृभाषा में दिया जा सकता है, वह उसे ज्यादा अच्छे से समझ में आएगा। मातृभाषा कार्यान्वयन समिति के सदस्य तथा एससीईआरटी, तेलंगाना के पाठ्य-पुस्तक संयोजक सुवर्ण विनायक ने कहा कि पठन-पाठन यदि मातृभाषा में हो, तो बच्चों को कला, साहित्य, संस्कृति, समाज आदि को अच्छे से समझने में मदद मिलती है। सरकार के इस कदम से बच्चों को बहुभाषी बनने में मदद मिलेगी। संचालन राष्ट्रीय पुस्तक न्यास के तेलुगू भाषा के संपादक डॉ. पत्तिपाका मोहन ने किया।

शौर्य कहानी-संग्रह विमोचित

विश्व पुस्तक मेला-2021 के मंच से प्रख्यात लेखिका वंदना यादव की पुस्तक 'जिंदगी और मौत के बीच' का लोकार्पण किया गया।

लेखिका व संपादक वंदना यादव, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास के निदेशक कर्नल युवराज मलिक, न्यास के संपादक श्री कुमार विक्रम, कर्नल पी.के. यादव, प्रलेख प्रकाशन से श्रीमती स्वाति चौधरी, कहानीकार प्रमिला काजी और गौतम बुद्ध विश्वविद्यालय की प्रो. रेनू यादव ने पुस्तक का विमोचन किया। ऑनलाइन माध्यम से वरिष्ठ साहित्यकार श्री तेजिंदर शर्मा, विवेक मिश्रा, रमीज़, जयंती रंगनाथन आदि भी इस कार्यक्रम से जुड़े। वंदना यादव ने बताया कि इस पुस्तक में 21 लेखकों की कहानियाँ हैं जो या तो सैनिक परिवार से जुड़े हैं या स्वयं सैनिक हैं। उनमें से अधिकतर महिलाएँ हैं। उन्होंने कहा, "इस कहानी संग्रह में शहादत, शौर्य, वात्सल्य, प्रेम है और कुछ ऐसे पल भी

हैं, जो पहले किसी कहानी संग्रह में नहीं दिखते। मैं यह संग्रह इसलिए लेकर आना चाहती थी, क्योंकि मैं एक सैनिक की पत्नी हूँ। मैं कई पुस्तकालयों में गई, लेकिन मुझे वहाँ ऐसा कोई कहानी-संग्रह नहीं मिला, जो पूरा सैनिक जीवन पर हो। वहीं से मुझे यह प्रेरणा मिली और आज एक वैसा ही कहानी संग्रह पाठकों के सामने है।" श्री मलिक ने वंदना यादव को बधाई देते हुए कहा कि पुस्तक के माध्यम से वंदनाजी ने अपनी और अपनी जैसी कई वीरांगनाओं को नई आवाज दी है। पुस्तक में हर कहानी को जो नाम दिया है, ऐसा पल कहीं-न-कहीं हर सैनिक के जीवन से जुड़ा होता है। कर्नल मलिक ने अपने सैनिक जीवन का अनुभव भी साझा किया। उन्होंने कहा कि सैनिक जब ड्यूटी पर होता है तो उसके लिए पारिवारिक लगाव, भावनाएँ कोई मायने नहीं रखतीं, उसके लिए राष्ट्र और ड्यूटी पहले होती है। बहुत से सैनिक ऐसे होते हैं, जो पहली बार ड्यूटी पर जाते हैं, लेकिन वापस लौट नहीं पाते, यह जो भावनाओं का सैलाब है, उसको शब्दों में पिरोने के लिए कर्नल मलिक ने पुस्तक प्रकाशन की पूरी टीम को बधाई दी।

मातृभाषा में शिक्षा की चुनौतियाँ

'मातृभाषा में शिक्षा की चुनौतियाँ' विषय पर आयोजित कार्यक्रम में जाने-माने शिक्षाविद् प्रो. योगेंद्र नाथ शर्मा 'अरुण' व श्री लाल बहादुर

शास्त्री संस्कृत विश्वविद्यालय के कुलपति व केंद्रीय हिंदी निदेशालय के निदेशक प्रो. रमेश पाण्डेय ने भाग लिया। कार्यक्रम के दौरान तीन बिंदुओं पर चर्चा की गई—राष्ट्रीय शिक्षा नीति के अनुरूप शिक्षकों, पुस्तकों व मानक भाषाओं में आदान-प्रदान की चुनौतियाँ। प्रो. पाण्डेय ने 'मातृभाषा में शिक्षण की चुनौतियों' के प्रश्न पर कहा कि पूर्व में अंतर्प्रदेश के बीच संपर्क की भाषा संस्कृत थी, लेकिन वर्तमान संदर्भ में यह क्षेत्रीय भाषा पर निर्भर करता है। इसलिए क्षेत्रीय भाषा में अध्यापन करने के लिए शिक्षक को संकल्पित होने की आवश्यकता है। प्रो. अरुण ने कहा कि पुस्तकें विश्व स्तरीय होनी चाहिए। लेखक व अनुवादक प्रशिक्षित होने चाहिए। सबसे महत्वपूर्ण बात यह कि अनुवाद के दौरान सांस्कृतिक आदान-प्रदान हो। इसके अलावा भारतीय ज्ञान परंपरा, भाषा के संरक्षण, तकनीकी और मातृभाषा व त्रिभाषा फार्मूले पर विमर्श किया गया। कार्यक्रम का संचालन न्यास के हिंदी भाषा के संपादक श्री पंकज चतुर्वेदी ने किया।

'गुरु तेग बहादुर : जीवन अते वाणी'

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत द्वारा 'गुरु तेग बहादुर : जीवन अते वाणी' कार्यक्रम का आयोजन किया गया। मुख्य वक्ता के रूप

में रामगढ़िया कॉलेज, फगवाड़ा के प्रो. अवतार सिंह उपस्थित थे। उन्होंने कहा कि गुरु तेग बहादुर सिखों के नवें गुरु थे जिन्होंने गुरु नानक देवजी द्वारा बताए गए मार्ग का अनुसरण किया। उनके द्वारा रचित 115 पद्य गुरु ग्रंथ साहिब में सम्मिलित हैं। उन्होंने कश्मीरी पंडितों को औरंगजेब द्वारा बलपूर्वक मुसलमान बनाने का विरोध किया। सन् 1675 में गुरुजी ने इस्लाम न कबूल करते हुए देश हित में अपना जीवन न्योछावर कर दिया। उनकी शहीदी किसी धर्म के लिए नहीं, बल्कि मानवता की रक्षा के लिए थी। विश्व इतिहास में धर्म/मानवीय मूल्यों, आदर्शों एवं सिद्धांतों की रक्षा के लिए प्राणों की आहुति देने वालों में गुरु तेग बहादुरजी का स्थान अद्वितीय है।

विदेशों में भारतीय संस्कृति

विदेशों में भारतीय संस्कृति को लेकर आयोजित वेबिनार में न्यास के निदेशक श्री युवराज मलिक ने कहा कि दुनिया में कोई ऐसा देश नहीं

है, जो प्रवासी भारतीयों के कौशल को नजरअंदाज कर सके। अमेरिकी प्रशासन में कई भारतीय अपनी विभिन्न क्षमताओं के साथ शामिल हैं। भारतीय इतने सक्षम होते हैं कि वे जिस देश में भी रहते

हैं, वहाँ की संस्कृति को प्रभावित कर सकते हैं। पेरिस में रहने वाली कार्नाटिक कंसर्वेटरी ऑफ पेरिस की संस्थापक श्रीमती भावना प्रद्युम्न कहती हैं कि भारतीय संस्कृति में विदेशियों को आकर्षित करने की क्षमता है। ब्रुशेल्स में रहने वाली फाउंडेशन फ्रिजन होर्टा की संस्थापक श्रीमती नूपुर ट्रोन ने कहा कि यूरोप के लोग भारत की कला, संस्कृति और सभ्यता को जानने, अपनाने की ओर बढ़ रहे हैं।

मराठी में बच्चों के लिए कहानी पाठ

पुस्तक मेला के आभासी पटल पर मराठी के ख्यातिलब्ध लेखकों द्वारा न्यास से प्रकाशित लोकप्रिय पुस्तकों का पाठ व्यापक रूप से सराहा गया। 'माणूस आणि सावली' कहानी का पाठ स्वयं लेखक राजीव तांबे ने

किया। जबकि दूसरी कहानी 'सिंहूला शिकला गर्जना करायला' (मूल अंग्रेजी : इंदू राणा) को सुश्री लीला शिंदे ने स्वर दिया, जो सेवानिवृत्त प्राध्यापक व 25 से अधिक पुस्तकों की लेखिका हैं। कार्यक्रम का समन्वय मराठी संपादक सुश्री निवेदिता मदाने-वैशंपायन ने किया।

कवि सम्मेलन

हिमाचल कला संस्कृति एवं भाषा अकादमी द्वारा आयोजित 'कवि सम्मेलन' में अभिनेता व कवि पंकज झा ने 'बेवजह', विज्ञान कवि

यशपाल सिंह 'यश' ने भारत के चंद्रयान मिशन से संबंधित कविता 'विक्रम का संदेश ऑर्बिटर के लिए', कृष्ण मोहन पांडेय ने 'तुम मेरी राधा बन जाओ', गणेश गनी ने 'थोड़ा समय निकाल लेना', विनोद भावुक ने 'कुडियाँ बाद जे जमियाँ कुडियाँ', मुरारी शर्मा ने जारवा आदिवासियों को लेकर 'जंगल के लिए', पवन चौहान ने 'किनारे की चट्टान', रेखा वशिष्ठ ने 'धीरे-धीरे', किरण गुलेरिया ने 'मैं जमीं पर ही भटकता हूँ बंजारों की तरह', रतनलाल शर्मा ने 'आप बीती', गंगाराम राजी ने 'आज रोटी बनी है', कृष्णा ठाकुर ने 'हम पंछी हैं', आर.के. गुप्ता ने 'प्यार का बंधन' शीर्षक से काव्य-पाठ किया। संचालन कर रहीं संस्था की चंद्रकांता ने भी 'पिता' कविता सुनाई।

यह नई दिल्ली विश्व पुस्तक मेले का 29वाँ और पहला वर्चुअल संस्करण था। चार दिवसीय (06-09 मार्च, 2021) विश्व पुस्तक मेले का केंद्रीय विषय—'राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020' रहा। हर बार की तरह इस मेले के दौरान सेमिनार, साहित्यिक कार्यक्रम, पुस्तक विमोचन, काव्य पाठ, पुस्तक परिचर्चा, लेखकों के साथ संवाद, दूतावासों के साथ पैनल चर्चा, सीईओ स्पीक जैसे सफल आयोजन किए गए। ये कार्यक्रम पंजाबी, गुजराती, तमिल, तेलुगू, अंग्रेजी, हिंदी, संस्कृत, बांग्ला और ब्रेल में संपन्न हुए। इस आयोजन की उपलब्धता चौबीसों घंटे रही।

मेले में 160 से अधिक स्टॉलों में 135 से अधिक भारतीय प्रकाशकों और 15 से अधिक विदेशी प्रकाशकों ने भाग लिया। इसके अलावा सरकारी और गैर-सरकारी संस्थाओं ने भाग लिया। भाषावार प्रकाशकों में अंग्रेजी, हिंदी, बांग्ला, मलयालम, पंजाबी, सिंधी, कन्नड़, मराठी, उर्दू रहे। न्यास द्वारा दिए गए वर्चुअल प्लेटफॉर्म में आगंतुकों ने प्रकाशकों से चैट कर अपनी बात भी रखी और मनपसंद पुस्तक की जानकारी ली।

मेले के दौरान लगभग 20 लाख लोग न्यास की साइट पर आए। पहले वर्चुअल संस्करण ने आगंतुकों, खरीदारों और साहित्यिक आयोजनों का विश्व-कीर्तिमान स्थापित कर दिया है।

दृष्टिहीनों के लिए वरदान ब्रेल लिपि

ब्रेल लिपि एक तरह की लिपि है। यह कागज पर उभरे बिंदु संकेतों के रूप में होती है। दृष्टिबाधित व्यक्ति जिसे छूकर पढ़ते हैं। इस लिपि में प्रत्येक आयताकार सेल में छह बिंदु अर्थात डॉट्स होते हैं। यह दो पंक्तियों में बनी होती है और तीन-तीन की संख्या में विभक्त होती है। ब्रेल लिपि का आविष्कार सन् 1821 में हुआ था। इसके आविष्कारक लुई ब्रेल का जन्म पेरिस से 25 मील दूर कुप्रे (फ्रांस) गाँव के एक साधारण परिवार में 04 जनवरी, 1809 को हुआ था। लुई ब्रेल के पिता का नाम सीमन ब्रेल था। वह अपने माता-पिता की सबसे छोटी संतान थे। लुई ब्रेल जन्म से दृष्टिबाधित नहीं थे। एक दिन सीमन ब्रेल अपने काम में व्यस्त थे। बालक लुई ब्रेल वहीं खेल रहे थे। दुर्घटनावश चमड़ा काटने के धारदार औजार से बालक लुई की आँखों में चोट लग गई। चोट लगने से उनकी आँखों से खून निकलने लगा। परिवार वालों ने इसे मामूली चोट समझा और उस पर पट्टी बाँध दी। समय के साथ घाव अपना विस्तृत रूप धारण करता रहा और धीरे-धीरे लुई ब्रेल की दोनों आँखों की रोशनी चली गई। इस तरह जानकारी के अभाव, स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता की कमी एवं समुचित इलाज न होने के फलस्वरूप एक स्वस्थ बालक दृष्टिबाधित बन गया। दृष्टिबाधित होने के बाद भी लुई ब्रेल ने हार नहीं मानी। उन्होंने अपनी अक्षमता को अपनी जिजीविषा पर हावी नहीं होने दिया, बल्कि एक ऐसी खोज की जिसने उनके जैसे तमाम दृष्टिबाधितों के जीवन में आशा की एक नई किरण बिखेर दी। फिर एक अंध विद्यालय से लुई ब्रेल ने शिक्षा हासिल की। गणित, भूगोल एवं इतिहास विषय में उनकी विशेष रुचि थी। ब्रेल लिपि का विचार लुई ब्रेल को फ्रांस सेना के कैप्टन चार्ल्स बार्बियर से मिली जानकारी से आया। चार्ल्स ने लुई को सैनिकों को भेजे जाने वाले नाइट राइटिंग और सोनोग्राफी के संबंध में बताया। इस लिपि में 12 बिंदुओं को छह-छह की पंक्तियों में रखा जाता था। उसमें विराम चिह्नों, संख्या और गणितीय चिह्न का अभाव था।

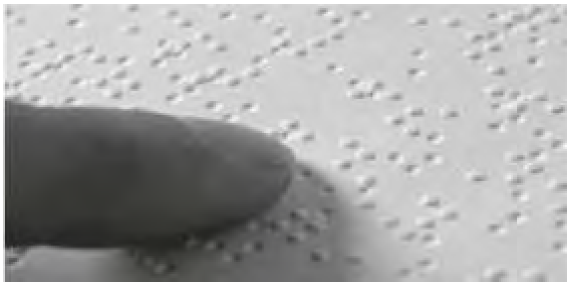

लुई ब्रेल ने उसका संशोधन किया। 12 के बजाय लिपि में छह बिंदुओं का प्रयोग किया और 64 अक्षर बनाए। लुई ने अपनी लिपि में विराम चिह्न व संगीत के नोटेशन लिखने के लिए जरूरी चिह्नों का लिपि में समावेश किया। उस वक्त लुई ब्रेल की उम्र 23 वर्ष थी।

इस लिपि की उपयोगिता आज स्वयंसिद्ध है। क्षय रोग के कारण लुई ब्रेल का निधन 06 जनवरी, 1852 को मात्र 43 वर्ष की आयु में हो गया। इनकी मृत्यु के दो वर्ष के पश्चात सन् 1854 में पेरिस के अंध विद्यालय में ब्रेल लिपि का शुभारंभ अध्यापकों के आग्रह के फलस्वरूप काफी कठिनाइयों के साथ शुरू हुआ। पढ़ने और लिखने में सरल होने के कारण यह लिपि प्रसिद्ध सर्वग्राह्य होती गई और इसे विश्वव्यापी मान्यता मिली।

ब्रेल लिपि में छह-छह बिंदु संकेत होते हैं जो तीन-तीन की संख्या में विभक्त होते हैं। ध्वनि संकेत या अक्षरों की रचना केवल उभरे बिंदुओं के आधार पर होती है। उदाहरण—(-) रिक्त एवं (•) उभरे बिंदु संकेत हैं। मोटे कागज पर लेखन पाटी तथा सूचिका की मदद से ब्रेल के संकेत बिंदु

डॉ. संध्या कुमारी

जन्म : 01 जनवरी, 1976

शिक्षा : एम.ए., एम.फिल., पी-एच.डी. (हिंदी), जे.एन.यू., नई दिल्ली।

संप्रति : सोसाइटी फॉर डिसेबिलिटी एंड रिहैबिलिटेशन स्टडीज की मानद अध्यक्ष, विकलांगता समीक्षा (हिंदी जर्नल) की सह संपादक।

लेखन : जीवन संग्राम के योद्धा (सं), एन.बी.टी., नई दिल्ली; हौसले की उड़ान (सं), मोनिका प्रकाशन, जयपुर। विविध पत्रिकाओं में शोध, आलेख प्रकाशित।

संपर्क : मोबाइल– 9818799240

ईमेल– sandhyajnu76@gmail.com

उभारे जाते हैं। इन्हें सूचिका के मदद से ब्रेल पर दबाव डालकर अंकित किया जाता है। इसमें एक ध्वनि संकेत के लिए निर्धारित दबाव संकेत एक साथ दबाए जाते हैं। अर्थात उभरे बिंदु एक साथ अंकित होते हैं। उदाहरण के लिए, ढ लिखने के लिए सभी बिंदुओं को एक साथ दबाया जाएगा।

यदि पूर्ण विराम लिखना है तो छह बिंदु में 2, 5 और 6 की बिंदु तालिकाएँ एक साथ दबाई जाएँगी। इसी तरह यदि क लिखना है तो 1 और 3 बिंदु तालिकाएँ एक साथ दबाई जाएँगी।

ऋ, ⁄, ^, ऋ और र के लिए जो भी हिंदी में संकेत चिह्न प्रयुक्त होते हैं, उसके लिए, त्र लिखने के लिए और आधा 'र' लिखने के लिए र से पहले 4 का बिंदु लगाकर फिर अगले सेल में 1 2 3 5 का डॉट दबाते हैं।

ब्रेल में छोटी या ह्रस्व 'इ' तथा बड़ी या दीर्घ 'ई' की मात्रा अक्षर के बाद लगाई जाती है।

यह तो रही हिंदी वर्णमाला की बात। प्रश्न उठता है कि अंग्रेजी या अंकों में ब्रेल लिखा हो या हिंदी में इसकी पहचान कैसे करेंगे? इसके पहचान के कुछ तरीके हैं। ब्रेल लिपि में अंग्रेजी लिखने के लिए पहले 6 का डॉट लगाया जाता है। F, X और Z का डॉट हिंदी में प्रयुक्त नहीं होता। अंग्रेजी में जहाँ कैपिटल लेटर लिखना होता है, वहाँ 6 का डॉट लगाया जाता है। अब बात करते हैं गणित की। किसी अंक को लिखते समय अंक से पहले ण का डॉट लगाया जाता है।

1 लिखने के लिए अंग्रेजी के a (अ) का डॉट प्रयुक्त होता है।

इसी तरह 2 के लिए b (बी) का डॉट

3 के लिए c (च) का डॉट

4 के लिए d (द) का डॉट

5 के लिए e (ए)

6 के लिए f हिंदी में इससे कुछ नहीं लिखा जाता है।

7 के लिए g (ग)

8 के लिए h (ह)

9 के लिए I (छोटी इ)

10 के लिए a और J का डॉट

0 (शून्य) जीरो के लिए J का डॉट लगता है और हिंदी में उससे ज लिखा जाता है।

अंक या अंग्रेजी में डबल लिखने के लिए उसी डॉट को दो बार दबाएँगे, जैसे– Ass लिखना है तो a का डॉट फिर S का, फिर S का।

इसी तरह 1991 लिखना हो तो 1 का डॉट, 9 का डॉट फिर 9 का डॉट उसके बाद फिर 1 का डॉट दबाएँगे। ध्यान रहे कि उन सबके लिए अलग-अलग सेल में डॉट दबाया जाएगा। रिक्त और उभरे बिंदुओं की छह संख्या को सेल कहा जाता है–(सेल)।

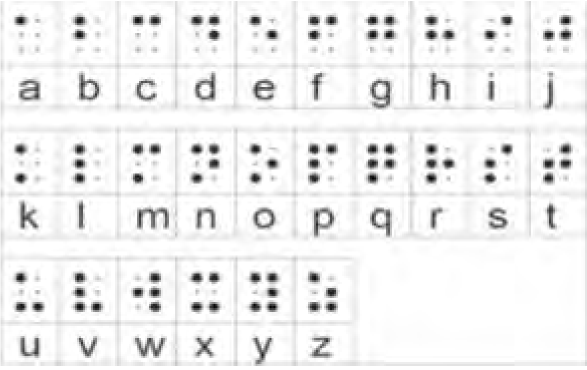

संकेत चिह्नों के लिए इनके डॉट्स अलग होते है हिंदी या अंग्रेजी से ये मेल नहीं खाते। ऊपर दिए गए उदाहरण को देखकर यह समझा जा सकता है।

हिंदी के साथ ही संस्कृत, उड़िया, कन्नड़, गुजराती, तमिल, तेलुगू, मराठी, बांग्ला आदि देश की प्रमुख भाषाओं में ब्रेल लिपि प्रचलित है। समस्त भारतीय भाषाओं में विराम चिह्न एवं संकेत चिह्न एक से ही प्रयुक्त होते हैं।

हस्त ब्रेल लेखन के लिए विशेष पट्टी या स्लेट विधि का प्रयोग होता है। ये ब्रेल पट्टियाँ बड़ी और छोटी आकार में उपलब्ध होती हैं। ये दोहरी होती हैं। इनके बीच में कागज लगा दिया जाता है। कथन या विचारानुसार स्लेट पर अंकित चिह्नों को दबाते रहने से नीचे कागज पर बिंदुओं के उभार अंकित हो जाते हैं। इस तरह यह दृष्टिबाधित व्यक्ति के लिए नोट्स लेने या छोटी-मोटी जरूरत के लिए उपयोगी है। छोटे आकार के होने के कारण इसे कहीं ले जाना भी आसान होता है।

ब्रेल टंकण यंत्र के कुंजी पटल पर भी वही छह बिंदुओं के उभरे संकेत को प्रकट करती पद्धति रहती है। ब्रेल लेखन यंत्र या ब्रेल टंकण से एक मिनट में एक अच्छा ब्रेल टाइपिस्ट चालीस से साठ अक्षर अंकित कर सकता है।

ब्रेल लिपि की कुछ सीमाएँ भी हैं—

- ब्रेल लिपि में आधे अक्षर नहीं लिखे जाते।
- मात्राओं के स्थान पर स्वतंत्र रूप से स्वर का प्रयोग होता है, जैसे—'सा' लिखना है तो स के बाद आ के डॉट्स लगेंगे।
- अनुस्वार, चंद्रबिंदु और विसर्ग अक्षर के पश्चात लिखे जाते हैं।
- संयुक्ताक्षर में संकेत बिंदु 4, संयुक्त अक्षरों के पूर्व लगता है।

इसके अतिरिक्त ब्रेल लिपि की व्यावहारिक कठिनाई यह है कि आकार और विस्तार की दृष्टि से 10 गुणा अधिक कागज और स्थान घेर लेती है। आकार में काफी बड़ा होने के कारण इसका संग्रह भी मुश्किल है। उसके लिए अत्यधिक स्थान की आवश्यकता होगी। इसे एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाना भी काफी कष्टदायी होता है। इसकी छपाई भी काफी खर्चीली होती है। अब सवाल उठता है कि आज तकनीक ने इतनी ऊचाइयाँ हासिल कर ली हैं कि हर मुद्रित सामग्री को सुना जा सकता है तो ऐसे समय में ब्रेल की क्यों और क्या आवश्यकता है? ब्रेल की आवश्यकता दृष्टिबाधित व्यक्तियों के लिए आज भी उतनी ही है। सुनकर किसी रचना या कृति को समझा जा सकता है, पर किसी अक्षर, शब्द या वाक्य को शुद्ध-शुद्ध लिखना ब्रेल के माध्यम से ही सीखा या सिखाया जा सकता है। ब्रेल में उभरे बिंदुओं को स्पर्श करके दृष्टिबाधित व्यक्ति न सिर्फ उसे पढ़ता है, बल्कि उसकी वर्तनी या स्पेलिंग को भी समझ पाता है।

सूचना और प्रौद्योगिकी के इतने उच्चस्तरीय विकास के बाद आज भी जनसामान्य को ब्रेल लिपि की अत्यल्प जानकारी है। अनपढ़ एवं कम पढ़े-लिखे लोगों की तो बात ही छोड़िए, अच्छे-खासे पढ़े-लिखे लोगों के बीच भी दृष्टिबाधितों का पढ़ाई-लिखाई का मसला कौतूहल और विस्मय है। उन्हें दृष्टिबाधितों का पढ़ना-लिखना न केवल चुनौतीपूर्ण लगता है, बल्कि उन्हें यह समझ से परे की बात लगती है कि जब कोई व्यक्ति देख नहीं सकता तो पढ़-लिख कैसे सकता है? ब्रेल लिपि का प्रयोग भी कोई नया नहीं है फिर भी इसकी जानकारी लोगों में न होने का कारण आखिर क्या है? आज इस लिपि के व्यापक प्रचार-प्रसार की भी आवश्यकता है। इस संबंध में पर्याप्त जानकारी के अभाव के कारण भी दृष्टिबाधित बच्चे अशिक्षित रह जाते हैं। विकलागों के लिए कार्यरत संस्था 'सोसाइटी फॉर डिसेबिलिटी और रिहैविलिटेशन स्टडीज से लगभग 20 वर्षो से जुड़े होने के कारण ऐसे अनेक अनुभव मिले हैं जिसमें दृष्टिबाधित बच्चों के अभिभावकों में अपने बच्चों के लिए बेहतर परवरिश की इच्छाशक्ति के अभाव का एक बड़ा कारण उन बच्चों के भविष्य और शिक्षा के लिए पर्याप्त जानकारी के अभाव का होना भी है। योजनाएँ बनती हैं, कार्यान्वित भी होती हैं, पर उनका समुचित प्रचार-प्रसार नहीं हो पाता। जनसामान्य को उसकी जानकारी ही नहीं मिलती है। दूसरी बात यह कि इन योजनाओं के कार्यान्वयन में क्या परेशानियाँ हुईं, उससे कितने लोग लाभान्वित हुए, इसकी भी जाँच-पड़ताल की आवश्यकता है।

हिंदी में सहेजकर ब्रेल लिपि में कुरान

कुरान की आयतें पढ़ने में दृष्टिहीनता बाधक बनती है। इस समस्या से निजात पाने के लिए बोकारो, झारखंड के चास प्रखंड स्थित गौसनगर की 32 वर्षीया शिक्षिका नफीस तरीन हिंदी भाषियों के लिए इसे ब्रेल लिपि में गढ़ रही हैं। वह उत्क्रमित उच्च विद्यालय, रानीपोखर में पढ़ाती हैं। इससे पूर्व उन्होंने तकरीबन तीन वर्ष की मेहनत से 2016 में ब्रेल में हाथ से कुरान लिखी थी। अब वह नेत्रहीनों के लिए उसकी आयतें टाइप कर रही हैं। नफीस ने ब्रेल में कुरान तो लिख डाली, परंतु उसकी आयतों को ब्रेल में टाइप करना समस्या थी। फिर इंटरनेट का सहारा लिया। बहुत खोजबीन करने पर पता चला कि जर्मनी में ऐसा टाइपराइटर बनता है, जो ब्रेल लिपि में टाइप कर सकता है। इसके बाद मुंबई स्थित एक टाइपराइटर आपूर्तिकर्ता से अनुरोध कर उसे मँगवाया। इस पर लगभग 25 हजार रुपये व्यय हुए। लॉकडाउन की अवधि में ही उसे टाइप करना शुरू किया। उम्मीद है कि 2021 के अंत तक यह कार्य पूरा हो जाए।

भारतीय रेल और दिव्यांगजन

यात्री और माल परिवहन क्षेत्र में तमाम बदलाव के बाद भी भारतीय रेल देश की जीवनरेखा बनी हुई है। कारण यह है कि सामाजिक सरोकारों को ध्यान में रखते हुए वह इन दोनों क्षेत्रों पर काम कर रही है। सामाजिक सरोकार आजादी के बाद नीतियों का हिस्सा बने हुए हैं। इस नाते वृद्धजन हों या दिव्यांग और कमजोर तबके के लोग, यात्री सुविधाओं में भारतीय रेल का इनके प्रति विशेष ध्यान है। हालाँकि दिव्यांगजनों के लिए जरूरी सुविधाओं में भारतीय रेल भी पहले काफी कमजोर थी, लेकिन बीते दशकों में इस दिशा में बेहतरीन काम हुआ। हाल के कुछ सालों में रेलवे स्टेशनों पर काफी सुविधाएँ उपलब्ध कराई गई हैं जिससे दिव्यांगजनों का सफर पहले की तुलना में काफी सुविधाजनक हो गया है।

कोरोना संकट की विशेष परिस्थितियों को छोड़ दें तो सामान्य दौर में भारतीय रेल प्रतिदिन 13,523 यात्री गाड़ियों को संचालित करती है और 2.30 करोड़ से अधिक यात्री प्रतिदिन इसमें यात्रा करते हैं। उसके पास 74,003 सवारी डिब्बे और 12,147 इंजनों का विशाल बेड़ा है और कर्मचारियों की संख्या 12 लाख से अधिक है। इसकी 9,000 से अधिक मालगाड़ियाँ प्रतिदिन 30 लाख टन से अधिक आवश्यक वस्तुओं की ढुलाई करती हैं। वहीं उपनगरीय खंडों में मुंबई उपनगरीय रेल प्रतिदिन करीब 71 लाख मुसाफिरों को, जबकि चेन्नै 11 लाख लोगों को गंतव्य तक पहुँचाती है।

देश भर में तमाम हिस्सों में भारतीय रेल के 8,700 से अधिक स्टेशन हैं। इसमें से कई तो अंग्रेजी राज के बने हैं। दिव्यांगजनों के लिए हर स्टेशन पर सुविधाएँ सुलभ नहीं हैं, लेकिन सुगम्य भारत अभियान ने इस दिशा में रेलवे को बाकी संगठनों की तुलना में अधिक सजग किया है। इस समय महत्वपूर्ण स्टेशन दिव्यांगों के लिए सभी आवश्यक सुविधाओं से लैस हो रहे हैं।

अरविंद कुमार सिंह

जन्म : 07 अप्रैल, 1965।

संप्रति : कई प्रतिष्ठित समाचार पत्रों और रेल मंत्रालय में सेवा दे चुके श्री सिंह राज्यसभा टीवी में संसदीय मामलों के प्रमुख रहे हैं। वे चर्चित खोजी पत्रकार और लेखक हैं।

पुरस्कार : हिंदी अकादमी, इफको हिंदी सेवी सम्मान, भारत सरकार का शिक्षा पुरस्कार और चौधरी चरण सिंह राष्ट्रीय कृषि पत्रकारिता पुरस्कार।

संपर्क :

ई-मेल : arvindksingh.rstv@gmail.com

परिवहन के अन्य साधनों की तुलना में भीड़-भाड़ के बावजूद दिव्यांगजन भारतीय रेल से यात्रा करना पसंद करते हैं। उनके लिए प्रमुख गाड़ियों में अलग कोच और रियायतें भी हैं।

अप्रैल 2021 में भारतीय रेल ने अपनी स्थापना का 168वाँ साल मनाया। अंग्रेजी राज में 16 अप्रैल, 1853 को महज 34 कि.मी. दूरी पर 400 मुसाफिरों के साथ उसका जो सफर आरंभ हुआ था, वह अलग-अलग खंडों में अलग प्राथमिकताओं पर आधारित रहा। अंग्रेजी राज की प्राथमिकताएँ अलग थीं। इस नाते यात्री सुविधाओं की दिशा कमजोर थी, लेकिन आजादी के बाद यात्री सेवाओं की बेहतरी पर खास ध्यान दिया गया है।

पूरी दुनिया में दिव्यांगों की संख्या 50 करोड़ के आस-पास है, लेकिन उनकी सबसे अधिक आबादी विकासशील देशों में है। मानसिक मंदता, मानसिक रुग्णता, दृष्टिबाधिता, कम दृष्टि, श्रवण, वाणी और चलन संबंधी दिव्यांगता इसमें शामिल है। भारत में 2001 की जनगणना में 2.19 करोड़ दिव्यांगजन थे, जिनकी संख्या 2011 में 2.68 करोड़ हो गई। इनमें 1.18 करोड़ महिलाएँ शामिल हैं। हमारी दिव्यांग आबादी की 80 फीसदी संख्या ग्रामीण इलाकों में रहती है, जहाँ सुविधाओं को लेकर जागरूकता का स्तर भी कम है और प्रशासनिक और सामाजिक संवेदनशीलता का भी। लेकिन केंद्र सरकार और राज्य सरकारों के कई प्रयासों के साथ कई संगठन उनको गरिमा, समानता और न्याय के साथ जीने का वातावरण बनाने में मदद दे रहे हैं। भारत सरकार की ओर से दिव्यांगजनों के लिए एक महत्वपूर्ण काम यूनीक आईडी बनाने का चल रहा है। सितंबर 2020 तक इसके तहत देश भर से 48.32 लाख दिव्यांगजनों की आईडी बन चुकी है, जिससे आने वाले समय में सुविधाओं के लिए उनकी भाग-दौड़ खत्म होगी।

भारत सरकार के सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय के दिव्यांगजन सशक्तीकरण विभाग की ओर से दिव्यांगजनों की मदद के लिए कई नीतियाँ तैयार करने के साथ अनुकूल वातावरण बनाने के लिए कई पहलें की गई हैं। इसमें 'सुगम्य भारत अभियान' सबसे प्रमुख है। इसमें परिवहन प्रणाली में सुगम्यता का पक्ष सबसे अहम है। दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम, 2016 कार्यान्वयन योजना यानी सिपडा भी बाधामुक्त परिवेश पर खास जोर दे रहा है। लेकिन सुगम्य भारत अभियान अभी संतोषजनक दिशा में नहीं है और इसमें 50 फीसदी उपलब्धि ही हो सकी है। इसे लेकर संसद की सामाजिक न्याय और अधिकारिता संबंधी स्थायी समिति ने टिप्पणी करते हुए सरकार को कुछ अहम सुझाव दिए हैं, लेकिन स्थायी समिति ने इस बात का खास उल्लेख भी किया है कि इस दिशा में रेलवे स्टेशनों पर परिवर्तन साफतौर पर दिखाई देने लगा है यानी इस अभियान को रेलवे ने बहुत गंभीरता से लिया है।

भारत में रेलवे स्टेशनों को पहले सात श्रेणियों में बाँटा गया था। इसमें ए-1 श्रेणी में 60 करोड़ रुपये या उससे अधिक की सालाना यात्री आमदनी वाले गैर-उपनगरीय स्टेशन आते थे, जबकि ए श्रेणी में आठ से 60 करोड़ रुपये के बीच के गैर-उपनगरीय स्टेशन। न्यूनतम आय वाले हाल्ट स्टेशन सबसे निचले पायदान पर हैं। 2013 में ही रेलवे ने तीन सबसे प्रमुख श्रेणियों के स्टेशनों पर दिव्यांगजनों के बाधा रहित प्रवेश के लिए स्टैंडर्ड रैंप, पार्किंग स्थल से स्टेशन भवन तक फिसलन रहित मार्ग, उचित दृश्यता वाले संकेतक, दिव्यांगों के उपयोग के लिए कम-से-कम पीने के पानी का एक नल, भूतल पर कम-से-कम एक शौचालय, सहायता बूथ जैसी अल्पकालिक सुविधाओं की योजना बनाई। व्हीलचेयरों की व्यवस्था के साथ कुछ बड़े स्टेशनों पर बैटरी चालित वाहनों की व्यवस्था भी दिव्यांगों के लिए की गई। उत्तर रेलवे के बहादुरगढ़, देवबंद, फरीदाबाद, जींद, कुरुक्षेत्र, नांगलोई, पलवल, ऋषिकेश और साहिबाबाद और उत्तर मध्य रेलवे के दतिया, धौलपुर, खजुराहो, मानिकपुर और विंध्याचल जैसे 302 स्टेशनों पर सुविधाओं के लिए खासतौर पर ध्यान केंद्रित किया गया। अप्रैल 2018 में सभी स्टेशनों के वर्गीकरण की समीक्षा की गई। इसमें एनएसजी-1 से 4 तक की श्रेणी में पुराने सबसे तीन अहम श्रेणी को समाहित कर दिव्यांगों के अनुकूल सुविधाओं से लैस करने की रणनीति बनाई गई। इसका असर यह हुआ कि आज दिव्यांगजनों के निर्बाध प्रवेश के लिए 3702 स्टेशनों पर रैंप, 2055 स्टेशनों पर कम-से-कम दो पार्किंग स्थान, 2110 स्टेशनों पर पार्किंग से स्टेशन भवन तक फिसलन रहित मार्ग, 1779 स्टेशनों पर समुचित दृश्यता के संकेतक, 2843 स्टेशनों पर कम-से-कम एक नल, 3869 स्टेशनों पर कम-से-कम एक शौचालय और 1325 स्टेशनों पर सहायता बूथ, 1290 स्टेशनों पर एक से दूसरे प्लेटफॉर्म पर जाने के लिए विशेष व्यवस्था अल्पकालिक सुविधा के तौर पर करा दी गई है। यही नहीं पुराने दिशानिर्देशों को संशोधित कर रोज एक लाख से अधिक यात्रियों की आवाजाही वाले रेलवे स्टेशनों पर एस्केलेटर और लिफ्ट का प्रबंध भी शामिल किया गया है। पिछले पाँच वर्षों में 215 स्टेशनों पर 584 एस्केलेटर और 243 स्टेशनों पर 567 लिफ्टों की व्यवस्था की गई है।

इस समय रेलगाड़ियों में दिव्यांगों की सुविधाओं को ध्यान में रखकर खास डिजाइन से बने 3800 एसएलआरडी और एसआरडी सवारी डिब्बे लगाए गए हैं। इनको सवारी डिब्बा कारखाने ने बनाया

है जिसमें चौड़े प्रवेश द्वार, चौड़ी बर्थ के साथ खास शौचालय भी है। रेलवे का प्रयास है कि हर मेल-एक्सप्रेस गाड़ी में उनके लिए ऐसा कम-से-कम एक सवारी डिब्बा लगे। वातानुकूलित गरीब रथ में भी अलग डिब्बे की व्यवस्था है। राजधानी, शताब्दी, जन शताब्दी और दुरंतो को छोड़कर अधिकतर गाड़ियों में ये अनारक्षित डिब्बे के रूप में

उनके प्रयोग के लिए हैं। लेकिन अब रेलवे लिंक हाफमेन बुश या एलएचबी कोचों की दिशा में आगे बढ़ रही है। इस नाते ऐसे डिब्बों को भी बनाया जा रहा है और दृष्टिबाधित यात्रियों की सुविधा के लिए इन डिब्बों में ब्रेल लिपि में उकेरे गए संकेतक चिह्न भी मुहैया कराए गए हैं। नए बन रहे एसी थ्री-टियर इकोनॉमी कोचों में दिव्यांगों की सुविधा का खास ध्यान रखा जा रहा है।

दिव्यांगों के प्रति विशेष ध्यान देने के लिए फ्रंटलाइन कर्मचारियों को प्रशिक्षित करने के साथ कई दूसरे इंतजाम भी किए जा रहे हैं। मंडलीय स्तर पर मुख्य यात्रा टिकट निरीक्षक, स्टेशन प्रबंधक और वाणिज्यिक निरीक्षकों को दिव्यांगजनों की सहायता के लिए डिसेबिलिटी इंस्पेक्टर के रूप में काम करने का निर्देश भी दिया गया है। बड़े रेलवे स्टेशनों पर एनजीओ, चैरिटेबल ट्रस्ट और सीएसआर के माध्यम से निःशुल्क व्हीलचेयर और पोर्टर के लिए यात्री मित्र सेवा शुरू की गई है, जिसका जिम्मा आईआरसीटीसी पर है। उसके पोर्टल www.irctc.co.in के माध्यम से चुनिंदा स्टेशनों पर ऑनलाइन ई-व्हीलचेयर, कैब और पोर्टर सेवाएँ बुक कराई जा सकती हैं। 2016 में नियंत्रक और महालेखा परीक्षक (कैग) ने अपनी रिपोर्ट में रेलवे में दिव्यांगजनों के लिए सुविधाओं में कई खामियों को उजागर किया था, जिसे दूर करने की दिशा में रेलवे ने विशेष अभियान चलाया, जिसका दायरा लगातार बढ़ रहा है।

बेहतर और सुविधाजनक यात्रा की चाह से रेलवे में यात्री यातायात का स्वरूप बदल रहा है। 2010-11 से 2017-18 के दौरान आँकड़ों की समीक्षा बताती है कि सबसे अधिक 10.33 फीसदी रेलयात्रियों की वृद्धि एसी-3 में हुई है, जबकि एसी-2 में छह फीसदी और एसी-1 में यह 6.74 फीसदी। वहीं स्लीपर या शयनयान में वृद्धि दर सालाना 4.4 फीसदी और दूसरी श्रेणी में 8.76 फीसदी रही। अनारक्षित श्रेणी में यह 0.89 फीसदी और उपनगरीय रेलों में महज 2.3 फीसदी रही। भारतीय रेल में अलग-अलग 53 श्रेणी में यात्रियों को रियायत दी गई है, जिसमें दिव्यांगों को विशेष प्राथमिकता है। हालाँकि सबसे अधिक 52.2 फीसदी रियायत वरिष्ठ नागरिकों को मिलती है। जबकि दिव्यांगों, मरीजों और पत्रकारों की रियायत करीब 10.3 फीसदी है। 2017-18 में दिव्यांग यात्रियों को 10.6 फीसदी की वृद्धि दर्ज की गई। दिव्यांगजनों के लिए रेलगाड़ियों में नीचे की सीट देने के साथ सहयोगी के लिए भी सीट की व्यवस्था की गई है। कई स्टेशनों पर उनके लिए अलग आरक्षण काउंटर भी हैं ताकि उनको धक्के न खाने पड़ें। रेल किराये में स्लीपर, प्रथम श्रेणी और एसी-3 में 75 फीसदी तक रियायत है, जबकि एसी-1 और एसी-2 में 50 फीसदी। राजधानी और शताब्दी में एसी-3 और एसी चेयरकार में 25 फीसदी और मासिक व त्रैमासिक टिकटों में 50 फीसदी की रियायत परिचर के साथ उपलब्ध है। आरपीएफ को यह विशेष हिदायत है कि अगर उनके लिए आरक्षित कोचों में लोग अनधिकृत प्रवेश करें तो उनको दंडित किया जाए। लेकिन उनको दिव्यांग और विशेष काउंटर आदि तलाशने में दिक्कतों का सामना करना पड़ता है। हालाँकि ऑनलाइन ई-टिकट बुक करने की सुविधा से उनकी दिक्कतें काफी कम हुई हैं। रेलवे ने कई रेलवे स्टेशनों पर फोल्डेबल रैंप की सुविधा उपलब्ध कराई है। इससे वे आसानी से रेलगाड़ी में चढ़ और उतर सकते हैं और व्हीलचेयर की मदद से सीटों तक उनको पहुँचाया जा सकता है। इस समय जिन स्टेशनों की मरम्मत या सौंदर्यीकरण का काम चल रहा है, वहाँ दिव्यांग यात्रियों को विशेष सुविधाओं का विशेष निर्देश भी दिया गया है। इसके साथ यात्री सुविधाओं के लिए अलग से धन भी आवंटित किया गया है। रेल बजट 2016-17 के बाद से दिव्यांगों की सुविधाओं पर रेलवे ने सामाजिक पहल के तौर पर विशेष ध्यान दिया है। इससे कई बदलाव नजर आ रहे हैं।

रेलवे के कारखानों में वैसे तो पहले से ही काफी दिव्यांग काम करते रहे हैं और उनकी शानदार सेवाओं की सराहना होती रही है। रेलवे ने नेत्रहीनों समेत 40 फीसदी से अधिक दिव्यांगता वालों के लिए अपने एसटीडी बूथों में 25 फीसदी आरक्षण की व्यवस्था भी की है, लेकिन दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम, 2016 के लागू होने के बाद रेलवे में उनको रोजगार देने की दिशा में भी उल्लेखनीय प्रगति हो रही है। 2017-18 में 417, 2018-19 में 621, 2019-20 में 1053 और 2020-21 में 314 दिव्यांगों की नियुक्ति रेलवे में की गई।

लेकिन इन व्यवस्थाओं के बाद अभी भी रेलवे को कई सुविधाओं के विस्तार की जरूरत है। अभी भी दूर-दराज के ग्रामीण इलाकों में दिव्यांगों को मिलने वाली सुविधाओं में जागरूकता की कमी है जिस दिशा में खास काम करने की जरूरत है। साथ ही मानसिकता में भी बदलाव की जरूरत है, जिसमें देश की लाइफलाइन बहुत मददगार बन सकती है।

दिव्यांग-कल्याण को समर्पित राष्ट्रीय संस्थान

ऋग्वेद की एक ऋचा में वर्णित है–

याभिः शचिभिर्वृषणा पारा वृज प्रान्ध,
श्रोणं चक्ष्यएतवे कृथः।
याभिर्वर्तिकां ग्रासीताम पंचतं ता
भिरुषु अतिभिरश्विना गतम ॥

अर्थात संसार में दिव्यांगजन घृणा के पात्र नहीं हैं। हमें उनके साथ सहृदयतापूर्वक मानवीय व्यवहार करना चाहिए। वर्तमान संदर्भ में आवश्यकता इस बात की है कि दिव्यांगता को व्यक्ति की कमजोरी न बनने दिया जाए और भेदभाव एवं अनुकंपा भाव को तिरोहित कर इन लोगों को प्रशिक्षित कर आत्मनिर्भर बनाने के पर्याप्त अवसर उत्पन्न किए जाएँ ताकि वह भी सामान्य जीवनयापन कर सके। वैश्विक स्तर पर दिव्यांगों के कल्याण के लिए अनेक योजनाएँ क्रियान्वित की जा रही हैं। दिव्यांग व्यक्तियों की श्रेणी में दृष्टिबाधित, श्रवणबाधित, वाकबाधित, अस्थिदिव्यांग और मानसिक रूप से दिव्यांग व्यक्ति शामिल किए जाते हैं।

दीपक पाण्डेय

संप्रति : शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार के अंतर्गत केंद्रीय हिंदी निदेशालय, नई दिल्ली में सहायक निदेशक पद पर कार्यरत हैं। 2014-19 तक भारतीय उच्चायोग, त्रिनिदाद-टोबैगो में द्वितीय सचिव के रूप में सेवाएँ दे चुके हैं।

शिक्षा : हिंदी एवं भाषाविज्ञान, पत्रकारिता एवं जनसंचार माध्यम से दो विषयों में स्नातकोत्तर और जबलपुर के महाविद्यालयों में हिंदी एवं साहित्य का अध्यापन अनुभव है।

प्रकाशन : मॉरीशस हिंदी लेखक रामदेव धुरंधर की जुबानी, मॉरीशस लेखक रामदेव धुरंधर : साक्षात्कार के आईने में, हिंदी भाषा व्याकरण, प्रयोजनमूलक हिंदी, हिंदी व्याकरण, अभिमन्यु अनत और उनका साहित्य, मॉरीशस लेखक रामदेव धुरंधर की रचनाशीलता, प्रवासी हिंदी साहित्यकारों से संवाद आदि पुस्तकें प्रकाशित, पत्र-पत्रिकाओं में शोध आलेख प्रकाशित, राष्ट्रीय/अंतरराष्ट्रीय सम्मेलनों में सहभागिता।

संपर्क : मोबाइल– 8929408999
ई-मेल : dkp410@gmail.com

भारत सरकार के सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय के दिव्यांगजन सशक्तीकरण विभाग के तहत नौ राष्ट्रीय संस्थान हैं जो दिव्यांगता के क्षेत्र में सक्रियता से समर्पित होकर काम कर रहे हैं। राष्ट्रीय संस्थान विभिन्न प्रकार के दिव्यांगों के लिए स्थापित स्वायत्त निकाय हैं। ये संस्थान दिव्यांगता के क्षेत्र में मानव संसाधन विकास में लगे हुए हैं, दिव्यांग व्यक्तियों को पुनर्वास सेवाएँ प्रदान करते हैं और अनुसंधान और विकास के प्रयास में नवीनतम कार्यों को क्रियान्वित कर रहे हैं। इन नौ राष्ट्रीय संस्थानों की संक्षिप्त जानकारी इस प्रकार है–

NATIONAL INSTITUTE OF MENTAL HEALTH REHABILITATION

1. राष्ट्रीय दृष्टि दिव्यांगजन के सशक्तीकरण संस्थान (NIEPBD), देहरादून

राष्ट्रीय दृष्टि दिव्यांगजन सशक्तीकरण संस्थान (दिव्यांगजन) सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, भारत सरकार के प्रशासनिक नियंत्रण के अंतर्गत कार्यरत दृष्टि दिव्यांगता के क्षेत्र में एक प्रमुख संस्थान है। यह संस्थान दृष्टि दिव्यांगजनों के अधिकारों तथा सम्मान को बढ़ावा देने के लिए प्रतिबद्ध है। इस सराहनीय उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए, संस्थान दृष्टि दिव्यांगजनों को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा, व्यावसायिक प्रशिक्षण और पुनर्वास सेवाएँ प्रदान करने के लिए प्रशिक्षित मानव शक्ति तैयार करता है। यह संस्थान दिव्यांगता

संबंधी नीतियों, कार्यक्रमों एवं प्रचलित अभ्यासों की आवश्यकता को सुनिश्चित करने के लिए अनुसंधान एवं विकासात्मक गतिविधियों का आयोजन भी करता है। उसकी अनुसंधान व विकास गतिविधियों ने जीवन के विविध क्षेत्रों में दृष्टि दिव्यांगजनों द्वारा समान भागीदारी के लिए अनेक उपयोगी टूल एवं प्रौद्योगिकी का योगदान दिया है। यह संस्थान देश में ब्रेल साहित्य एवं उपकरणों के साथ-साथ ध्वन्यांकित (रिकॉर्ड) पुस्तकों का सबसे बड़ा उत्पादक और वितरक है।

संस्थान का विशिष्ट शिक्षा विभाग शैक्षणिक उत्कृष्टता का एक ज्वलंत उदाहरण है। यहाँ से शिक्षित विद्यार्थी देशभर के दृष्टिबाधित विद्यालयी बच्चों तथा प्रशिक्षु अध्यापकों को अपनी सेवाएँ दे रहे हैं। अनेक देशों के प्रमुख विश्वविद्यालय में कार्यरत हैं और विशिष्ट शिक्षा के विभिन्न पहलुओं में अनुसंधान को बढ़ावा दे रहे हैं। इसकी स्थापना (1984) से लेकर आज तक विभाग ने 6,500 अध्यापक और 402 चलिष्णुता अनुदेशक तैयार किए हैं जो देश में उपलब्ध दृष्टिहीनों हेतु प्रशिक्षित अध्यापकों का लगभग 70% है।

2. अली यावर जंग नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ स्पीच एंड हियरिंग डिसएबिलिटीज (AYJNISHD), मुंबई

संस्थान की स्थापना सन् 1983 में जनशक्ति विकास, अनुसंधान, नैदानिक सेवाओं, आउटरीच एंड एक्सटेंशन सेवाओं, सामाजिक-आर्थिक पुनर्वास सेवाओं, सामग्री विकास और सूचना, प्रलेखन और मूक-बधिर दिव्यांग व्यक्तियों के लिए सूचना के प्रसार के उद्देश्यों के साथ की गई है। इस संस्थान का गठन श्रवण दिव्यांगों के पुनर्वासन के लिए आवश्यक व्यावसायिक जैसे—ऑडियोलॉजिस्ट, स्पीच थेरेपिस्ट, अध्यापक, रोजगार अधिकारी, व्यावसायिक सलाहकार, मनोवैज्ञानिक आदि के लिए प्रशिक्षण पाठ्यक्रम संचालित करता है और इस क्षेत्र के लिए आवश्यक जनशक्ति विकास का कार्य करता है। श्रवण दिव्यांगता, शिक्षा एवं पुनर्वास के सभी पहलुओं पर अनुसंधान करना, श्रवण दिव्यांगता के क्षेत्र में कार्य करने वाले व्यक्तियों और संगठनों के लिए जानकारी प्राप्त करना, संग्रह करना, समायोजन तथा जानकारी मुहैया कराना है। समुदाय जागरूकता, सूचना, शिक्षा अनुसंधान, प्रशिक्षण एवं अभिभावकों को मार्गदर्शन करने के उद्देश्य से सामग्री विकसित करना और वितरण करना संस्थान की महत्वपूर्ण गतिविधियों में से हैं। इस प्रकार से संस्थान समाज के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दे रहा है।

संस्थान के कार्यक्षेत्र तथा आवश्यकताओं के अनुसार श्रवण दिव्यांगों की शिक्षा, पुनर्वास और उससे संबद्ध सभी पहलुओं के बारे में जानकारी/मार्गदर्शन प्रदान करना तथा जागरूकता पैदा करने के उद्देश्य से संस्थान द्वारा प्रचुर मात्रा में उपयुक्त सामग्री (यथा—पुस्तिकाएँ, लिफलेट, वृत्तचित्र, फिल्में, कैसेट्स, स्लाइड्स, पोस्टर्स, पत्र-पत्रिकाएँ आदि) हिंदी, मराठी, अंग्रेजी और क्षेत्रीय भाषाओं में विकसित की गई और उसका प्रदर्शन/वितरण किया गया। विकसित सामग्री दिव्यांगों के पुनर्वासन क्षेत्र में कार्य करने वाली, गैर-सरकारी संगठनों/संस्था/व्यक्ति/प्रोफेशनल्स तथा अभिभावकों के लिए मार्गदर्शी/उपयुक्त है। दिव्यांगता संबंधित जानकारी सामान्य लोगों तक पहुँचाने के लिए सभी संभव प्रयास किए जा रहे हैं ताकि दूरदराज के इलाकों/गाँवों में रहने वाले आम आदमी तक भारत सरकार द्वारा दिव्यांगजनों के लिए दी जाने वाली निःशुल्क सेवाएँ, रियायतें और योजनाओं आदि के बारे में जानकारी सहज उपलब्ध हो सके।

3. नेशनल इंस्टीट्यूट फॉर द इंपावरमेंट ऑफ पर्सन्स विद इंटेलेक्चुअल डिसएबिलिटीज (NIEPID), सिकंदराबाद

संस्थान की स्थापना सन् 1984 में की गई है, जिसका उद्देश्य जीवन की जरूरतों के आधार पर पुनर्वास के गुणवत्ता वाले मॉडल के माध्यम से सेवाएँ प्रदान करने के लिए सुसज्जित मानव संसाधन तैयार करना है। संस्थान देश में बौद्धिक दिव्यांग के कल्याण में कार्य करने वाला एक सर्वोच्च निकाय है। इस संस्थान के मुख्य उद्देश्य—बौद्धिक दिव्यांगजनों की देखभाल व तौर-तरीकों को विकसित करना, बौद्धिक दिव्यांग व्यक्तियों की सेवा के लिए प्रशिक्षित मानव संसाधन उपलब्ध कराना, बौद्धिक दिव्यांगता के क्षेत्र में प्रशिक्षण, अनुसंधान करना और इस क्षेत्र में कार्य कर रही संस्थाओं को सहायता देना एवं उनके साथ समन्वय स्थापित करना है।

4. राष्ट्रीय बहुदिव्यांगता जन सशक्तीकरण संस्थान (NIEPMD), चेन्नई

सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय, दिव्यांगता मामलों के विभाग, भारत सरकार के अंतर्गत इस राष्ट्रीय संस्थान की स्थापना वर्ष 2005 में की गई थी। विकलांग व्यक्ति अधिनियम, 1995 और राष्ट्रीय न्यास अधिनियम, 1999 के अनुसार एक से अधिक दिव्यांगता वाले व्यक्तियों को जरूरत के आधार पर पुनर्वास सेवाएँ प्रदान की जाती हैं। देश में उपलब्ध सेवाओं की कमी को ध्यान में रखते हुए इस संस्थान को टीम के दृष्टिकोण के माध्यम से व्यापक पुनर्वास प्रदान करने के लिए जिन उद्देश्यों के साथ स्थापित किया गया है, वे हैं—समावेश की सुविधा, कई दिव्यांग व्यक्तियों और उनके परिवारों के सशक्तीकरण को सुनिश्चित करना। दिव्यांग लोगों की अधिकतम संख्या तक पहुँचने के लिए, केंद्र और समुदाय दोनों में पुनर्वास सेवाएँ प्रदान की गईं। सेरेब्रल पाल्सी, आत्मकेंद्रित, बहरापन और प्रारंभिक बचपन विशेष शिक्षा वाले बच्चों के लिए इकाइयों के साथ 'थिरामी मॉडल स्पेशल स्कूल' स्थापित किया गया है। यह मॉडल स्कूल प्रशिक्षुओं को व्यावहारिक प्रदर्शन प्रदान करने के लिए एक प्रयोगशाला के रूप में कार्य करता है।

5. पं. दीनदयाल उपाध्याय राष्ट्रीय शारीरिक दिव्यांगजन संस्थान (PDUNIPPD), दिल्ली

पं. दीनदयाल उपाध्याय राष्ट्रीय शारीरिक दिव्यांग व्यक्ति संस्थान, दिल्ली को 1960 में स्थापित किया गया था। संस्थान का प्रमुख उद्देश्य ऑर्थोपेडिक रूप से अक्षम व्यक्तियों के पुनर्वास के लिए प्रशिक्षित श्रमशक्ति विकसित करना, विश्वासपूर्ण सेवाएँ प्रदान करना और अनुसंधान करना है। संस्थान तीन दीर्घकालिक स्नातक स्तर के पाठ्यक्रम चलाता है—बैचलर ऑफ फिजियोथेरेपी (बीपीटी), बैचलर ऑफ ऑक्यूपेशनल थेरेपी (बीओटी), बैचलर ऑफ प्रोस्थेटिक्स एंड ऑर्थोटिक्स (बीपीओ)।

6. स्वामी विवेकानंद राष्ट्रीय पुनर्वास प्रशिक्षण और अनुसंधान संस्थान (SBNIRTAR), कटक

स्वामी विवेकानंद राष्ट्रीय पुनर्वास प्रशिक्षण और अनुसंधान संस्थान, कटक (ओडिशा) 1975 में स्थापित किया गया था। संस्थान के उद्देश्य मानव संसाधन विकास, सेवा वितरण कार्यक्रमों का कार्यान्वयन, अनुसंधान और आउटरीच कार्यक्रम हैं। यह डॉक्टरों, इंजीनियरों, प्रोस्थेटिक्स, ऑर्थोटिक्स, फिजियोथेरेपिस्ट, व्यावसायिक चिकित्सक, बहुउद्देशीय पुनर्वास चिकित्सक और शारीरिक दिव्यांगों के पुनर्वास के लिए कर्मियों के प्रशिक्षण को प्रायोजित और समन्वित करता है।

7. नेशनल इंस्टीट्यूट फॉर लोकोमोटर डिसएबिलिटीज (NILD), कोलकाता

यह संस्थान सन् 1978 में मानव संसाधन विकास के उद्देश्य से स्थापित किया गया था ताकि ऑर्थोपेडिक रूप से दिव्यांग लोगों को सेवाएँ प्रदान करने के लिए मानव शक्ति का विकास किया जा सके। संस्थान फिजियोथेरेपी, व्यावसायिक चिकित्सा, प्रोस्थेटिक्स और ऑर्थोटिक्स में स्नातक पाठ्यक्रम चलाता है। यह दिव्यांगता पुनर्वास और प्रबंधन में स्नातकोत्तर डिप्लोमा पाठ्यक्रम चलाता है। इसके अलावा अन्य डिप्लोमा कोर्स और सर्टिफिकेट कोर्स बहुउद्देशीय पुनर्वास, प्रोस्थेटिक्स और ऑर्थोटिक्स के क्षेत्र में चलाए जाते हैं।

8. भारतीय सांकेतिक भाषा अनुसंधान एवं प्रशिक्षण केंद्र (ISLRTC), नई दिल्ली

भारतीय सांकेतिक भाषा अनुसंधान और प्रशिक्षण केंद्र, भारत सरकार के सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय के दिव्यांग व्यक्तियों (दिव्यांगजन) के अधिकारिता विभाग के प्रशासनिक और वित्तीय नियंत्रण के तहत एक स्वायत्त संगठन है। इसकी स्थापना 26 सितंबर, 2015 को की गई थी। संस्था के उद्देश्य निम्नानुसार हैं—

1. भारतीय सांकेतिक भाषा (ISL) का उपयोग करने के लिए जनशक्ति विकसित करना और द्विभाषिकता सहित भारतीय सांकेतिक भाषा में शिक्षण और अनुसंधान का संचालन करना।
2. प्राथमिक, माध्यमिक और उच्च शिक्षा स्तरों पर बधिर छात्रों के लिए शैक्षिक मोड के रूप में भारतीय सांकेतिक भाषा के उपयोग को बढ़ावा देना।
3. भारत और विदेशों में विश्वविद्यालयों और अन्य शैक्षणिक संस्थानों के सहयोग से अनुसंधान करने के लिए और भारतीय साइन लैंग्वेज कॉरपस (शब्दावली) के निर्माण सहित भारतीय साइन लैंग्वेज के भाषाई रिकॉर्ड/विश्लेषण करना।
4. भारतीय सांकेतिक भाषा को बढ़ावा देने और प्रचार करने के लिए दिव्यांगता के क्षेत्र में बधिरों और अन्य संस्थानों के संगठनों के साथ सहयोग करना।
5. दुनिया के अन्य हिस्सों में उपयोग की जाने वाली सांकेतिक भाषा से संबंधित जानकारी एकत्र करना ताकि भारतीय सांकेतिक भाषा के उन्नयन के लिए इस इनपुट का उपयोग किया जा सके।

9. राष्ट्रीय मानसिक स्वास्थ्य पुनर्वास संस्थान (NIMHR), सीहोर, मध्य प्रदेश

मंत्रिमंडल ने मध्य प्रदेश के सीहोर में राष्ट्रीय मानसिक स्वास्थ्य पुनर्वास संस्थान की स्थापना के प्रस्ताव को मंजूरी दे दी है। संस्थान के उद्देश्य हैं—

- एक एकीकृत बहु-विषयक दृष्टिकोण का उपयोग करके मानसिक स्वास्थ्य पुनर्वास को बढ़ावा देना।
- क्षमता निर्माण को बढ़ावा देना और मानसिक स्वास्थ्य पुनर्वास के क्षेत्र में प्रशिक्षित पेशेवरों को शामिल करना।
- मानसिक स्वास्थ्य पुनर्वास सेवाओं को बढ़ावा देने की दिशा में अनुसंधान और विकास और नीति निर्धारण में संलग्न होना।
- संस्थान चिकित्सा, अर्ध-चिकित्सा और अन्य पेशेवरों की अच्छी तरह से प्रशिक्षित कार्य बल के माध्यम से केवल बाहरी रोगियों की सेवा करेगा। मानसिक बीमारी से पीड़ित रोगियों और उनके परिवारों को उनके इलाज के समय के दौरान उन्हें संस्थान में अस्थायी रूप से रहने के लिए 20 स्टूडियो अपार्टमेंट का भी प्रावधान होगा।
- संस्थान मानसिक स्वास्थ्य पुनर्वास में डिप्लोमा, डिग्री, परास्नातक और स्नातक के विभिन्न पाठ्यक्रम भी चलाएगा।

दिव्यांगों का सहारा
समीर घोष

सात-आठ वर्ष का एक बालक था। उम्र पढ़ने की थी। जाहिर तौर पर वह भी स्कूल जाता। आते-जाते रास्ते पर उसे एक बुजुर्ग भिखारी एक स्थान पर बैठा मिलता। बच्चा अपना टिफिन उस भिखारी के साथ साझा करता। दिन-प्रतिदिन भिखारी और बालक के बीच संबंध गहरा होता गया और इतना प्रगाढ़ हो गया कि बालक अब उस भिखारी को कुछ उन दुकानों तक ले जाने लगा जहाँ से उस भिखारी को भीख मिल जाती थी। लाठी का एक छोर थामे आगे-आगे बालक मानो नेतृत्व कर रहा हो और लाठी का दूसरा छोर थामे बुजुर्ग भिखारी। अब तो यह बालक के दैनंदिन कार्यों में शामिल हो गया।

उस दिन भी हर रोज की तरह लाठी थामे बालक भिखारी को ले जा रहा था। तभी अचानक सामने साइकिल पर आते पिताजी नजर आ गए। बालक को काटो तो

खून नहीं। पिताजी ने उसे देखा है या नहीं, इससे क्या फर्क पड़ता है? उसने तो पिताजी को देख लिया है। यह क्या कम है? बालक ने न आगे देखा, न पीछे, लाठी छोड़ दी और बिना पीछे मुड़े, देखे कि उस बुजुर्ग भिखारी का क्या होगा, घर की ओर भाग गया। उसका हाँफना थमा भी नहीं था कि पिताजी भी आ पहुँचे। वह चोर जैसे सिर झुकाए बुत बना खड़ा रहा।

“किसी की सहायता करो तो उसे बीच में ही नहीं छोड़ देना चाहिए।” हमेशा की तरह पिताजी के सधे स्वर से वह भौचक्का रह गया। उसे याद नहीं, उसने इस पर क्या प्रतिक्रिया दी? लेकिन उसका यह विश्वास पुख्ता हो गया कि उसने उस भिखारी के लिए अभी तक जो कुछ भी किया, वह गलत नहीं था।

लेकिन यह तो शुरुआत थी। न बाल समीर को भान था कि भविष्य उसके लिए क्या लेकर आ रहा है और न ही पिताजी को।

आश्चर्य की बात कि इस घटना के कुछ दिनों बाद ही मानो समीर का भविष्य तय हो गया हो। भविष्य भी कैसा? अनिश्चित, अंधकारमय। आकस्मिक हुई दुर्घटना से परिवार ही नहीं आस-पड़ोस भी स्तब्ध था। पिताजी का तो मानो आत्मविश्वास और आत्मबल ही खो चुका हो।

सूनी आँखों से बिना बाजू के बाल समीर को देख कलेजा मुँह पर आ जाता।

“सही सलामत लोगों को तो नौकरी नहीं मिलती। इसे कौन काम पर रखेगा?”

कुछ न कहते हुए भी मानो पिताजी सब कुछ कह जाते, लेकिन माँ! वो तो माँ ही होती है। अपनी दोनों बाजुएँ खो चुके आठ वर्ष के समीर पर उसे पूरा-पूरा विश्वास था। यह जानते हुए भी कि जीवन के आठ वर्ष बाद उसे नए सिरे से वर्णमाला सीखनी है।

सविता प्रथमेश

शिक्षा : एम.एससी., एम.ए., एम.एड.।

संप्रति : शिक्षक।

प्रकाशन : पराग, सारिका, धर्मयुग, वागर्थ, नवनीत, कादंबिनी, समकालीन भारतीय साहित्य, अक्षरपर्व इत्यादि।

संपर्क : ई-मेल : lionsavita@gmail.com

वास्तव में पैरों से लिखने के लिए समीर को वर्णमाला फिर से सीखनी पड़ी। किसी धुन की तरह रात-दिन समीर पेन-पेंसिल, कागज से मशक्कत करता रहा, लेकिन असल चुनौती तो जीवन की वर्णमाला सीखने की थी। वो जीवन जो कभी लुभाता था, प्रेरित करता था, सपने दिखाता था, आज चुनौती देता नजर आ रहा था। स्वयं के छोटे-छोटे काम जिन्हें वह पलक झपकते पूरा कर दिया करता था, उसके लिए दूसरों की सहायता लेनी पड़ रही थी। उन्हें अपने बूते करना व सीखना था।

लेकिन क्या आठ वर्ष का बच्चा चुनौती समझता है? उसे तो बस यही नजर आता है कि वो दूसरों से अलग है। उसके वे हाथ जिनसे वह बुजुर्ग भिखारी को लाठी पकड़ राह दिखाया करता था, आठ वर्ष का जीवन पूर्ण करने के बाद बीच राह में ही उसका साथ छोड़ चुके थे। बिलकुल उसी तरह जैसे उसने उस बुजुर्ग भिखारी की लाठी बीच सड़क पर छोड़ दी थी।

"क्या सोचा होगा बुजुर्ग ने मेरे बारे में?" साढ़े तीन-चार महीने अस्पताल में रहने के बाद स्कूल जाते समीर के दिमाग में उथल-पुथल मची थी। जाना-पहचाना रास्ता अनजाना-सा लग रहा था। वो बुजुर्ग भिखारी भी अपनी जगह पर नहीं था। "जाने कहाँ होगा? होगा भी कि नहीं?", द्वंद्व चलता रहा।

स्कूल की जानी-पहचानी लाल इमारत में प्रवेश करते समय समीर जितना घबराया हुआ था, उतना तो जीवन में पहली बार जब वह स्कूल गया था तब भी नहीं घबराया था। उस पर बच्चों की भीड़ जो उसके पीछे-पीछे यूँ चल रही थी, ज्यों उन्होंने कोई अनोखी चीज देख ली हो। समीर का ही नहीं, बल्कि पिताजी का भी आत्मविश्वास डोल गया।

"इसी बात का मुझे डर था।" मन ही मन बुदबुदा उठे पिताजी। "इसीलिए मैंने मना किया था। कहीं किसी बच्चे ने इसे नुकसान पहुँचा दिया तो? लेकिन इसकी माँ भी जाने किस मिट्टी की बनी है? जिद पर अड़ गई तो अड़ गई। मेरा बेटा स्कूल जाएगा तो जाएगा। लो देख लो तुम्हारे बेटे को बच्चे कैसे देख रहे हैं?"

इधर समीर के मन में अलग हलचल मची हुई थी। रेलवे के स्कूल का मैदान। घास से बिछे लंबे-चौड़े मैदान को देख घबरा-सा गया।

"वो मैदान भी तो ऐसा ही था, लेकिन उसमें झाड़ियाँ अधिक थीं।" पुरानी फिल्म चल पड़ी।

"तभी तो ट्रांसफॉर्मर नहीं दिखा।" दोनों बाजुओं पर एकाएक नजर जा पड़ी। दो बूँद आँखों से छलक पड़ीं।

प्रार्थना के लिए स्कूल एकत्रित था। वह भी खड़ा हो गया।

समवेत स्वर में बच्चे प्रार्थना कर रहे थे। लेकिन समीर के लिए तो इसके बाद असल परीक्षा शुरू होने वाली थी।

"दोस्त क्या सोचेंगे उसके बारे में?"

"क्या पहले जैसा व्यवहार करेंगे उसके साथ?"

"कहीं हँसी तो नहीं उड़ाएँगे?"

विचारों का सिलसिला था कि थम ही नहीं रहा था। तभी उसे अपना नाम सुनाई पड़ा।

"अरे! प्रार्थना खत्म हो गई?"

प्राचार्य ने पुनः उसका नाम पुकारा। पहले होता तो कब का वह अपना हाथ उठाकर "यस सर" कह चुका होता।

अभी सिर्फ "यस सर" बुदबुदाकर ही रह गया।

"इधर आओ।" प्राचार्य ने अपने पास बुलाया।

समीर को काटो तो खून नहीं। पैर अपनी जगह पर जमे रह गए। लगा बाजुओं के साथ-साथ पैर भी नहीं रहे।

किसी तरह स्टेज तक पहुँचा।

"जाने क्या होगा? सर ने स्टेज पर बुलाकर और गड़बड़ कर दी।" जी धक-धक कर रहा था।

"ये है समीर, समीर घोष।" प्राचार्य श्री के. एन. राय ने कहा। "पहले भी यह हमारे साथ था। इस बार फिर से यह स्कूल वापस आया है। लेकिन पहले से थोड़ा अलग हो गया है। इसलिए समय-समय पर उसे हम सब की मदद की जरूरत होगी और अच्छे बच्चों की तरह मैं उम्मीद करता हूँ कि तुम सब उसकी मदद करोगे।"

"इत्ती-सी बात" कहने के लिए प्राचार्य ने उसे स्टेज पर बुलाया। वर्षों बीत जाने के बाद भी समीर को आज भी याद है।

"इत्ती-सी बात" लेकिन "इत्ती-सी" नहीं थी। इसने तो समीर की सारी चिंता, ऊहापोह के लिए रामबाण का काम किया।

साढ़े तीन-चार महीनों के बाद जिस शाला परिसर में प्रवेश करने और दोस्तों का सामना करने के ख़याल से तनाव में था समीर, झिझक रहा था, वह नाहक ही निकला। सब कुछ पहले जैसा ही था। दोस्तों ने उसे कभी यह अहसास ही नहीं होने दिया कि शारीरिक रूप से वह उनसे अलग है। शिक्षकों, दोस्तों, परिवार और समाज के सामान्य व्यवहार ने समीर को अपनी कमी का अहसास नहीं कराया, बल्कि उसका आत्मविश्वास बढ़ाया। उसके व्यक्तित्व के निर्माण और उसे निखारने में उसके स्कूल, उसके प्राचार्य, शिक्षकों और दोस्तों की अहम और उल्लेखनीय भूमिका रही। सभी की मदद और सकारात्मकता ने समीर की प्रतिभा निखार दी। यहाँ तक कि स्कूल की क्रिकेट की दोनों टीमों का चयन और खिलाड़ियों के मध्य विवाद हल करने की जिम्मेदारी समीर घोष की ही होती। उसके निर्णय लेने की क्षमता से सभी प्रभावित थे।

हालाँकि व्यक्तिगत तौर पर समीर को अपनी कमी का अहसास था और वो इस अहसास को एक हद तक याद भी करते रहते थे। उन्हें अहसास था कि भले ही वे कक्षा के सबसे होशियार छात्र क्यों न हों, भले ही वे विश्वविद्यालय में प्रथम स्थान पर क्यों न आएँ और वे आए भी, उनके लिए जीविकोपार्जन के सीमित विकल्प हैं। तभी तो

हँसते-खेलते बचपन के जिन दोस्तों के साथ शालेय शिक्षा उन्होंने पूरी की, कॉलेज की देहरी चढ़ते ही सभी के रास्ते अलग हो गए। प्रचलन के अनुसार, किसी ने इंजीनियरिंग और किसी ने मेडिकल कॉलेज में प्रवेश ले लिया। समीर के हिस्से आया शहर का ही कॉलेज जो सबसे बड़ा था।

नया माहौल, नए शिक्षक और नए सहपाठी और अनजानेपन का नया माहौल। स्कूल के वातावरण से एकदम ही उलट। सहपाठियों के साथ अबोले रिश्ते ने समीर को तोड़कर रख दिया।

"कब तक ऐसा चलेगा? क्या ये मुझे सिर्फ इसलिए स्वीकार नहीं कर रहे हैं कि मैं उनसे अलग हूँ?"

"कहीं ऐसा तो नहीं, मुझमें ही कहीं झिझक हो उनसे घुलने-मिलने में?"

द्वंद्वों के बीच समीर ने स्वयं ही पहल करने की ठानी और नतीजा आश्चर्यजनक मिला। सहपाठी तो मानो इसी क्षण की प्रतीक्षा में थे। कॉलेज में भी सहयोगी शिक्षक और सहपाठी पाना मानो समीर के भविष्य को एक दिशा देने के लिए हों। पढ़ाई के साथ-साथ छात्र राजनीति में भी उन्होंने अपनी उपस्थिति दी। कॉलेज के लिए अपरिहार्य होते जा रहे थे समीर। उनकी निर्णय लेने की क्षमता ने तत्कालीन राजनीतिज्ञों का ध्यान आकर्षित किया। लेकिन समीर घोष को तो अब वह लाठी पकड़नी थी जिसे वह बीच में छोड़कर न भागे।

रविशंकर विश्वविद्यालय में अंग्रेजी में स्वर्ण पदक प्राप्त करने के बाद समीर घोष ने 'टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल साइंसेज' का रुख किया। जहाँ समस्याओं और नीतियों पर उनकी समझ बढ़ी। निर्णय लेने की क्षमता बढ़ी। शिक्षा को लेकर उनकी दृष्टि विकसित हुई। वे कहते हैं कि टाटा इंस्टीट्यूट में आकर मैंने वैयक्तिकता से सर्वव्यापकता सीखी। मैंने सीखा कि मेरा करिअर और मेरी व्यक्तिगत खुशी तो आम व्यक्ति का लक्ष्य होता ही है। असल खुशी तो दूसरों को खुश करने में है। यहाँ आकर मैंने सीखा कि जब हम दूसरों की सफलता में सहायक बनते हैं तो इससे बढ़कर खुशी और कुछ नहीं क्योंकि उनकी सफलता आपकी भी सफलता होती है। टाटा इंस्टीट्यूट में सीखी इस बात ने समीर को सामाजिक नीतियों की समझ और उनके क्रियान्वयन की ओर प्रेरित किया।

टाटा इंस्टीट्यूट में पढ़ाई खत्म होते-होते समीर ने अपना लक्ष्य निर्धारित कर लिया था। अपने अध्ययन को नया आयाम देने के लिए वे 'लंदन स्कूल ऑफ इकोनॉमिक्स' पहुँचे जहाँ उन्हें अमर्त्य सेन के साथ काम करने का अवसर मिला और अपनी रुचि के विषय यानी सोशल प्लानिंग को और अधिक विस्तार से पढ़ने और समझने का अवसर मिला। यहाँ उन्हें स्वर्ण पदक मिला।

उनकी यह योग्यता ही है जिससे न केवल विभिन्न राज्य सरकारों के साथ उन्हें काम करने का अवसर मिला, बल्कि कुछ देशों के नीति-निर्माण में भी उनकी अहम भूमिका रही। यूनिसेफ के सलाहकार के रूप में भी काम करने के साथ-साथ उन्होंने अनेक राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय प्रोजेक्ट्स के शोध और अध्ययन में अहम भूमिका निभाई। महाराष्ट्र राज्य सरकार के लिए उन्होंने दिव्यांगों के लिए एक्शन प्लान बनाया, वहीं छत्तीसगढ़, बिहार और राजस्थान की राज्य सरकारों के लिए दिव्यांगों हेतु नीतियाँ बनाईं जिसकी अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सराहना हुई। विशेषकर विश्व बैंक ने इन राज्यों की योजनाओं की भूरि-भूरि प्रशंसा की।

समाज की मुख्य धारा में शामिल होने से वंचित समाज को मुख्य धारा में लाना, उनके लिए सोचना, करना और सुझाव देना और सरकारी नीतियों में उन्हें स्थान दिलाना, यही समीर घोष के जीवन का उद्देश्य बन गया। दिव्यांगता चाहे जैसी भी हो, उनके लिए नीतियों के निर्माण में समीर घोष की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। दिव्यांगों के पुनर्वास के लिए उनके अभूतपूर्व योगदान को 1999 में राष्ट्रपति द्वारा सम्मानित किया गया। 'स्वच्छ भारत मिशन' के साथ भी वे जुड़े रहे और ट्रांसजेंडर्स पर भी काम कर रहे हैं।

वंचित वर्ग को समाज की मुख्य धारा में लाने के समीर घोष के प्रयासों ने जन्म दिया 'शोधना कंसल्टेंसी' को। 04 जुलाई, 2002 से यह संगठन दिव्यांगों के जीविकोपार्जन हेतु रास्ता बनाने का काम करता है। इसने नेशनल रूरल लिवलीहुड मिशन के अंतर्गत बिहार, महाराष्ट्र और ओडिशा में दिव्यांगों के लिए रणनीति बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। यही नहीं, बल्कि संगठन 'सेक्सुअलिटी एंड डिसएबिलिटी' पर अध्ययन भी कर रहा है जो मुख्य रूप से दिव्यांगों की मनो-सामाजिक आवश्यकता और विवाह और परिवार संबंधी उनके अधिकारों पर केंद्रित है। दिव्यांगों को कर्मचारी के रूप में रखने के लिए कॉर्पोरेट्स को तैयार करने की दिशा में भी शोधना काम कर रहा है।

अपनी अद्भुत क्षमता व योग्यता और जमीनी स्तर के अनुभव के कारण समीर घोष देश-विदेश के प्रतिष्ठित शिक्षा संस्थानों व अन्य संगठनों में आमंत्रित किए जाते हैं। सामाजिक विकास के मुद्दे पर वे देश-विदेश में भ्रमण करते हैं, शोध पत्र प्रस्तुत करते हैं। सबसे गर्व की बात है कि 'पॉलिसी गाइडलाइंस प्रिवेंशन ऑफ हैंडीकैपिंग कंडीशन' पर विश्व स्तर पर मसौदा तैयार करने की जिम्मेदारी जिस टीम को दी गई थी, समीर घोष उसके अगुवा थे और संपादक भी। उनके नेतृत्व और संपादन में तैयार मसौदे को जुलाई 2000 में रियो की विश्व कांग्रेस में स्वीकार किया गया। भारत के लिए निश्चित ही यह गर्व की बात है।

साठ वर्ष के समीर घोष आज भी आठ वर्ष की उम्र की तरह देश-दुनिया में घूम-घूमकर समाज के वंचित वर्गों के लिए काम कर रहे हैं। अपने पिता के दिए मंत्र पर वे आज भी कायम हैं 'किसी की सहायता करो तो बीच में मत छोड़ दिया करो।' और समीर घोष लाठी का एक छोर पकड़े हुए हैं। अबकी बार न छोड़ने के लिए।

दिव्यांग नर में नारायण देखता नारायण सेवा संस्थान

कहते हैं सर्वांग कुशल व्यक्ति दुनिया के सबसे बड़े अमीर आदमी से भी बढ़कर है। वहीं किसी भी अंग-प्रत्यंग की शिथिलता सुसमृद्ध जन को भी निर्धनतम श्रेणी में ला खड़ा करता है। जी हाँ, उनकी वह आंगिक लाचारी हर किसी की सहानुभूति की पात्र बन जाती है, जो प्रायः कोई नहीं चाहता।

दिव्यांगों के प्रति सहानुभूति तो हर किसी की झोली में होती है, किंतु उनकी किसी भी प्रकार की सहायता या उन्हें संबल प्रदान करना ही अच्छा व सच्चा दया भाव होता है, जो किसी-किसी में ही

होता है। ऐसे महामानव एवं संस्थाएँ ही तो इनका सहारा बन इन्हें जीवनी शक्ति प्रदान करते हैं।

ऐसे परमार्थियों में सर्वाधिक महत्वपूर्ण वे लोग व संस्थाएँ हैं, जो दिव्यांगजनों में अंतर्निहित असाधारण गुणों को उभारने-निखारने के हर संभव उपाय कर उन्हें सामान्यजन से हटकर प्रसिद्धि दिलाते हैं। यथा—हिंदी फीचर फिल्म 'नाचे मयूरी' की नायिका 'सुधाचन्द्रन' को यह अवसर प्रदान करने वाले डायरेक्टर टी. रामाराव। वैसे नृत्य की शौकीन किंतु 16 वर्ष की उम्र में ही दुर्घटना में दायाँ पाँव गँवाने वाली स्वयं सुधाचन्द्रन ने अपने आत्मबल से कृत्रिम पैर के जरिए सुप्रसिद्ध भारतीय नृत्यांगना बनकर दुनिया के समक्ष मिसाल कायम की है। आज तो वे अप्रतिम अभिनय के जरिए भी छोटे-बड़े परदे पर छाई हैं।

ऐसे ही दिव्यांग अरुणिमा सिन्हा, संजय सिन्हा, हर्षित लोहिया जैसे लोगों की सफलता के किस्से बेहद प्रेरणास्पद हैं। लॉकडाउन में अपने नमकीन आदि के पैकेजिंग के उद्यम को हिम्मत से करते हुए सेवा व कमाई के कीर्तिमान स्थापित करने वाले दिव्यांग दीपक तिवारी व शेषराम भी प्रणम्य हैं। इसी प्रकार शारीरिक अक्षमता के समक्ष घुटने नहीं टेककर देश की सर्वोत्तम परीक्षा आई.ए.एस. उत्तीर्ण करने वालों में से हैं—इरा सिंघल, केम्पाहोन्नाह, जयन्त मनकले, सत्येन्द्रसिंह।

अंग-भंग होने के बावजूद भी दिव्यांगों ने स्वाभिमानपूर्वक जीवन जिया। इनमें सादर उल्लेखनीय हैं ब्रेल लिपि के आविष्कारक लुई ब्रेल व लिजाबेथ स्थ्रेशले, जयपुर फुट के निर्माता डॉ. पी. के. सेठी व रामचन्द्र शर्मा सदृश लोग। इन

अंकुर पारीक

जन्म : 25 जनवरी, 1994, फतहनगर, उदयपुर, राजस्थान।

शिक्षा : बी.टेक (बायोटेक), एम.एस-सी.।

संप्रति : विगत तीन वर्षों से दिल्ली एवं जयपुर स्थित विभिन्न कोचिंग संस्थानों में प्रशासनिक व अन्य परीक्षाओं से संबंधित शिक्षण कार्य।

संपादन एवं प्रकाशन : चाणक्य सिविल सर्विस टुडे' में उप संपादक का कार्य, साथ ही विशिष्ट रचनाओं का प्रकाशन, कला-संस्कृति विषयक स्तरीय आलेखों का अनवरत सृजन। अकादमिक एवं साहित्यिक रचनाओं का अनवरत लेखन।

संपर्क : मोबाइल— 9636674763

ई-मेल : ankurpareek1994@gmail.com

अनुसंधानकर्ताओं की भाँति ही वंदनीय हैं कृत्रिम अंगादि के निर्माण उद्योगों व अक्षम लोगों के इलाज के लिए अस्पतालों आदि पर व्यय होने वाली बड़ी धनराशि देने वाले सेठ-साहूकार-भामाशाह या अन्य दानदाता।

इस दिशा में देश के सरकारी प्रयासों से अनेक जगहों पर मूक-बधिर विद्यालय, अंध विद्यालय, विमंदित विद्यालय, विशेषयोग्य जनों के लिए सक्रिय अनेकानेक योजनाएँ, समाज कल्याण विभाग द्वारा कई योजनाएँ संचालित हैं। अंतरराष्ट्रीय प्रयासों में संयुक्त राष्ट्र संगठन, विश्व बैंक, बहुत से गैर-सरकारी संस्थाओं आदि का योगदान भी वंदनीय है।

दिव्यांग कल्याण के इस पवित्र अनुष्ठान में राजस्थान राज्य के उदयपुर शहर में सेवारत 'नारायण सेवा संस्थान' अन्यतम है। इसे प्रसिद्ध समाजसेवी श्री कैलाशचन्द्र अग्रवाल उर्फ कैलाश मानव ने 1985 ई. में स्थापित किया था, जो आज देश के श्रेष्ठतम गैर-सरकारी संगठनों में गिना जाता है। दिव्यांगों व वंचितों के इस ठिकाने की अत्यधिक महत्ता इसके आई.एस.ओ. 9001 प्रमाण पत्र प्राप्त होने से भी है।

यहाँ पर पोलियो महामारी से अथवा अन्य किसी प्रकार से दिव्यांग हुए लोगों का ऑपरेशन आदि कर उत्तम उपचार किया जाता है, दवाइयाँ दी जाती हैं, साथ ही उनकी दिव्यांगता से संबद्ध कृत्रिम अंग या ट्राइसाइकिल, केलीपर्स, वॉकर, हैंड स्टिक आदि भी प्रदान किए जाते हैं। इतना ही नहीं, स्वयं दिव्यांग जन एवं उनके साथ आए व्यक्ति के भोजन व आवास की भी यहाँ समुचित व्यवस्था है और यह सब निःशुल्क है।

विगत तीन दशक से यह कल्याणकारी संस्थान मस्तिष्क के असामान्य विकास की बीमारी 'सेरेब्रल पाल्सी' से पीड़ितों का भी बहुत मददगार बन गया है। यहाँ पर वाक् दिव्यांगता के शिकार लोगों के उपचार का भी प्रबंध है। दिव्यांगों की पंचकर्म आदि थेरेपी हेतु यहाँ पर एक 'पंचकर्म सेंटर' तथा 'आयुर्वेदिक औषधालय' भी सुशोभित है।

हमेशा चलने वाले उक्त सेवाभावी आयोजन के साथ ही नारायण सेवा संस्थान द्वारा कई बार दिव्यांगों हेतु उच्च तकनीकी वाले नैदानिक परीक्षणों का आयोजन भी होता रहता है। इन परीक्षणों में प्रोस्थेटिक सर्जन और फिजियोथेरेपिस्ट निर्धन तथा वंचितों के लिए मिलकर काम करते हैं।

धर्मार्थ संस्थान द्वारा अनेक बार रोगियों को शिक्षित व जागरूक करने के लिए महत्वपूर्ण कार्यशालाओं का भी आयोजन होता रहता है। इसके अलावा विविध संचार साधनों से नारायण सेवा संस्थान की बहुविध सेवाओं का सुग्राह्य शैली में प्रचार-प्रसार व सेवा प्रवचन होते रहते हैं ताकि पीड़ितों एवं दानदाताओं को वांछित जानकारी सहज ही मिल सके। इस कार्य में स्वयं कैलाश मानव, उनके सुपुत्र प्रशान्त अग्रवाल, आध्यात्मिक कथाकारों, संत प्रभृति के श्रीमुख से संगीतमयी प्रस्तुतियाँ शताधिक देशों में बड़े चाव से देखी-सुनी जा रही हैं, जो अपने सेवा मिशन में बहुत कुछ सफल हैं। दिव्यांगजनों की सुधारात्मक सर्जरी कर असमर्थता दूर करके यह संस्थान उन्हें स्वावलंबी बनाने का सफल प्रयास भी करता है। वे अपनी आजीविका स्वयं कमाकर अपना व अपने परिवार का पालन-पोषण कर समाज की मुख्यधारा में ससम्मान शामिल हो सकें, एतदर्थ नारायण सेवा संस्थान द्वारा इन लोगों के लिए सिलाई, काष्ठकला, कंप्यूटर, मोबाइल, बुनियादी शिक्षा आदि के प्रशिक्षण का आयोजन किया जाता है।

नारायण सेवा संस्थान में 700 से अधिक कार्मिक हैं, जो स्वयं को साधक अर्थात् इस सेवा-साधना पथ के पथिक मानते हैं। अब तक यहाँ करीब पाँच लाख दिव्यांगों की सुधारात्मक सर्जरी निःशुल्क हो चुकी है और हजारों की संख्या में प्रतीक्षारत मरीज हैं। उदयपुरस्थ मुख्यालय के अलावा संस्था के कार्यालय देश में 480 जगह तथा विदेश में 49 जगह पर हैं। 24 जनवरी, 2020 की घोषणानुसार नारायण सेवा संस्थान की अनूठी पहल के तहत उदयपुर में 'वर्ल्ड ऑफ ह्युमैनिटी' (W.O.H.) केंद्र स्थापित करने की घोषणा हुई है। यह संस्थान पीड़ितों को कौशल प्रशिक्षण के साथ मुफ्त स्वास्थ्य सेवाएँ व शिक्षा प्रदान करेगा। नारायण सेवा संस्थान की अन्य गौरवास्पद गतिविधियों में दिव्यांग मंच, दिव्यांग खेल अकादमी इत्यादि की स्थापना करना ध्यातव्य हैं।

इस गैर-सरकारी समाज सेवी संगठन के संस्थापक कैलाश मानव के सुपुत्र एवं अध्यक्ष प्रशान्त अग्रवाल के अनुसार 2022 ई. तक नारायण सेवा संस्थान उद्योग का स्वरूप ले लेगा।

हाल ही में आई विश्वव्यापी महामारी 'कोविड 19' में भी इस संस्थान की सराहनीय भूमिका रही। यहाँ से 1,00,000 से भी अधिक लोगों को निःशुल्क राशन, सेनेटाइजर, मास्क आदि वितरित किए गए। यह सब योजनाबद्ध व व्यापक स्तर पर हुआ।

इस संस्थान की सेवाओं को देश-विदेश से भरपूर समर्थन व सहयोग प्राप्त है। दानदाताओं द्वारा देश के कोने-कोने से एवं देश-दिसावर से वित्तीय मदद मिलती रहती है। एक तरह से यह दानदाताओं का भी संगठन है। किंतु दान राशि के हिसाब में पूरी पारदर्शिता के लिए भी यह संस्थान प्रसिद्ध है। कदाचित यह संस्थान

भारत के सर्वश्रेष्ठ चैरिटी संगठनों में परिगणित है। विज्ञान के विद्यार्थियों एवं अन्य जिज्ञासुओं के लिए वरदान सदृश है इस संस्थान द्वारा निर्मित शानदार और दर्शनीय 'विज्ञान म्युजियम'। नारायण सेवा संस्थान की एक अद्भुत सेवा पहल है 'दिव्यांगों का सामूहिक विवाह' आयोजित करना। दिव्यांग को दिव्यांग जीवनसाथी से मिलाकर यहाँ दो जिंदगियों का जीवन सँवारा जाता है।

संस्थान में प्रायः दिन में ठीक से इलाज होता है, और फिर संध्याकाल में सांस्कृतिक व धार्मिक आयोजन होते हैं। इससे पीड़ित

जन दुख-दर्द भुला जिजीविषु बनते हैं। नारायण सेवा संस्थान एवं इसके संस्थापक कैलाश मानव को उल्लेखनीय सेवाओं के लिए कई राष्ट्रीय एवं राज्य स्तरीय सम्मानों से नवाजा जाता रहा है, यथा—09 मई, 2008 को भारत के महामहिम राष्ट्रपति द्वारा 'पद्मश्री', 2003 में भी महामहिम राष्ट्रपति द्वारा राष्ट्रीय पुरस्कार, 2004-05 में महामहिम उपराष्ट्रपति द्वारा गोडफ्रे ब्रेवरी पुरस्कार, 2011 में बनारसीदास गुप्ता गौरव राष्ट्रीय पुरस्कार, 2014 में मध्य प्रदेश सरकार द्वारा राज्य अतिथि सम्मान इत्यादि। वस्तुतः सृष्टि का हर प्राणी अद्भुत है। प्रकृति ने हर मनुष्य में अद्वितीय गुण अंतर्निहित किए हैं। उन्हें सुअवसर प्रदान कर प्रकटित होने व स्वयं सहित जन-जन को लाभान्वित करने का पुण्य करने वालों में नारायण सेवा संस्थान अप्रतिम है।

आओ भारतीय भाषाएँ सीखें

हिंदी	संस्कृतम्	पंजाबी	उर्दू	कश्मीरी	सिंधी	मराठी	कोंकणी	गुजराती	नेपाली	बांग्ला
मिर्च-मसाले	**गन्धाः**	**मिरच मसाले**	**मिर्चमसाले**	**मसाल**	**मिर्च-मसाला**	**मिरची मसाले**	**मसाल्याचो जिनस, सांबार**	**मरी-मसाला**	**मरमसला**	**मरिच मसला**
अजवाइन	यवानिका	जवैण	अजवाइन	जाव्यंद	जाणि	ओवा	वोंवों	अजमो	ज्वानु	जोयान
काली मिर्च	कृष्ण-मरिचः	काली मिरच	काली मिर्च	मरच़	कारा मिर्च	मिरी	मिरीं	मरी	मरीच	गोल मरिच
जीरा	जीरकः	जीरा	ज़ीरा	ज़्युर	जीरो	जिरें	जिरें	जीरूँ	जीरा, जिरो	जीरे, जीरा
तेजपात	गन्धपत्रम्	तेज पत्तर	तेज़पात	तेजवॅथर	कमालपटु, तमालपटु	तमालपत्र	तेजपात	तमालपत्र	तेजपात, सिन्कौली	तेजपात, तेजपाता
दालचीनी	दारुसिता	दालचीनी	दारचीनी	दालचीन	दालचीनी	दालचीनी	तिखी	तज	दालचिनी	दारचिनि, दारुचिनि
धनिया	वितुन्नकम्	धनिया	धनिया	दानिवल	धाणा	धणे	कोथमीर	धाणा	धनियाँ	धने
नमक	लवणम्	लूण	नमक	नून	लूणु	मीठ	मीठ	मीठुं, निमक, लूण	नुन, निमक	नून, लवण
मेथी	मेथिका	मेथी	मेथी	मीथ्य	हुर्बो, मेथी	मेथी	मेथी	मेथी	मेथी	मेथी
सौंफ	शतपुष्पी	सौंफ़	सौंफ़	बॉदियान	सौंफ़	बडीशेप	बडिशेप	वरियाळी	शतपुष्पा, सौंफ	मौरि
हल्दी	हरिद्रा	हलदी	हल्दी	ल्यॅदुर	हैड	हळद	हळद	हळदर	हलेदो, बेसार	हलुद
हींग	हिङ्गुः	हिंग	हींग	यंग	हिङु	हिंग	हींग	हिंग	हिङ	हिंग
इलायची (बड़ी)	एला	इलाची (वड्डी)	इलायची बड़ी	ऑल (बुडऑल)	फोटा वड़ा	वेलदोडा	वेलची (धाकली)/ व्हडली	एलची (मोटी)	सुकुमेल/ अलैंची	एलाच (छोटो/बड़ो)

असमिया	मणिपुरी	ओड़िआ	तेलुगू	तमिल	मलयालम	कन्नड़	डोगरी	संताली	मैथिली	बोड़ो
जालुक मसला	**मोरोक**	**मसला, लंका मसला**	**मसाला दिनुसुलु**	**मसाला पोरुट्गळ्**	**मसालकळ्**	**मसाले पदार्थगळ्**	**मर्च-मसाले**	**मोरिच मंसला**	**मिर्चाइ -मसल्ला**	**मस्ला-मस्लि**
जनि	अजवाइन	जुआणि	वामु	ओमम्	अयमोदकम्	अजवान	जवैन	जोयान	जमाइन, जमैन	जइन
जालुक	गुन मोरोक	गोलमरीच	मिरियालु	मिळगु	कुरुमुळकुं	मेणसु	काले-मर्च	रोबिन, गोल मोरिच	मरीच	मस्ला गोसोम, गल मरिस
जीरा	जीरा	जीरा	जीलकरैं	जीरगम्	जीरकम्	जीरिगे	जीरा	जिरो	जीर	जिरा
तेजपात	तेजपात	तेजपत्र	तेजपत्ता	लवंगप्पत्तिरि	वऴ़नयिल	लवंगदेले	तज-पत्तर	तेजपाता	तेरपात, तेजपात	थेजफात
दालचेनि	उशिङ्-सा, दाल चीनी	डालचिनि	दाल्चेन	लवंगप्पट्टै	करुवप्पट्ट	दालचिन्नि	दालचीनी	दारचिनि	दाल चीनी	दालसिनि
धनिया	फदिगोम	धनिया (धनिआ)	धनियालु	दनिया, कोत्तमल्लिविदै	मल्लि	कोतम्बरि	ब्यूहून	धुनिया	धनी	दुन्दिया
निमख	थूम	लुण	उप्पु	उप्पु	उप्पुॅ	उप्पु	लून	बुलुङ	नून, नोन	संखि
मिथि	मेथी, मिथि	मेथी	मेंतुलु	वेंदयम्	उलुव	मेंते	मेत्थरे, मेथी	मिथि	मेथी	मिथि
गुवामारि	होफ	पानमहुरी, पानमधुरी	सोंफु	सोंबु	पेरुंजीरकम्	सोंपु, सोपु	सौंफ	मुहरि	सौंफ	गुवामुरि, सफ
हालधी	याइङङ्	हलदी	पसुपु	मंजळ्	मञ्ञळ्	अरिशिन	हलदी, हलदर	सासाङ	हरदि	हाल्दै
हिं	हिंग	हिंगु, हेंगु	इंगुव	पेरुंकायम्	कायम्	हिंगु	हिङ्	हिंङ	हींग, हीङ	हिं
इलाचि	इलायची	अलेइच, गुजुराति	एलक्काय (चिन्न/पेद्द)	एलक्काय्	एलक्काय्	एलक्कि	लाच्ची (निक्की, बड्डी)	एलाच काटिच/ सेंड़ा	अरॉची, इलायची	एलासि (फिसा/ गेदेर)

(केंद्रीय हिंदी निदेशालय द्वारा प्रकाशित भारतीय भाषा कोश से साभार)

दिव्यांगजनों की कला में सक्षमता और आर्ट थेरेपी

आम मनुष्य की तरह जीवन जीने में जिन्हें कोई भी शारीरिक व मानसिक बाधा उत्पन्न होती हो, वे विशिष्ट जन भारत में 'दिव्यांग' कहलाते हैं। ऐसे किसी-न-किसी प्रकार की शारीरिक अक्षमता वाले बच्चों को कई नाम दिए गए हैं, जैसे—विशेष आवश्यकता वाले बच्चे (सी.डब्ल्यू.एस.एन.), दिव्यांग। इस श्रेणी में वे बच्चे आते हैं जिन्हें सीखने में कठिनाई का अनुभव होता है। दूसरे शब्दों में कहा जाए तो ये बच्चे सामान्य बच्चों से शारीरिक व मानसिक गुणों में भिन्न होते हैं। इनकी 21 श्रेणियाँ होती हैं, जिनमें जन्म से व जन्म के बाद की शारीरिक व मानसिक विशिष्टता को शामिल किया गया है। इन

सुमन 'पुष्पश्री'

जन्म : 14 अप्रैल, 1977।

शिक्षा : चित्रकला में स्नातकोत्तर।

संप्रति : प्रवक्ता, ललित कला।

प्रकाशन : विभिन्न कविताओं व लेखों का राष्ट्रीय स्तर के पत्र व पत्रिकाओं में प्रकाशन।

सृजन : दिल्ली के सरकारी विद्यालयों में 'विजुअल आर्ट क्लब' की स्थापना में सैद्धांतिक व प्रायोगिक भूमिका व एस.सी.आर.टी. द्वारा आयोजित विषयों के साथ कला के एकीकरण की कार्यशाला में उल्लेखनीय योगदान।

संपर्क : मोबाइल— 7982450833

ई-मेल : pushpshri108@gmail.com

विशिष्ट बच्चों को पढ़ाई के लिए समाज में एक विशेष प्रकार के वातावरण, अनुकूल शिक्षा, चिकित्सा, उचित निर्देशन व देखभाल की आवश्यकता होती है। कभी-कभी इनकी भिन्नताओं को देखते हुए इनकी शिक्षा व्यवस्था अलग-अलग भी करनी पड़ती है, जैसे—दृष्टिबाधित, मूक व बधिर एवम् मानसिक विशेषता वाले बच्चे आदि। इनके अलावा बाकी श्रेणियों के बच्चे सामान्य बच्चों के साथ किसी भी विद्यालय में पढ़ सकते हैं। यदि माता-पिता चाहें तो वे अपने इन बच्चों को सामान्य विद्यालयों में भी प्रवेश दिला सकते हैं। इनके लिए प्रत्येक सरकारी विद्यालय में एक विशेष अध्यापक की नियुक्ति की गई है।

सामान्य बच्चों से शारीरिक या मानसिक अंतर इनकी प्रतिभा पर बुरा प्रभाव नहीं डाल सकता, अपितु यह एक मनःस्थिति को जन्म देता है, जिसमें समाज द्वारा दी गई हीनभावना व आत्मविश्वास की कमी मुख्य है। इन बच्चों को पढ़ाने के लिए विशेष तैयारी की आवश्यकता होती है। इन्हें पढ़ाने के पूर्व यह आकलन किया जाता है कि ये कितने आत्मनिर्भर हैं?, इनमें कितनी सक्रियता है?, कितना बोल पाते हैं?, इशारों को समझते हैं या नहीं?, इनके माता-पिता व पारिवारिक इतिहास, बच्चा कितना सामाजिक मेल-मिलाप कर पाता है?, कितनी जल्दी वह प्रतिक्रिया देता है व वह किस प्रकार की दिव्यांगता से पीड़ित है?, इन सबके आधार पर उसकी शिक्षा आरंभ की जाती है। इसके लिए शिक्षा का प्रारूप तय किया जाता है जिसे आसान व दिलचस्प बनाने के साथ ही विद्यालय का वातावरण प्रेममय व सुरक्षापूर्ण रखा जाता है। शिक्षण की गति बहुत धीमी भी हो सकती है, जिसमें इनको सर्वप्रथम विद्यालय के वातावरण से परिचित करवाया जाता है, फिर बच्चों को सीखने योग्य बनाने की तैयारी की जाती है। उसके बाद इन्हीं कला गतिविधियों का

प्रयोग करते हुए इनकी आवश्यकताओं के अनुसार शिक्षा आरंभ की जाती है, यह सब बच्चे की दिव्यांग श्रेणी पर ही आधारित होता है क्योंकि इनकी शिक्षा के उद्देश्य भिन्न होते हैं। इन्हें पढ़ाना या सिखाना एक चुनौतीपूर्ण कार्य होता है, जिसके लिए शिक्षक में भरपूर सहनशक्ति होनी चाहिए।

मुख्य शिक्षा में विभिन्न रंगों के शब्दों का प्रयोग, चित्र दिखाकर सिखाना, त्रिआयामी शिक्षण सहायक सामग्री द्वारा शिक्षण, कहानियाँ सुनाते समय चित्रों व त्रिआयामी वस्तुओं का प्रयोग किया जाता है। इनके अंदर विशेष योग्यता लाने के साथ इनके मानसिक विकास हेतु कला की विभिन्न गतिविधियों का प्रयोग किया जाता है जिसे 'आर्ट थेरेपी' कहा जाता है। इसके अंतर्गत आने वाली गतिविधियाँ हैं—स्पॉन्ज पेंटिंग, स्टेंसिल पेंटिंग, स्क्रिबलिंग, कट आउट चिपकाना, कलर स्प्लैश, रंगीन क्ले द्वारा त्रिआयामी आकार बनाना, सुरक्षा कैंची के प्रयोग द्वारा कागज को काटना, स्टैंप पैड द्वारा प्रिंटिंग, पेपर बैग बनाना, गत्ते द्वारा वस्तुओं का निर्माण, फ्री हैंड चित्र, केवल रंगों द्वारा ही बिना पेंसिल का प्रयोग किए चित्र बनाना, फिंगर प्रिंटिंग, बिना ब्रश (तूलिका) के चित्र बनाना, ऊन द्वारा चित्र बनाना, ब्लो पेंटिंग, बबल प्रिंटिंग, डॉट (बिंदु) चित्रण, कार्टूनिंग, स्क्रैचिंग, कागज व क्लॉथ कोलाज, रंगीन क्ले मॉडलिंग आदि। इन सभी कला गतिविधियों को चिकित्सा थेरेपी के रूप में प्रयोग किया जाता है।

विभिन्न आर्ट थेरेपी में प्रयोग की जाने वाली गतिविधियों के उदाहरण—

कला एक उपचार बनकर मनमस्तिष्क व मांसपेशियों पर सक्रिय प्रभाव डालती है जिससे मानसिक व शारीरिक क्षमता बढ़ती है। कला बच्चों को अपनी ओर आकर्षित व प्रोत्साहित करती है। मानसिक अस्थिरता व स्वावलंबन, अभिव्यक्ति में कठिनाई, दिमाग की चोट आदि कठिनाइयों को धीरे-धीरे ठीक करने में अपना योगदान देती है। जो बच्चे पारिवारिक व सामाजिक तौर पर स्वयं को दूर रखते हैं या अलग व्यवहार करते हैं या अंतर्मुखी हो जाते हैं, जो कि ऐसे बच्चों में बहुत ही आम बात है। जो इनकी मानसिक स्थिति के कारण हो या इन्होंने कोई दर्दनाक घटना देखी हो जिससे इनके मन पर बुरा प्रभाव पड़ा हो तब इनके व्यावहारिक लक्षण बदल जाते हैं जो कि इनकी मानसिक कठिनाइयों को और बढ़ा देते हैं। इनके साथ जुड़ा इनका परिवार भी कई कठिनाइयों का सामना निरंतर करता ही जाता है। इन बच्चों को सामाजिकता सिखाने हेतु कला की गतिविधियों को समूह में भी करवाया जाता है। आँख व हाथ के बीच जब इनका सामंजस्य ठीक बैठ जाता है तब इनके मस्तिष्क में संवेदना शुरू हो जाती है और इनका सीखना आरंभ हो जाता है। विभिन्न रंगों को देखकर साथ ही अलग-अलग प्रकार की कला की गतिविधियों को स्वयं करके उनकी मनःस्थिति पर उनके विचारों, भावनाओं व व्यवहार पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। जब भावनाएँ बढ़ती हैं तब मस्तिष्क की मांसपेशियाँ सक्रिय हो जाती हैं। कला मानसिक स्वास्थ्य में लाभ प्रदान करती है। कला ध्यान को केंद्रित कर एकाग्रता बढ़ाती है जिसके कारण उनकी सीखने की क्षमता बढ़ती है और इसका लाभ उन्हें अपने शिक्षा संबंधित पाठ्यक्रम को सीखने में होता है। हस्तशिल्प की शिक्षा द्वारा उनकी रचनात्मक योग्यता व ज्ञानेंद्रियों का समुचित विकास होता है। मनोरोग विशेषज्ञ भी आर्ट थेरेपी के प्रयोग का परामर्श देते हैं। जब ये बच्चे कला में व्यस्त रहते हैं तब ये और इनके परिवार जन बहुत खुश होते हैं, यही खुशी इनको स्वस्थ करने में लाभदायक होती है।

आज इन बाधाओं पर विजय पाने वाले विशेष आवश्यकता के सैकड़ों मनुष्य हैं जो आत्मनिर्भर होकर सबके लिए उदाहरण बनकर उभरे हैं। एम.एफ.पी.ए. प्रशिक्षण संस्थान, भारत अर्थात मुख व पैर द्वारा चित्रकला बनाने वाले कलाकार, जिनके दोनों हाथ या पैर नहीं हैं, उनको प्रशिक्षण देकर आत्मनिर्भर बनाने का काम कर रहा है। ये उनकी प्रतिभा को निखारकर उनकी कला को लोगों तक पहुँचाने में सहायता भी करते हैं व निश्चित मासिक आय भी प्रदान करते हैं। इनका उद्देश्य है—'सेल्फ हेल्प, नॉट चैरिटी'।

कुछ ऐसे विशेष आवश्यकता वाले कलाकार हैं जो कि आज अपने कार्य क्षेत्र में सफल हैं व दूसरों के लिए प्रेरणास्रोत बने हुए हैं। ये ऑटिस्टिक विशेषता एवं मुख व पैर द्वारा चित्र बनाने वाले कलाकार दूसरों के लिए उदाहरण बनकर उभरे हैं—

नीलेश गणेश : 23 वर्षीय नीलेश ऑटिस्टिक बाधा होते हुए भी बहुत ही अच्छे कलाकार हैं। इनके चित्र ईश्वर व संगीत पर आधारित हैं। ये कई चित्रकला प्रदर्शनियों में भाग लेते रहे हैं।

सुनीता : 36 वर्षीय सुनीता की मस्क्युलर डिस्ट्रोफी (पेशीय दुर्विकास) के कारण दोनों हाथों ने काम करना बंद कर दिया तब इन्होंने मुँह से चित्र बनाना आरंभ किया। इन्हें चित्रकला के लिए राष्ट्रीय पुरस्कार भी प्राप्त हुआ है। इन्होंने नेशनल जियोग्राफिक के लिए वृत्तचित्र (डॉक्यूमेंट्री) में पोस्टर डिजाइन किए हैं।

स्वप्ना ऑगस्टाइन : केरल की स्वप्ना के जन्म से दोनों हाथ नहीं थे। बचपन से ही रंगों की तरफ आकर्षित हुईं। ये पैर द्वारा चित्र बनाती हैं। इनके कुछ चित्र कई न्यूज लेटर्स एवं पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके हैं।

जनार्थनन : चेन्नई के 24 वर्षीय जनार्थनन के दोनों हाथ एक दुर्घटना में चले गए। इसके बाद भी इन्होंने कला की डिग्री प्राप्त की। 150 से भी अधिक चित्रकला स्पर्धाओं में पुरस्कार जीते, जिनमें दो राष्ट्रीय पुरस्कार भी शामिल हैं।

गौकरण : छत्तीसगढ़ के गौकरण के जन्म से ही मूक-बधिर होने के साथ दोनों हाथ भी नहीं थे। ये पैर द्वारा चित्र बनाते हैं। इन्होंने स्क्रीन पेंटिंग के डिप्लोमा के बाद फाइन आर्ट में स्नातकोत्तर की डिग्री प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण की। ये भी बहुत ही सुंदर चित्र बनाते हैं।

कला मानसिक अवसादों, चिंता, बढ़ती आयु संबंधित चिंता आदि तनाव दूर कर भावनात्मक मजबूती प्रदान करती है। यह केवल विशिष्ट जनों के लिए ही नहीं, अपितु प्रत्येक मनुष्य के लिए उपयोगी है। कला स्वयं में ही विशेष है और यह जिस किसी के साथ भी जुड़ जाती है वह भी विशेष हो जाता है। फिर जन्म से या जन्म के बाद शारीरिक या मानसिक विशेषता वाले विशिष्ट जनों के लिए तो यह हर दिन एक नई आशा लेकर आती है। उन्हें यह विश्वास दिलाती है कि वे किसी विशेष प्रयोजन के लिए जीवित हैं। कला हर भाव को अभिव्यक्त करना सिखाती है। यदि अकेले भी जीवन जीना पड़े तो यह जीवन भर का मित्र बन जाती है। हो सकता है कि ये विशिष्ट बच्चे भविष्य में कलाकार ही बन जाएँ। कुछ मानसिक कठिनाइयाँ ऐसी होती हैं जिसमें बच्चा केवल शारीरिक तौर पर ही सक्षम हो पाता है और कुछ ऐसी कठिनाई होती हैं जिन पर विजय पाकर ये बच्चे धीरे-धीरे शारीरिक व आर्थिक रूप से भी आत्मनिर्भर हो जाते हैं।

समाज को इन बच्चों को भरपूर सहयोग देना चाहिए। जिनका संपूर्ण जीवन ही दुखों व कठिनाइयों से भरा है, उन्हें अपनी ओर से और परेशानी न होने दें। हीनभावना से ग्रसित न होने दें। इन्हें खुले हृदय से अपनाएँ। ये भी समाज का महत्वपूर्ण अंग हैं।

दिव्यांगों को चैंपियन बनाते हैं
चंगेज़ खान

"अगर किसी को हँसा नहीं सकते तो किसी का दिल दुखाने का भी अधिकार नहीं है, इसी तरह अगर किसी का सहारा नहीं बन सकते तो बेसहारों का मजाक भी नहीं बनाना चाहिए?" उक्त कथन है उस शख्स का जो अपनी केंद्रीय संस्थान की नौकरी छोड़कर स्पेशल बच्चों को दुनिया में आत्मसम्मान के साथ जीना सिखा रहे हैं। करीब 10 सालों से वे ऐसे बच्चों की तलाश में रहते हैं और उनको तराशकर जीने की नई राह दिखा देते हैं।

जैसे एक चमकता हुआ सितारा अपने आस-पास के टिमटिमाते सितारों को अपनी चमक दे देता है जिससे वे और भी तेज होकर विस्तृत आकाश पटल पर चमकने लगते हैं। ठीक ऐसा ही एक सितारा हैं चंगेज़ खान। वे उत्तर प्रदेश के बरेली में ओल्ड सिटी में रहते हैं। 12-14 साल की उम्र में जब बच्चे खुद ही अपने माँ-बाप का सहारा ढूँढ़ते हैं, उस उम्र में चंगेज़ खान ऐसे बच्चों का सहारा बनने लगे जो असहाय थे। चंगेज़ खान बरेली के और आस-पास के क्षेत्रों के स्पेशल बच्चों के लिए किसी सितारे से कम नहीं हैं। उनके थोड़े से प्रोत्साहन के सहारे से ये स्पेशल बच्चे आज अपना नाम देश-दुनिया में रोशन कर रहे हैं।

जब कोई असहाय या बेसहारा इनका सहारा लेकर आगे बढ़ता है तो वे असहाय एकदम इतने मजबूत बन जाते हैं कि वे कई और अन्य लोगों का भी सहारा बन जाते हैं। चंगेज़ खान कहते हैं कि जिंदगी जीने के लिए होती है, लेकिन इसे अगर दूसरों के लिए जिया जाए तो यह बेहद खूबसूरत हो जाती है। सही में कुछ लोग ही अपनी इंसानियत को जिंदा रखकर जिंदगी को वास्तविक रूप में जी पाते हैं। हालाँकि आज की भागम-भाग और प्रतिस्पर्धा भरी दुनिया में कम ही लोग ऐसे होते हैं जो खुद के लिए नहीं, बल्कि दूसरों के लिए जीते हैं। चंगेज़ खान ऐसे ही शख़्स हैं जो बिना किसी स्वार्थ के दूसरों को जिंदगी जीने का मकसद सिखा रहे हैं, ऐसा करके उनको आत्मिक सुख का अनुभव होता है जिसे वे हजारों रुपये कमाकर या ऐशो-आराम का सामान जुटाकर भी नहीं पा सकते थे। इसी सुख और खुशी को पाने के लिए वे कई वर्षों से बेसहारा और मजलूमों को जिंदगी दे रहे हैं। आज उनके कई दोस्त, परिवार और शख़्सियत कंधे से कंधा मिलाकर खड़े हो गए हैं और उनके इस नेक काम को बढ़ावा दे रहे हैं।

सीमा 'असीम' सक्सेना

शिक्षाः एम.ए. संस्कृत।

संप्रति : उद्घोषक, आकाशवाणी।

प्रकाशन : चार पुस्तकें प्रकाशित; दो काव्य संग्रह 'ये मेरा आसमाँ' व 'सागर मीठा होना चाहता है'; दो कहानी संग्रह 'लिव लाइफ' व 'आखिर कब तक'। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में नियमित लेखन।

पुरस्कार : सारस्वत सम्मान, विशिष्ट सरस्वती रत्न सम्मान, विश्व हिंदी संस्थान, 'कल्चरल ऑर्गेनाइजेशन कनाडा से सम्मान' व ऑल इंडिया कल्चरल ऐसोसिएशन द्वारा इंटरनेशनल थिएटर फेस्टिवल में प्रतिभाशाली कलाकार का सम्मान।

संपर्क : मोबाइल– 9458606469
ई-मेल– seema4094@gmail.com

दिव्यांगों को बना देते हैं चैंपियन

किस्मत से हारे हुए न जाने कितने ही बच्चे इनके प्रशिक्षण और प्रोत्साहन से अपनी मेहनत के बलबूते पर राष्ट्रीय चैंपियन बन गए हैं। चंगेज़ खान कहते हैं कि मुझे अपनी ख़्वाहिशों को पूरी करने से ज्यादा असहाय बच्चों की मदद करना अच्छा लगता है, जब उनके चेहरे पर खुशी देखता हूँ तो लगता है मुझे जिंदगी जीने का मकसद मिल गया। इनके इसी जज्बे के कारण दिव्यांगों की हिम्मत बढ़ी और उन्होंने अपने हुनर से देश-विदेश में परचम लहरा दिया। किसी असहाय को देखकर उसका मजाक बनाना, उसकी किसी कमजोरी पर बातें बनाना, दुत्कार देना या फिर थोड़ी-सी दया दिखा देना तो आम बात है, लेकिन आगे बढ़कर इन्हें इनकी ही शक्ति से परिचित कराने का काम कोई भी नहीं करता है। चंगेज़ ऐसे बच्चों को स्पोर्ट्स चैंपियन बनाकर उनके चेहरों पर सच्ची मुस्कान बिखेरने का काम कर रहे हैं। अभी तक करीब 40-45 बच्चे स्पोर्ट्स चैंपियन बना चुके हैं। क्रिकेट, फुटबाल, टेनिस और दौड़ आदि की तैयारी कराते हैं जिसमें से अभी तक 20 बच्चों ने स्वर्ण पदक, 10 ने रजत और 10 ने कांस्य पदक जीतकर संस्था का और चंगेज़ खान का नाम और विश्वास दोनों कायम रखा है। विदेशों में होने वाली स्पेशल ओलंपिक में बच्चे भाग लेते हैं और स्वर्ण पदक पर अपना अधिकार कर लेते हैं।

स्पोर्ट्स काउंसिल ऑफ द डेफ एसोसिएशन

कुछ साल पहले चंगेज़ खान बधिर बच्चों की मदद के लिए खुद आगे आए थे। दरअसल हुआ यूँ कि वे स्पेशल बच्चों को लेकर एक आयोजन में हिस्सा लेने गए थे तो वहाँ पर कुछ बच्चों को आयोजकों ने डाँटकर भगा दिया था। इंसानियत को तार-तार कर देने वाली यह घटना जब प्रत्यक्ष देखी तो इनको बच्चों के साथ किया जाने वाला यह व्यवहार पसंद नहीं आया और उसी समय यह प्रण ले लिया कि इन बच्चों का सहारा बनकर कुछ कर दिखाना है तभी 150 बच्चों को लेकर चंगेज़ खान ने 'स्पोर्ट्स काउंसिल ऑफ द डेफ एसोसिएशन' बना ली, जिसमें बधिर बच्चों को स्पोर्ट्स में मुफ्त प्रशिक्षण के अलावा उनकी अन्य समस्याओं को भी दूर करने का प्रयास कर रहे हैं। स्पोर्ट्स स्टेडियम में बधिर बच्चों को ओलंपिक खेलों का प्रशिक्षण देते हैं फिर बेहतर प्रदर्शन करने वाले बच्चों को मुफ्त प्रशिक्षण के साथ-साथ खाने-पीने आदि की सभी सुविधाएँ भी देते हैं। इसके अलावा इन बच्चों की बीमारियाँ और डॉक्यूमेंट्स आदि बनवाने में मदद करते हैं या जो भी परेशानी या तकलीफ होती है, उसे दूर करने का पूरा प्रयास करते हैं। इसके साथ ही गणतंत्र दिवस, स्वतंत्रता दिवस, गांधी जयंती और बाल दिवस के अवसर पर पिछले चार-पाँच सालों से कार्यक्रम आयोजित करते हैं जिससे बच्चों को कहीं बाहर जाकर कोई परेशानी न महसूस हो।

बेहद सरल और नेक कार्य करने वाली शख़्सियत

चंगेज़ खान से बात करते हुए ऐसा लग रहा था कि वह कितने सरल और मददगार हैं। उनके मन में बधिर बच्चों के लिए कुछ करने का जज्बा था, इसलिए नौकरी छोड़कर अपनी पुश्तैनी खेती के सहारे परिवार और संस्था का काम चला रहे हैं। अपने दोस्त मूक-बधिर महताब हुसैन से पूरी साइन लैंग्वेज सीखी। वह कहते हैं कि बधिर बच्चों की हर समस्या को दूर करने से मन को शांति मिलती है। वे बताते हैं कि ऐसे बच्चे अन्य बच्चों से ज्यादा ऊर्जावान होते हैं। उन्होंने बताया कि एवरेस्ट विजेता अरुणिमा सिन्हा का जब बरेली के निकट चनेहटी में हादसा हुआ था तब उन्हें जिला अस्पताल में भर्ती तो कर दिया गया था, लेकिन उनकी देखभाल करने वाला कोई नहीं था। उस समय हमारी संस्था के बच्चे उनके पास फल आदि लेकर गए। यह देखकर उनकी आँखों में खुशी के आँसू आ गए थे, फिर मीडिया आदि को बुलाया तो मामले को संज्ञान में लिया गया। उनको एम्स भेजा गया और करीब तीन महीने वहाँ इलाज चला जब वो थोड़ा ठीक हुईं तो हमारे घर आईं और अपना वादा निभाया। चंद्रशेखर आजाद स्पोर्ट एजुकेशन सोसाइटी बनाई और मुझे उसमें लिया। किसी का भला करो तो वो कभी नहीं भूलता, उस अहसान को उतारने का हरसंभव प्रयास करता है, जबकि मैं किसी की मदद निःस्वार्थ भावना के साथ करता हूँ और अपनी खुशी के लिए करता हूँ।

परिवार

उनकी उम्र अभी मात्र 35 साल है और उन्होंने वो कर दिखाया जो उम्मीद से भी परे है। वह कहते हैं कि मैं जब मूक-बधिर बच्चों की मदद करने को काफी समय घर से बाहर ही रहता था तब हमारे वालिद और वालिदा (माँ-बाप) कुछ नहीं कहते, बल्कि पूरा सहयोग करते थे। वे दोनों लोग बच्चों से बात करके बहुत खुश होते। महताब हुसैन नाम का एक अंतरराष्ट्रीय खिलाड़ी हमारे वालिद साहब से और वालिदा से अकसर बहुत बातें करता है। चंगेज़ खान के परिवार में चार भाई-चार बहनें हैं। सभी की शादी हो गई है। पत्नी का नाम सबा खान है जो तिलहर जिला शाहजहाँपुर की एक शाही परिवार से ताल्लुक रखती हैं। इनकी एक प्यारी-सी बेटी आमना खान है। वह कहते हैं कि हमारा एक संदेश इस दुनिया के नाम है कि "आप और हम सभी अपनी रोज की भागदौड़ में से कुछ वक्त उन दिव्यांगजनों के लिए भी जरूर निकालें जिनको किसी सामान्य लोगों की बस एक प्रेरणा की जरूरत होती है और हम सबकी मदद से वह दिव्यांग एक-न-एक दिन किसी भी क्षेत्र में एक ख्यातिलब्ध के रूप में हम सबके सामने अवश्य आएगा अतः सबको साथ लेकर चलें।"

विशेष आवश्यकता वाले बालकों की शैक्षिक आवश्यकताओं के लिए सहायक तकनीकी एवं प्रौद्योगिकी

दिव्यांग बालकों को समाज की मुख्य धारा में शामिल करना समाज के लिए प्रमुख चुनौतियों में से एक है। शिक्षा में समान अवसरों का समावेश या एकीकरण एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। समावेशी शिक्षा की बढ़ती माँग के कारण स्कूली शिक्षा में बड़े बदलाव हुए हैं। दिव्यांग बालकों को सामान्य बालकों के साथ शिक्षित किया जाता है। मुख्यधारा के स्कूलों में छात्रों के एक विविध समूह को विभिन्न सुविधाओं के साथ समायोजित करने की कोशिश की जा रही है। बच्चों और युवाओं को मुख्यधारा की कक्षाओं में शामिल करना और विशेष शैक्षिक आवश्यकताओं की मान्यता है और मान्यता दैनिक स्कूल के काम का एक अभिन्न अंग है। इस काम में, सूचना और संचार प्रौद्योगिकी (आईसीटी) एक सहायक प्रौद्योगिकी बन गई। आईसीटी के उपयोग से आधुनिक दुनिया में दिव्यांग बालकों द्वारा कई बाधाओं का आसानी से सामना किया जा सकता है। आईसीटी जीवन के हर पहलू में तेजी से एकीकृत हो रहा है। सुलभ आईसीटी दिव्यांग व्यक्तियों को शिक्षा, कौशल प्रशिक्षण और रोजगार का एक अभूतपूर्व स्तर प्रदान करने की संभावना है, साथ-ही-साथ उनके समुदाय के आर्थिक, सांस्कृतिक और सामाजिक जीवन में भाग लेने का अवसर प्रदान करता है।

डॉ. किरन जोशी

शिक्षा : एम.सी.ए., बी-एड., पी-एच.डी. (शिक्षाशास्त्र)।

संप्रति : असिस्टेंट प्रोफेसर, डिपार्टमेंट ऑफ एजुकेशन, मॉडर्न कॉलेज ऑफ प्रोफेशनल स्टडीज, गाजियाबाद।

शोध क्षेत्र : आई.सी.टी.।

प्रकाशन : कई पत्र-पत्रिकाओं में शोध आलेख प्रकाशित, कई वर्षों से अनवरत लेखन।

संपर्क : मोबाइल– 9971092400

ई-मेल : drkiranjoshi.edu@gmail.com

सहायक प्रौद्योगिकी की अवधारणा

दिव्यांग बच्चों की शिक्षा के संदर्भ में सहायक तकनीकी की परिभाषा अत्यंत व्यापक है :

"कोई भी वस्तु, उपकरण अथवा उपकरण का टुकड़ा या उत्पाद या प्रणाली जिसको पूर्ण रूप से अथवा वांछित संशोधित करती है, दिव्यांग व्यक्तियों के लिए उनकी कार्य क्षमता में वृद्धि करने या सुधार करने के लिए व्यावसायिक रूप से इस्तेमाल किया जाता है, 'सहायक प्रौद्योगिकी' के अंतर्गत आती है।"

सहायक प्रौद्योगिकी के अंतर्गत आने वाले उपकरणों की क्षमता अविश्वसनीय रूप से बड़ी है, और दोनों 'उच्च तकनीक' और 'कम तकनीक' उपकरणों को इसमें शामिल किया गया है। उच्च तकनीकी उपकरणों के अंतर्गत कंप्यूटर, इलेक्ट्रॉनिक रूप से संचालित है, उच्च तकनीकी उपकरणों का महँगा होना कोई आवश्यक नहीं है, एक साधारण कम लागत वाला बैटरी चालित खिलौना, एक उच्च तकनीकी डिवाइस माना जा सकता है।

दृष्टिबाधित दिव्यांगों की शैक्षिक आवश्यकताओं के लिए सहायक तकनीकी एवं प्रौद्योगिकी

आधुनिक प्रगति और तकनीकी ने दृष्टिबाधित दिव्यांगों के लिए शिक्षा संबंधी और रोजगार संबंधी कई बाधाओं को हटा दिया है। दृष्टिबाधित छात्र अब सामान्य छात्रों के साथ अपना कार्य पूरा कर सकते हैं, किताबें पढ़ सकते हैं, अनुसंधान कर सकते

हैं। कम दृष्टि वाले विद्यार्थियों के लिए वस्तुओं को बड़ा करके देखने की आवश्यकता होती है। आधुनिक प्रौद्योगिकी और तकनीकी की सहायता से दृष्टिबाधित बालक अपने जीवन में कई ऊँचाइयों को छू सकता है। निम्नलिखित प्रौद्योगिकी दृष्टिहीन दिव्यांगों की सहायता कर सकती है—

कंप्यूटर स्क्रीन आवर्धन (Computer Screen Magnification) : इसके माध्यम से सीखने वाला स्क्रीन के एक विशेष खंड का चयन कर सकता है और फिर उसे बड़ा कर सकता है।

बड़े प्रिंट कीबोर्ड (Large Print Keyboard) : इससे बड़े और बोल्डर टाइपफेस के साथ, किज देखना आसान हो जाता है।

वर्णनात्मक वीडियो सेवा (Descriptive Video Service) : यह तकनीक स्क्रीन पर प्रदर्शित दृश्यों का एक कथात्मक अवलोकन प्रदान करती है।

ब्रेल, एम्बोसर : ब्रेल एम्बोसर एक प्रभावी प्रिंटर है जिसके माध्यम से पाठ्य को स्पर्श ब्रेल कोशिकाओं के रूप में परिवर्तित किया जाता है।

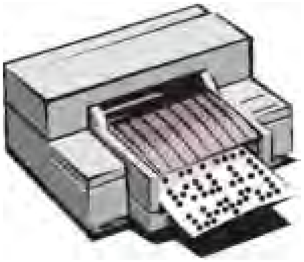

स्क्रीन रीडर : एक स्क्रीन रीडर एक टेक्स्ट-टू-स्पीच एप्लिकेशन है।

ब्रेल स्कैनिंग सॉफ्टवेयर : यह ब्रेल दस्तावेजों को एकल और दोनों पक्षों द्वारा स्कैन करने की अनुमति देता है।

स्कैनिंग और रीडिंग अप्लायंसेज : एक मल्टी फीचर्ड टेक्स्ट रीडिंग मशीन जो दृष्टिबाधित छात्र और डिस्लेक्सिक व्यक्तियों की पठन आवश्यकताओं को संबोधित करती है।

टॉकिंग बुक्स एंड टेप रिकॉर्डर : ये किताबें वैकल्पिक रूप से उभर रही हैं। कैसेट पर रिकॉर्ड की गई सामग्री शिक्षा प्रदान करने का सबसे लोकप्रिय माध्यम बन गई है।

ब्रेल राइटर : यह ब्रेल में नोट्स लेने के लिए एक उर्ध्व लेखन मशीन है। ब्रेल डिस्प्ले और ब्रेल प्रिंटर को ब्रेल आउटपुट प्राप्त करने के लिए इस मशीन से जोड़ा जा सकता है।

ब्रेल सर्फ फोर : यह एक खास किस्म का वेब ब्राउजर है जो वेबसाइट्स की सामग्री को सामान्य टेक्स्ट के रूप में दिखाता है और उसे पढ़कर सुना सकता है।

श्रवण बाधित दिव्यांगों की शैक्षिक आवश्यकताओं के लिए सहायक तकनीकी एवं प्रौद्योगिकी

'श्रवण बाधित' जिसे सुनने में कठिनाई या कम सुनाई देता है। इन बच्चों को अपनी दिव्यांगता के कारण स्कूली शिक्षा में कई समस्याओं का सामना करना पड़ता है और इस प्रकार निम्नलिखित सहायक उपकरणों की आवश्यकता होती है—

हियरिंग एड्स : यह श्रोता द्वारा पहना जाने वाला एक छोटा उपकरण है। यह शांत वातावरण में सबसे अच्छा काम करता है।

फ्रीक्वेंसी-मॉड्युलेटेड एंप्लीफिकेशन सिस्टम : इसे श्रवण प्रशिक्षक के रूप में भी जाना जाता है, यह ट्रांसमिशन डिवाइस शिक्षक और छात्र

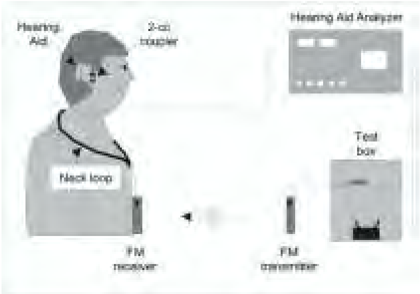

के बीच सीधा संबंध बनाता है। यह पृष्ठभूमि शोर कम कर, सीखने की प्रक्रिया को सुचारु रूप से जारी रखता है।

इन्फ्रारेड सिस्टम : इन्फ्रारेड सिस्टम ध्वनि को स्पष्ट रूप में संचारित करते हैं।

इंडक्शन लूप सिस्टम : बड़े समूह क्षेत्रों के लिए उपयोग किए जाते हैं।

यह सिस्टम श्रवण यंत्रों के साथ काम करता है। एक इंडक्शन लूप वायर एक माइक्रोफोन से जुड़ता है।

लाइव स्पीच कैप्शनिंग : जब कोई बात करता है, तो यह कंप्यूटर मॉनीटर पर टेक्स्ट फॉर्म के रूप में प्रदर्शित होता है।

भाषा विश्लेषक/स्क्रीन रीडर्स : इस प्रणाली में कंप्यूटर स्क्रीन पर उपयोगकर्ता द्वारा टाइप किए गए पाठ अथवा स्कैन किए गए पाठ को जोर से पढ़ता है।

भाषण दिव्यांगों की शैक्षिक आवश्यकताओं के लिए सहायक तकनीकी एवं प्रौद्योगिकी

भाषण और भाषा की दुर्बलता वाले छात्रों के लिए, सहायक प्रौद्योगिकी के प्रमुख प्रकार प्रदान किए जा सकते हैं–

फर्स्ट वर्ड : कार्यक्रम उच्च आवृत्ति वाली संज्ञाओं को सिखाने के लिए संश्लेषित भाषण के साथ चित्रमय प्रस्तुतियों का उपयोग करता है।

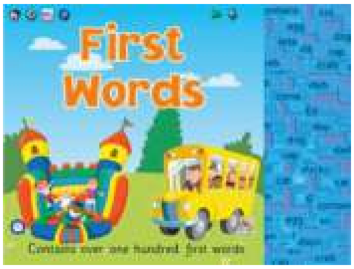

ऑग्मेंटेटिव या वैकल्पिक संचार (एएसी) : यह सांकेतिक भाषा, प्रतीकों, चित्रों और विभिन्न संचार बोर्डों का उपयोग करता है। यह सिस्टम भाषण संबंधी विकारों वाले बालकों में आत्मविश्वास और आत्मसम्मान को भी बढ़ाता है।

पिक्चर एक्सचेंज कम्युनिकेशन सिस्टम : संचार बोर्डों के लिए एक समान विधि है और इसे विशेष रूप से ऑटिज्म वाले बच्चों और संचार विकार वाले व्यक्तियों के लिए विकसित किया गया है।

कंप्यूटर इलेक्ट्रॉनिक भाषण डिवाइस : कई कंप्यूटर-आधारित सॉफ्टवेयर प्रोग्राम उपलब्ध हैं जो सीखने वाले को भाषण और मौखिक कौशल विकसित करने में मदद कर सकते हैं।

शारीरिक रूप से कमजोर दिव्यांगों की शैक्षिक आवश्यकताओं के लिए सहायक तकनीकी एवं प्रौद्योगिकी

शारीरिक कमजोरी वाले छात्रों में शारीरिक दोष होता है जो मांसपेशियों, जोड़ों, हड्डियों के सामान्य कार्य से रोकता है जो सीखने की उनकी क्षमता को प्रभावित करते हैं और उन्हें अनुकूलित और विशेष सामग्री या उपकरण की आवश्यकता हो सकती है। इस प्रकार की दिव्यांगता के लिए आवश्यक सहायक तकनीकें हैं–

कैमरा माउस : जो लोग दिव्यांगता के कारण अपने हाथों से माउस नहीं चला सकते, वे कैमरा माउस के जरिए वही काम अपने सिर से कर सकते हैं।

क्लिक-एन-टाइप : यह मॉनीटर स्क्रीन पर दिखने वाला वर्चुअल की-बोर्ड है जिसे माउस आधारित टाइपिंग के लिए प्रयोग किया जा सकता है।

कंप्यूटर एक्सेसिबिलिटी : आईटी की दुनिया में, एक्सेसिबिलिटी अकसर हार्डवेयर और सॉफ्टवेयर का वर्णन करती है जो दिव्यांग लोगों का अनुभव करने में मदद करते हैं। ट्रैक बॉल, हेड ट्रैकर और टच स्क्रीन कंप्यूटर माउस के लिए उपयुक्त विकल्प के रूप में काम कर सकते हैं।

भाषा पहचान प्रणाली : यह प्रणाली उपयोगकर्ताओं को शब्दों और अक्षरों को बोलकर कंप्यूटरों को नियंत्रित करने की अनुमति देती है, जहाँ एक विशेष प्रणाली को विशिष्ट आवाजों को पहचानने के लिए 'प्रशिक्षित' किया जाता है।

दैनिक जीवन शैली उपकरण : शारीरिक रूप से कमजोर छात्रों को स्कूलों में आत्म-देखभाल और व्यक्तिगत स्वच्छता के उद्देश्य की

पूर्ति के लिए स्कूल में कुछ सुविधाएँ होनी चाहिए, जैसे—स्कूल के शौचालय में ऊँचाई, समायोज्य काउंटर और सिंक, रैंप, इलेक्ट्रॉनिक व्हीलचेयर।

सीखने की अक्षमता वाले दिव्यांगों की शैक्षिक आवश्यकताओं के लिए सहायक तकनीकी एवं प्रौद्योगिकी

सीखने की अक्षमता न्यूरोलॉजिकल-आधारित समस्या है। यह पढ़ने, लिखने या गणित जैसे बुनियादी कौशल सीखने में समस्या पैदा करता है। इस प्रकार के दिव्यांगों के लिए आवश्यक उपकरण हैं—

संक्षिप्त विस्तारक : इस प्रकार के टूल से उन लोगों को लाभ होता है जो लेखन के साथ संघर्ष करते हैं।

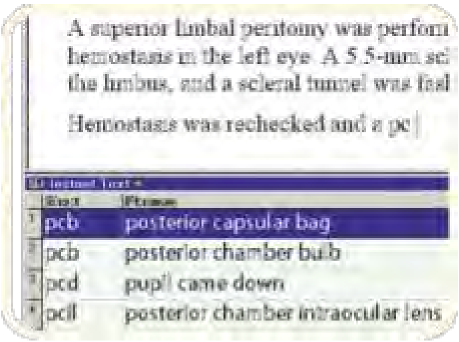

पेपर-आधारित कंप्यूटर पेन : इस उपकरण की मदद से लोग ऑडियो रिकॉर्ड कर सकते हैं और बाद में पेन को छूकर रिकॉर्ड किए गए व्याख्यान के किसी भी भाग को सुन सकते हैं। यह उपकरण लिखने, सुनने, स्मृति और पढ़ने में सहायक है।

इलेक्ट्रॉनिक गणित कार्यपत्रक : इलेक्ट्रॉनिक गणित कार्यपत्रक सॉफ्टवेयर प्रोग्राम है जो उपयोगकर्ता को कंप्यूटर स्क्रीन की मदद से गणितीय समस्याओं के माध्यम से व्यवस्थित, संरेखित और काम करने में मदद कर सकता है। ऑनस्क्रीन दिखाई देने वाली किसी भी चीज को स्पीच सिंथेसाइजर के जरिए भी जोर से पढ़ा जा सकता है। यह उन शिक्षार्थियों के लिए मददगार हो सकता है जिन्हें पेंसिल और पेपर के साथ गणित की समस्याओं को संरेखित करने में परेशानी होती है।

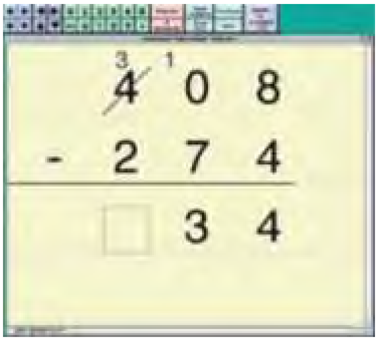

फ्री-फॉर्म डेटाबेस सॉफ्टवेयर : यह उपकरण शिक्षार्थी को लंबे ई-नोट्स और प्रासंगिक जानकारी सृजन और संगृहीत करने में मदद करता है।

सहायक प्रौद्योगिकी में बहुत से उत्पाद शामिल हैं जिनमें विभिन्न प्रकार के सॉफ्टवेयर और हार्डवेयर एप्लिकेशन, इनपुट डिवाइस शामिल हैं जो दिव्यांगों को स्वतंत्र रूप से कठिन कार्य करने की अनुमति देता है।

अभी भी कुछ बाधाएँ हैं जो इन महान प्रौद्योगिकियों का लाभ लेने वाले दिव्यांग व्यक्तियों के रास्ते में आती हैं, जैसे—

- शिक्षकों और छात्रों का रवैया,
- अपर्याप्त प्रशिक्षण, जागरूकता की कमी,
- उत्पादों की उच्च लागत आदि।

लेकिन इच्छा के साथ उपयुक्त प्रयास और सकारात्मक दृष्टिकोण से इन बाधाओं को पार किया जा सकता है।

माधव राव सप्रे स्मृति समाचार पत्र संग्रहालय एवं शोध संस्थान

वह 14 फरवरी, 1982 की रात थी। मध्य प्रदेश के करीब डेढ़ सौ पत्रकार इटारसी पहुँचे थे। वहाँ आंचलिक पत्रकार संघ का छठवाँ सालाना अधिवेशन था। इसमें शिरकत करने नवभारत टाइम्स के प्रधान संपादक राजेंद्र माथुर, धर्मयुग के सहायक संपादक गणेश मंत्री समेत देश के अनेक शिखर पत्रकार और संपादक पहुँचे थे। मैं भी वहाँ 1980 का माखनलाल चतुर्वेदी पत्रकारिता पुरस्कार लेने पहुँचा था। दिन में आयोजन के बाद हम सब लोग शाम को गपशप कर रहे थे। उसी दरम्यान आंचलिक पत्रकार संघ के कर्ता-धर्ता श्री विजय दत्त श्रीधर ने माधव राव सप्रे समाचार पत्र संग्रहालय की अपनी योजना का जिक्र किया। सभी ने इसकी तारीफ की। बात आई-गई हो गई।

दो वर्ष बीते। मैं उन दिनों नई दुनिया इंदौर में सह संपादक था। 19 जून, 1984 को टेलीप्रिंटर पर माधवराव सप्रे समाचार पत्र संग्रहालय के प्रारंभ होने की खबर आई। उस दिन भोपाल के कमला पार्क में इस संग्रहालय ने अपनी आँखें खोली थीं। नगर निगम ने इस यज्ञ में अपनी एक आहुति डाली थी। इस तरह श्रीधरजी के सपने ने आकार लेना शुरू कर दिया था। एक दिन मैं भी श्रीधरजी से मिलने कमला पार्क जा पहुँचा था। उन्होंने योजना के बारे में विस्तार से बताया। वे उत्साह और ऊर्जा से भरे हुए थे। उन्होंने इंदौर संभाग के कुछ लोगों के नाम और पते दिए, जिनके पास पत्र-पत्रिकाओं का दुर्लभ संकलन था और वे सप्रे संग्रहालय को भेंट करना चाहते थे। लौटकर मैंने उन लोगों से संपर्क किया। उन लोगों में से कुछ ने यह सामग्री बाद में संग्रहालय को सौंपी। अगले साल में राजेंद्र माथुरजी के निर्देश पर राजस्थान से नवभारत टाइम्स का संस्करण प्रारंभ करने जयपुर जा पहुँचा। वहाँ भी श्रीधरजी के संपर्क में रहा। उनके पत्र आते थे। उनमें राजस्थान से संग्रहालय के लिए शब्दों के दुर्लभ खजाने को जुटाने की बात होती थी। मैं वहाँ से भी कुछ-कुछ कोशिश करता रहा।

सन् 1991 में मेरी पारी भोपाल के दैनिक नई दुनिया के संग बतौर समाचार संपादक शुरू हुई और एक बार फिर श्रीधरजी के सक्रिय संपर्क में आया। तब

राजेश बादल

जन्म : 01 मार्च 1959, छतरपुर, मध्य प्रदेश। बचपन आदिवासी गाँवों में बीता।

शिक्षा : सागर विश्वविद्यालय से बी.एस-सी. एवं भारतीय इतिहास में प्रथम श्रेणी में एम.ए. की उपाधि।

राज्यसभा टेलीविजन में पूर्व एक्जीक्यूटिव डायरेक्टर। अब स्वतंत्र लेखन।

लेखन : जनसत्ता, नई दुनिया एवं नवभारत टाईम्स के अलावा वॉयस ऑफ इंडिया, इंडिया न्यूज, बैग फिल्म्स और आज तक चैनल से जुड़े रहे। अनेक साहित्यिक और सांस्कृतिक विभूतियों पर फिल्में बनाईं। सौ से ज्यादा वृत्तचित्र, दस हजार से ज्यादा टीवी रिपोर्ट्स, पाँच हजार से ज्यादा आलेख, बीस से ज्यादा विश्वविद्यालयों में अतिथि व्याख्यान। अमेरिका के अनेक शहरों में व्याख्यान और हिंदी के लिए समर्पित।

सम्मान : एक दर्जन से अधिक बार पुरस्कृत।

संपर्क :

ई-मेल– rstv.rajeshbadal@gmail.com

तक संग्रहालय नरेन्द्रदेव पुस्तकालय के एक बड़े हॉल में जा पहुँचा था। इसे शब्द शिल्पियों, पत्रकारों, लेखकों, संपादकों और समाज के अन्य वर्गों का सहयोग मिलने लगा था। कह सकते हैं कि शनैः-शनैः यह एक आंदोलन बनता जा रहा था। भोपाल आने के बाद जब मैं

"संग्रहालय की अलमारियों और गलियारे में जब दो शताब्दियों के समाचार पत्र-पत्रिकाओं और पुस्तकों को करीने से लगा पाता हूँ तो इस केंद्र के प्रति श्रद्धा से भर जाता हूँ। सहेजकर रखी गई इस अथाह सामग्री के बारे में क्या-क्या बताऊँ। कौन-सा अखबार या पत्रिका यहाँ नहीं है। आप कोई भी नाम लीजिए—पाँच मिनट में आपके सामने हाजिर हो जाएगा। हिंदी, अंग्रेजी, उर्दू, संस्कृत, मराठी, गुजराती, बांग्ला और भी अनेक भाषाओं के 27 हजार से अधिक शीर्षक वाले अखबार यहाँ हैं और करीब पौने दो लाख किताबें तथा संदर्भ ग्रंथ संग्रहालय की शान में चार चाँद लगा रहे हैं। कोई तीन सौ शिक्षाविदों, साहित्यकारों और संपादकों के 26,000 पत्र यहाँ आप देख सकते हैं तथा 3,000 से ज्यादा पांडुलिपियाँ सुरक्षित हैं।"

श्रीधरजी से मिला तो उनके चेहरे पर संग्रहालय के विस्तार को लेकर खुशी पढ़ी जा सकती थी। हालाँकि एक चिंता भी उन्हें हो रही थी। जिस रफ्तार और मात्रा में प्रदेश और देश के अन्य राज्यों से सामग्री प्राप्त हो रही थी, उसे देखते हुए यह हॉल भी चंद महीनों में भर जाने वाला था। श्रीधरजी चाहते थे कि संग्रहालय अपनी जमीन पर अपने ही भवन से संचालित हो। संग्रहालय का अपना भवन होने पर पत्रकारिता संबंधी अन्य रचनात्मक गतिविधियों के लिए भी स्थान निकल आएगा। कुछ समय बाद उनके प्रयास रंग लाए और यह इच्छा भी पूरी हो गई। 1995 में राज्य सरकार ने सप्रे संग्रहालय के लिए भोपाल की पत्रकार कॉलोनी के समीप ही एक भूखंड आवंटित कर दिया। सिर्फ एक साल में श्रीधरजी ने इस जमीन पर संग्रहालय शुरू करने लायक निर्माण कार्य पूरा करा दिया। इस तरह 1996 में यह संग्रहालय अब अपनी भूमि पर प्रारंभ हो गया था। मुझे याद है, जिस दिन इसका औपचारिक लोकार्पण हुआ, मैं 'आज तक' का विशेष संवाददाता था। इसकी खबर ने 'आज तक' की मुख्य शीर्षक समाचार-कथाओं में स्थान पाया था। 'आज तक' के तत्कालीन संपादक सुरेंद्र प्रताप सिंह ने इस संग्रहालय के निर्माण पर प्रसन्नता जाहिर की थी और मुझसे कहा था कि श्रीधरजी तक मेरी शुभकामनाएँ पहुँचा दीजिए।

समय गुजरता रहा। संग्रहालय बढ़ता रहा। देश भर से दुर्लभ सामग्री आने लगी। उसे सम्मानजनक स्थान देने के लिए भूतल के बाद पहली मंजिल बनानी पड़ी। श्रीधरजी सीमित संसाधनों के बावजूद संग्रहालय को विराट आकार देने का काम करते रहे। समर्पित सहयोगियों की एक बड़ी टीम उनके साथ थी। इसके अलावा इस संग्रहालय ने पत्रकारिता से संबद्ध अनेक रचनात्मक गतिविधियाँ भी प्रारंभ कर दीं। एक वृहत शोध केंद्र के रूप में इसका विकास हुआ और समूचे भारत से पत्रकारों, संपादकों और शोधार्थियों के लिए यह एक तीर्थ जैसा बन गया। इसी बीच 2005 में मुझे अमेरिका जाना पड़ा। वहाँ मैं पत्रकारिता की कुछ गतिविधियों का अध्ययन करने गया था। यात्रा के दरम्यान कोलंबिया और मिसूरी भी गया। ये दोनों पत्रकारिता के क्षेत्र में बड़े सम्मानित और प्रतिष्ठित संस्थान हैं और सौ बरस से भी अधिक आयु पार कर चुके हैं। मुझे आश्चर्य हुआ, जब कोलंबिया में उनके एक भारतीय प्रोफेसर श्री जैन ने मुझसे सप्रे संग्रहालय के बारे में पूछा। मैंने उन्हें विस्तार से बताया कि कैसे श्रीधरजी ने अकेले मंजिल की ओर कदम बढ़ाना शुरू किया और कैसे लोग साथ आते गए, कारवाँ बनता गया। मिसूरी संस्थान में मुझे एक संक्षिप्त व्याख्यान का अवसर मिला और मैंने आंचलिक पत्रकार संघ की कथा तथा सप्रे संग्रहालय के बारे में बताया तो वहाँ पत्रकारिता के छात्रों तथा अध्यापकों ने अनेक सवाल किए और संग्रहालय के बारे में अपनी जिज्ञासा प्रकट की। मैं उनकी ललक को देखकर चकित था।

बाद के 15 वर्ष मेरे पूर्णकालिक दिल्ली प्रवास के रहे, लेकिन श्रीधरजी से नियमित संपर्क और संवाद बना रहा। इस अवधि में श्रीधरजी ने अनेक कार्यक्रमों के जरिए सप्रे संग्रहालय की गतिविधियों से मुझे जोड़े रखा। मैं आता और हर बार सप्रे संग्रहालय से एक नई रचनात्मकता तथा ऊर्जा के साथ लौटता। आज जब सुनता हूँ कि यह ज्ञान तीर्थ पाँच करोड़ पृष्ठों से भी अधिक का भंडार समेटे हुए है, तो गर्व से भर जाता हूँ। संग्रहालय की अलमारियों और गलियारे में जब दो शताब्दियों के समाचार पत्र-पत्रिकाओं और पुस्तकों को करीने से लगा पाता हूँ तो इस केंद्र के प्रति श्रद्धा से भर जाता हूँ। सहेजकर रखी गई इस अथाह सामग्री के बारे में क्या-क्या बताऊँ। कौन-सा अखबार या पत्रिका यहाँ नहीं है। आप कोई भी नाम लीजिए—पाँच मिनट में आपके सामने हाजिर हो जाएगा। हिंदी, अंग्रेजी, उर्दू, संस्कृत, मराठी, गुजराती, बांग्ला और भी अनेक भाषाओं के 27 हजार से अधिक शीर्षक वाले अखबार यहाँ हैं और करीब पौने दो लाख किताबें तथा संदर्भ ग्रंथ संग्रहालय की शान में चार चाँद लगा रहे हैं। कोई तीन सौ शिक्षाविदों, साहित्यकारों और संपादकों के 26,000 पत्र यहाँ आप देख सकते हैं तथा 3,000 से ज्यादा पांडुलिपियाँ सुरक्षित हैं। क्या यह आँकड़ा चौंकाने वाला नहीं लगता कि इस संस्थान ने देश और दुनिया के लगभग 1,200 शोधार्थियों को एम.फिल., पी-एच.डी. और डी.लिट्. उपाधियाँ हासिल करने में संदर्भ-सहयोग दिया है। अनेक विश्वविद्यालयों ने इस विराट संस्थान को एक प्रामाणिक शोध केंद्र के तौर पर मान्यता प्रदान की है। आज के दौर में विश्वविद्यालय साल में कुछ पी-एच.डी. पूरी कराकर गर्वबोध से भर जाते हैं, मगर सप्रे संग्रहालय बिना अपनी पीठ थपथपाए खामोशी से मिशन की तरह अपना काम कर रहा है। कौन जानता था कि मात्र 73

पत्र-पत्रिकाओं के 350 अंकों से शुरू हुआ संग्रहालय एक दिन एशिया का सबसे बड़ा समाचार पत्र संग्रहालय बन जाएगा, वह भी एक मूर्धन्य पत्रकार की याद में।

संग्रहालय की सबसे बड़ी देन भारतीय पत्रकारिता कोश को माना जा सकता है। दो खंडों में विभाजित इस कोश में 1780 से लेकर 1947 तक की पत्रकारिता की कहानी दर्ज है। यह एक ऐसा नायाब दस्तावेज श्रीधरजी ने हिंदुस्तान के पत्रकारों को सौंपा है जो सदियों तक एक प्रामाणिक आधार ग्रंथ के रूप में मौजूद रहेगा। इस ग्रंथ को पाठकों के सामने लाने में श्री विजय दत्त श्रीधर को 15 साल लगे। भारतीय पत्रकारिता यकीनन इसके लिए उनकी ऋणी है। इसी तरह उन्होंने 1885 से लेकर 2010 के बीच प्रकाशित हुए समाचार पत्रों के प्रवेशांक में प्रकाशित पहले संपादकीय पर एक कालजयी ग्रंथ का उपहार हम पत्रकारों को दिया है। यह इस मायने में कालजयी है कि प्रथम अंक का संपादकीय वास्तव में उस दौर के देश और समाज का प्रतिबिंब हुआ करता था, जो उसके साथ संबंधित अखबार के रिश्ते को भी रेखांकित करता था। दरअसल पहले संपादकीय पर आज तक कोई शोध हुआ ही नहीं था। इस नाते यह पुस्तक अपने आप में एक संदर्भ ग्रंथ से कम नहीं है।

सप्रे संग्रहालय ने 'आंचलिक पत्रकार' नामक पत्रिका का प्रकाशन भी अपने जन्म से ही किया है। मुफस्सिल पत्रकारों के लिए यह अनूठी पत्रिका 1981 से ही श्रीधरजी निकाल रहे थे, लेकिन जब संग्रहालय प्रारंभ हुआ तो फिर इसका जिम्मा भी संग्रहालय ने ले लिया। आज सैकड़ों आंचलिक संवाददाताओं के लिए यह पत्रिका मार्गदर्शक पत्रिका बनी हुई है। मैं स्वयं भी सितंबर 1981 से इस पत्रिका को लगातार पढ़ रहा हूँ। इसने मेरे भीतर के पत्रकार को तराशने का काम किया है। संग्रहालय में आप इस पत्रिका के करीब 40 साल के सफर को देख सकते हैं। इसके अलावा अनेक राष्ट्रीय और क्षेत्रीय समाचार पत्रों के दुर्लभ अंक भी यहाँ उपलब्ध हैं। भारत के आजाद होने की खबर, महात्मा गांधी की हत्या का समाचार, चाँद की धरती पर इनसानी कदम, बांग्लादेश का जन्म और पाकिस्तान का बँटवारा, इंदिरा गांधी की शहादत, भारत का परमाणु परीक्षण और राजीव गांधी की हत्या से लेकर कोरोना के भयावह और विकराल रूप का ब्यौरा देते अखबार भी आप संग्रहालय में देख सकते हैं।

यह संग्रहालय अपने सामाजिक सरोकारों और जन चेतना के प्रति भी संवेदनशील रहा है। एक तरफ वह लोक परंपराओं और सामाजिक पहचान की दिशा में बुंदेलखंड को एक नए कोण से देखता है तो दूसरी ओर पत्रकारिता में आधी आबादी यानी महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित करने की पहल भी करता है। पर्यावरण चेतना जगाने के लिए अभियान छेड़ता है तो राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद् और विज्ञान प्रसार जैसी संस्थाओं के जरिए विज्ञान पत्रकारिता और लेखन की अलख जगाता है। भारतीय संविधान में इस देश के नागरिकों में वैज्ञानिक सोच विकसित करने का संकल्प लिया गया है। विडंबना यह है कि 70 वर्षों में विज्ञान को जन-जन तक पहुँचाने और वैज्ञानिक दृष्टिकोण से दिमागी उथल-पुथल मचाने वाला ठोस काम नहीं हो सका है। राहत की बात है कि यह अनूठा संस्थान इस दिशा में अपने सीमित प्रयासों के साथ जुटा हुआ है।

भारत की पत्रकारिता की बात चले और उसमें महात्मा गांधी का उल्लेख नहीं आए, यह नामुमकिन है। गांधीजी ने जिस रास्ते पर चलकर हिंदुस्तान को आजादी दिलाई, उस नाते हम सब उन्हें राष्ट्रपिता के रूप में याद करते हैं और उनके प्रति कृतज्ञता के भाव से भर जाते हैं। राष्ट्रपिता एक बहुत अच्छे पत्रकार और संपादक थे। उन्होंने 55 साल पत्रकारिता की। इसलिए बीते साल जब महात्मा गांधी के जन्म की 150वीं जयंती पूरे विश्व में मनाई गई तो सप्रे संग्रहालय भी पीछे नहीं रहा। सच तो यह है कि चंपारण सत्याग्रह के सौ बरस पूरे होने के साथ ही इस पवित्र तीर्थ ने महात्मा गांधी को याद करना शुरू कर दिया था। पिछले तीन साल में महात्मा गांधी की

एक जमाने में पत्र-पत्रिकाओं की जिल्द बनाकर सुरक्षित रखा जाता था। संग्रहालय ने शुरुआत में यही परंपरागत तकनीक अपनाई। लेकिन जैसे-जैसे आधुनिक संचार साधन और तकनीक का विकास होता गया, संग्रहालय ने भी आधुनिकतम तरीकों से पांडुलिपियों, पुस्तकों, दुर्लभ अंकों और दस्तावेजों को सहेजना प्रारंभ कर दिया। इस काम में मध्य प्रदेश के जनसंपर्क विभाग, राष्ट्रीय पांडुलिपि मिशन और इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र ने संग्रहालय की

पत्रकारिता और उसके सरोकारों पर जितने कार्यक्रम इस अकेले संस्थान में हुए, उतने देश में कहीं भी किसी एक संस्था ने नहीं किए। हकीकत यह है कि गांधी इस संग्रहालय के प्राण पुरुष हैं। वे यहाँ के जर्रे-जर्रे में धड़कते हैं। इसके पीछे स्वयं श्रीधरजी के गांधीवादी संस्कार हैं, जो उन्हें अपने स्व. पिता सुंदर लाल श्रीधरजी से मिले हैं। उनके पिता खुद भी एक बड़े गांधीवादी विचारक थे।

जब संग्रहालय प्रारंभ हुआ तो श्रीधरजी के मन में शायद केवल पत्र-पत्रिकाओं के संग्रह की बात रही होगी। इसका कारण यह है कि उन दिनों रेडियो प्रसारण के क्षेत्र में निजी कंपनियों को अनुमति नहीं दी गई थी और न ही टेलीविजन पत्रकारिता का आज की तरह विकास हुआ था। लेकिन जैसे-जैसे ब्रॉडकास्ट और टीवी पत्रकारिता ने हिंदुस्तान में अपने पैर पसारे तो संग्रहालय का एक इलेक्ट्रॉनिक प्रखंड भी जरूरी लगने लगा। इस काम में संग्रहालय को अपने शुभचिंतकों से बड़ा सहयोग मिला। उनकी बदौलत आज 200 से अधिक रेडियो सेट, ग्रामोफोन रिकार्ड्स, टेलिफोन, टाइपराइटर, टेलीप्रिंटर और कैमरे संग्रहालय की संचार दीर्घा में हैं। इनमें से कुछ उपकरण तो नए पत्रकारों के लिए अजूबे जैसे हैं। आज व्हाट्स अप, फेसबुक और डिजिटल फोटो तकनीक के दौर में कौन याद करेगा कि कभी फोटो एक रील में बंद होती थी। वह रील अखबार के दफ्तर में पहुँचती थी। फिर डार्करूम में उसका प्रिंट बनता था। इसके बाद फिर फोटो से ब्लॉक बनता था। उसके बाद कहीं पेज बनता था और प्रिंट होता था। आज तो पलक झपकते ही फोटो हजारों किलोमीटर दूर भेज दी जाती है। इस नजर से संग्रहालय की संचार दीर्घा अद्भुत और बेमिसाल है।

सहायता की है। इन संस्थाओं की मदद से इस अनमोल खजाने का डिजिटलाइजेशन कराने का काम भी किया जा रहा है। इस तरह यह धरोहर हमेशा के लिए सुरक्षित हो जाएगी। इसका लाभ नई नस्लें इसलिए भी उठा पाएँगी कि उनके मनमाफिक फॉर्मेट में उन्हें सामग्री उपलब्ध होगी। अगर वे मोटे-मोटे ग्रंथ पढ़ने से बचना चाहते हैं (जैसा कि आजकल हो रहा है) तो उन्हें सहूलियत हो जाएगी।

वैसे तो श्री विजय दत्त श्रीधर के लिए यह एक वैचारिक आंदोलन या मिशन ही है और उन्होंने कभी इस काम के बदले कोई सम्मान या पुरस्कार की अपेक्षा नहीं की। वास्तव में वे उस पीढ़ी के पत्रकार हैं, जो असली कर्मयोगी कहलाती थी। उन्होंने अपनी नैतिक, पेशेवर, सामाजिक और राष्ट्रीय जिम्मेदारी समझते हुए कोहिनूर जैसी इस विरासत को हमारे सामने प्रस्तुत किया है। लेकिन समाज और देश भी अपने नजरिए से ऐसे कर्मयोगियों का मूल्यांकन करता है। श्रीधरजी को भारत सरकार ने उनके इस भागीरथी अनुष्ठान के लिए पद्मश्री से सम्मानित किया तो संस्कृति मंत्रालय ने राष्ट्रीय वेदव्यास सम्मान से माधव राव सप्रे स्मृति समाचार पत्र संग्रहालय एवं शोध संस्थान को नवाजा है। जब ऐसे मनीषियों के प्रयासों को समाज और राष्ट्र की ओर से प्रतिष्ठा दी जाती है तो यह संस्कार के रूप में आने वाली अनेक पीढ़ियों तक पहुँचाने का सिलसिला बन जाता है। मजरूह सुल्तानपुरी का यह शेर श्रीधरजी पर पूरी तरह लागू होता है कि—"मैं अकेला ही चला था जानिब-ए-मंजिल मगर, लोग आते गए और कारवाँ बनता गया।"

दिव्यांगों के लिए स्वावलंबन

"मैडमजी! यहाँ हमें घर जैसा... घर से भी अधिक अच्छा लगता है। मैडम-सर लोग बहुत अच्छे हैं और मैडमजी, हमारे सारे दोस्त भी बहुत अच्छे हैं। हमें कभी अकेला नहीं छोड़ते। इस वजह से हमको कोई परेशानी नहीं होती।" यह कथन है सत्यवती कॉलेज (प्रातः) के तृतीय वर्ष के दृष्टिहीन छात्र उमाशंकर का, जो छत्तीसगढ़ के जंगल से घिरे गाँव का वासी है। उमाशंकर जैसे जाने कितने ही बच्चे बिहार और उत्तर प्रदेश के भिन्न-भिन्न इलाकों से आए हैं और नियमित रूप से कॉलेज आ रहे हैं और लॉकडाउन के दौरान, कॉलेज से प्राप्त होने वाली जीवंतता का अभाव महसूस कर रहे हैं। सौ से अधिक बच्चे, जो दिल्ली से बाहर के हैं, गाँव या कस्बे या छोटे शहर से आए हैं और यहाँ अपने परिवार/समाज जैसा वातावरण पाकर खुश हैं। दिव्यांग छात्र-छात्राओं में दृष्टिहीन किशोरों/युवाओं की संख्या अधिक है और इनकी मेधा विस्मित करने वाली है।

सत्यवती कॉलेज (प्रातः) में बच्चों को सहजता से कॉरिडोर में घूमते, हँसते-खिलखिलाते, गाते-वाद्य यंत्र बजाते, किसी विषय पर बहस करते या किसी दूसरे कॉलेज के साहित्यिक कार्यक्रम में हिस्सा लेने की तैयारी को लेकर दोस्तों से बातचीत करते देखा जा सकता है। कभी किसी का चेहरा मायूस नहीं दिखता। कोई उदास हो भी तो उनके सहपाठी उन्हें ज्यादा समय तक उदास रहने नहीं देते। इस कारण उन्हें, कक्षा में बड़ी संख्या में उपस्थित होते और खेल के मैदान में अभ्यास करते देखा जा सकता है। इनमें छात्राओं की संख्या भी बहुत अधिक है। ऑफिस रिकॉर्ड के मुताबिक, प्रतिवर्ष दिव्यांग छात्र-छात्राओं की संख्या में बढ़ोतरी हुई है। इसका एक कारण तो ऐसे छात्रों के दाखिले के लिए कॉलेज प्रशासन की ओर से बरती जाने वाली उदारता और जुटाई गई सुविधाएँ हैं।

दरअसल, दिल्ली विश्वविद्यालय के प्रायः सभी कॉलेजों में दिव्यांग छात्र के अध्ययन का प्रावधान है। पी.डब्ल्यू.डी. के तहत उनके लिए हर कॉलेज में कुछ आरक्षित सीटें भी होती हैं। मगर उनकी अपनी सीमा होती है। सत्यवती कॉलेज (प्रातः) ने कभी किसी दिव्यांग छात्र को दाखिला लेने से वंचित नहीं किया। पढ़ाई के दौरान यदि किसी को अर्थाभाव के कारण परीक्षा फीस भरने में दिक्कत आती है तो कॉलेज प्रशासन उनकी फीस के पैसे भी अपने फंड से देता है। यों भी उनकी सालाना फीस नाममात्र की होती है।

इन विशिष्ट बच्चों की भावनात्मक, शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक एवं अन्य प्रकार के विकास तथा अतिरिक्त देखभाल के लिए पूर्व प्राचार्या डॉ. मंजुला दास द्वारा 'समान अवसर प्रकोष्ठ' (ईओसी) विभाग की सक्रियता हेतु गठित समिति के सदस्य प्रशंसा के पात्र हैं। इस समिति में प्रति दो वर्ष पर सभी विभागों के प्राध्यापकों में से सदस्य और प्रभारी चुने जाते हैं। इसी प्रकार एनएसएस के भी प्रभारी चुने जाते हैं जिन्हें दिव्यांग छात्र-छात्राओं की अतिरिक्त मदद का दायित्व सौंपा जाता है।

दिव्यांग/दृष्टिहीन बच्चों के लिए 'समान अवसर प्रकोष्ठ' विभाग को गति देने में पहला महत्वपूर्ण नाम आता है पूर्व प्राचार्य डॉ. शम्सुल इस्लाम का, जिन्होंने तत्कालीन प्राध्यापक-प्राध्यापिकाओं का इस ओर ध्यान आकर्षित किया और दिव्यांग बच्चों की सुविधाओं के लिए कार्य करने-करवाने आरंभ किए। 2010 से पूर्व ही ईओसी विभाग ने सक्रिय भूमिका निभानी शुरू कर दी थी। इन बच्चों की प्रतिभा उभारने और उनकी प्रतिभा व योग्यता को राष्ट्रीय स्तर

डॉ. आरती स्मित

संप्रति-संलग्नता : स्वतंत्र लेखन, कविता, कहानी, आलोचना, समीक्षा, शैक्षिक विमर्शकार एवं सलाहकार के रूप में अनेक संस्थानों से संबद्धता, आकाशवाणी नाटक कलाकार, रेडियो नाटक, धारावाहिक एवं रूपक लेखन तथा विविध केंद्रों से प्रसारण, कविता, कहानी, साक्षात्कार द्वारा आकाशवाणी एवं दूरदर्शन से संबद्धता।

व्यवसाय : विविध संस्थानों के लिए स्वतंत्र रूप में अनुवाद, संपादन, समीक्षा; निर्देशन-प्रबंधन-बाल-विभाग, साहित्यायन प्रकाशन। महासचिव : साहित्यायन ट्रस्ट।

संपर्क : ई-मेल : dr.artismit@gmail.com

तक पहुँचाने की सार्थक पहल हुई जो निश्चित रूप से सराहनीय है। इसका जीता-जागता उदाहरण 2010 ई. में कॉमन वेल्थ गेम्स में हिस्सा लेने वाला तृतीय वर्ष का दृष्टिहीन छात्र था, जिसे एथलेटिक्स में अपने उत्तम प्रदर्शन के लिए भारत सरकार की ओर से अर्जुन पुरस्कार मिला। उस छात्र के जीवन में यह सुखद पल, उसकी मेहनत, सत्यवती के तत्कालीन शिक्षकों की उत्प्रेरणा और सहयोग के प्रतिफल के रूप में आया।

ईओसी विभाग द्वारा इन बच्चों के लिए जो विशेष कार्य आरंभ किए गए, उनमें सबसे पहला प्रयास इन बच्चों को आत्मीयता भरा वातावरण देना था। शिक्षक व प्रशासनिक अधिकारी दाखिले के लिए आए बच्चों को विषय चयन में मदद देने के साथ ही यथासंभव हर वह मदद देते, जो उन्हें सहूलियत प्रदान करने के लिए जरूरी समझा जाता। ईओसी विभाग इन खास बच्चों के सर्वांगीण विकास का ध्येय लेकर चल रहा है। प्रतिवर्ष इस विभाग द्वारा गीत-संगीत, भाषण, वाद-विवाद प्रतियोगिता, कई प्रकार के खेल-कूद के कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं। वे छात्र-छात्राओं को एक सुरक्षात्मक व स्वस्थ वातावरण प्रदान करने के साथ ही सामान्य बच्चों के बीच उन्हें घुलने-मिलने में भी मदद देते हैं, कोई भी छात्र/छात्रा किसी भी प्रकार की आवश्यकता या समस्या होने पर अपने प्रभारी से बेझिझक कहने के लिए स्वतंत्र है। यों तो प्रत्येक शिक्षक उनकी मदद के लिए तत्पर दिखते हैं और हर एक का इन बच्चों के प्रति एक कोमल भाव रहता है, बावजूद इसके ईओसी विभाग छोटी-सी समस्या पर भी त्वरित कार्रवाई करता है। 2014-15 में 44 नए बच्चों ने दाखिला लिया। उसके बाद से प्रतिवर्ष इन छात्रों की संख्या बढ़ती ही जा रही है। 2015 में ही इन खास बच्चों के लिए 'उमंग' नामक इंटर कॉलेज फेस्ट भी आयोजित किया गया था। यह शुरुआत थी। फिर तो हर वर्ष साहित्य, कला, संस्कृति और खेल-कूद से संबद्ध कार्यक्रमों को न केवल अनिवार्य रूप से किया जाता है, बल्कि उन्हें बाहर, बड़े मंचों पर भागीदारी निभाने के लिए उत्प्रेरित किया जाता है।

पूर्व प्राचार्या डॉ. मंजुला दास, जिन्होंने कॉलेज को अपने 43 वर्ष दिए और लगभग पाँच वर्षों तक प्राचार्या पद पर बनी रहीं, शम्सुल इस्लाम के साथ सदैव इस क्षेत्र में सक्रिय रहीं और प्राचार्या बनने के बाद उन्होंने इस विभाग को अपेक्षाकृत अधिक समृद्ध किया ताकि 'अंग-विशेष से अक्षम' बच्चों की मेधा के निखार में कमी न हो, बतौर प्राचार्या इसका उन्होंने खास ख़याल रखा। 'दिव्यांग बच्चे सबसे अधिक सत्यवती में आने लगे हैं', इस बात को ध्यान में रखते हुए उन्होंने इन बच्चों के निमित्त प्रशासनिक स्तर पर अन्य कई काम भी किए, कई तरह की सुविधाएँ मुहैया करवाईं, जैसे—नई और पुरानी इमारत में लिफ्ट लगाई गईं, दोनों भवनों को प्रथम तल पर जोड़ दिया गया ताकि इन बच्चों को यदि किसी कक्षा के लिए एक भवन से दूसरे भवन जाना हो तो उन्हें लंबा चक्कर न लगाना पड़े, वे आसानी से लिफ्ट तक जा सकें। इसके साथ ही ग्राउंड फ्लोर के फर्श को समतल करवाया गया। जहाँ-जहाँ एक-दो सीढ़ी थीं, वहाँ उनके लिए रैंप बनवा दिए गए। सभी सुरक्षाकर्मियों को निर्देश दिया गया कि वे इनका खास ख़याल रखें। इसके साथ ही ई-लाइब्रेरी की शुरुआत की गई, ई-जर्नल्स की व्यवस्था, पुस्तक की सीडी और रिकॉर्डर की व्यवस्था की गई ताकि वे कक्षा में पढ़ाए जा रहे विषय को रिकॉर्ड कर सकें। ये बच्चे मोबाइल पर किसी भी विषय के पीडीएफ फॉर्म को सुन सकते हैं। पुस्तकालय में भी इस बात का ध्यान रखा गया और ऐसी व्यवस्था 'ई-पुस्तकालय' के द्वारा दी गई। हिंदी विभाग की वरिष्ठ प्राध्यापिका डॉ. राजरानी शर्मा की इसमें अहम भूमिका रही।

दिल्ली विश्वविद्यालय के अंतर्गत इसी कॉलेज ने सबसे पहले विविध अंगों की अक्षमता से जूझते छात्र का दाखिला लेने की उदारता दिखाई और उसके सहयोग के लिए तमाम कार्य किए। दिल्ली विश्वविद्यालय की मदद से उन सभी बच्चों को लैपटॉप दिया गया,

साथ ही निजी फंड से उनके लिए विशेष सॉफ्टवेयर डलवाए, नए 26 DAISY प्लेयर और कुछ पुराने आईपॉड ठीक कराकर दिए गए। फिर यह प्रतिवर्ष के लिए नियम बन गया।

ईओसी के अंतर्गत डॉ. मंजुला दास द्वारा 2014-15 में स्पोर्ट्स कमेटी गठित की गई जो खेल में रुझान रखने वाले प्रतिभाशाली छात्र-छात्राओं को प्लेयर-किट और सहयोगी उपलब्ध कराती है, साथ ही यथासंभव प्रशिक्षण भी देती है ताकि वे छात्र स्वयं को अलग न महसूस करें। विभिन्न खेलों, जैसे—जूडो, क्रिकेट, दौड़ आदि में इन बच्चों की भागीदारी हो और वह बनी रहे, इस ख़याल से गठित टीम इन बच्चों के लिए खेल और खेल प्रतियोगिता का आयोजन करने की जिम्मेदारी बखूबी निभा रही है। कई नेत्रहीन बच्चे क्रिकेट खेलने बाहर भी जाते हैं। जीत हासिल किए बच्चों की ट्रॉफी प्रदर्शित की जाती है और कॉलेज प्रशासन एवं शिक्षक-गणों द्वारा उन्हें आगे के लिए प्रोत्साहित किया जाता है।

नए भवन निर्माण के बाद एनएसएस के प्रभारी को एक अलग कमरा मुहैया कराया गया और यह दायित्व सौंपा गया कि दिव्यांग बच्चों को पढ़ाई-लिखाई में या अन्य किसी विषय में मदद की आवश्यकता हो तो एनएसएस से जुड़े शिक्षक व छात्रगण उनकी मदद करें। इन खास बच्चों को अतिरिक्त समय देकर अध्ययन में मदद की जाए, असाइनमेंट तथा परीक्षा में एनएसएस के बच्चे इन बच्चों के लिए 'राइटर' का काम करें, इन बातों के लिए खास ताकीद की गई।

यों तो कोई भी छात्र/छात्रा हो, सभी अपने इन मित्रों के किसी भी प्रकार के सहयोग के लिए हर समय साथ लगे रहते हैं। चूँकि यहाँ ब्रेल में उत्तर लिखवाकर जाँच करवा पाना संभव नहीं, इसलिए उन्हें सहयोग के लिए 'राइटर' दिए जाते हैं। डॉ. एस.एस.पी. सिंह के बाद हिंदी विभाग के डॉ. राकेश इस दायित्व का निर्वहन कर रहे हैं।

'हिंदी साहित्य सभा' का आयोजन हो या 'आर्ट एंड कल्चर' का, प्रभारी शिक्षकों एवं कार्यभार सँभालते छात्रों द्वारा इन बच्चों की प्रतिभा को सामने लाने का प्रयास सराहनीय है। कई बच्चे गाते-वाद्ययंत्र बजाते देखे जा सकते हैं। वरिष्ठ लोकगायिका एवं हिंदी प्राध्यापिका डॉ. कमला कौशिक (अब सेवानिवृत्त) स्वयं इन बच्चों को रियाज करवाने में जुटी रहती हैं। यहाँ के बड़े कार्यक्रमों में अन्य बच्चों के साथ दिव्यांग बच्चों को मंच पर बैंड में शामिल ड्रम आदि अन्य कई वाद्ययंत्र बजाते और पूरे आत्मविश्वास के साथ गीत की एकल प्रस्तुति देते देखना निश्चित तौर पर अनोखा अनुभव देता है। इसके साथ ही बीच-बीच में योग और मेडिटेशन की क्लास भी आयोजित की जाती है जिसमें बच्चों को तनावमुक्त रहना सिखाया जाता है।

कक्षा में शेष सहपाठी आगे की पूरी सीट अपने ऐसे दोस्तों के लिए रखते हैं। शिक्षक भी खास ध्यान रखते हैं कि रिकॉर्डिंग में उन्हें कोई परेशानी न हो। शिक्षक या सहपाठियों द्वारा ये बच्चे कभी भी सहानुभूति के पात्र प्रदर्शित नहीं किए जाते, बल्कि प्यार और अपनेपन का रिश्ता ही बनाया और कायम रखा जाता है। दोस्तों की कोशिश होती है कि लिफ्ट में भी उन्हें अकेला न छोड़ा जाए, कोई एक सहपाठी उनके साथ जाए। यह भी एक कारण है कि बच्चे सबके बीच बिलकुल सहज और प्रसन्नचित्त नजर आते हैं।

डॉ. मंजुला ने बताया, "जब कॉलेज जॉइन किया था, तब दिव्यांग छात्रों की संख्या इतनी नहीं थी। मैंने अपने प्रशासनिक कार्यकाल के दौरान इन खास बच्चों की किसी भी तरह की समस्या सुनने के लिए ईओसी विभाग के लिए एक अलग कमरा दिया। समिति गठित की, जिसका उद्देश्य इन खास बच्चों के लिए हरसंभव सुविधाएँ और सहयोग जुटाना है। इसका प्रभार राजनीतिशास्त्र के प्राध्यापक डॉ. राजेन्द्र राठौर, (जो स्वयं दृष्टिहीन थे, पूरे कॉलेज में उनका सम्मान इतना था कि छात्र ही नहीं, प्रत्येक विभाग के शिक्षक भी उनका कहा न टालते थे।) ने बहुत अच्छी तरह सँभाला। आशुतोष पांडे भी दो बार प्रभारी बने और अपने-अपने कार्यकाल में दोनों ने बखूबी ईओसी के उद्देश्य को पूरा किया।"

हिंदी विभाग के सहायक प्रोफेसर तथा ईओसी एवं आर्ट एंड कल्चर सोसाइटी के सदस्य डॉ. अजय कुमार यादव ने जानकारी देते हुए कहा, "प्रभारी का दायित्व दो वर्ष के लिए दिया जाता है। 2020 में राठौरजी की सेवानिवृत्ति के बाद डॉ. जिया लाल यह दायित्व सँभाल रहे हैं, हालाँकि 2020 के कार्यक्रम लॉकडाउन की वजह से बाधित ही रहे, किंतु ईओसी सदैव सक्रिय है। प्राचार्या के सहयोग से अपनी समिति के सदस्यों के साथ मिलकर डॉ. पांडे और डॉ. राठौर ने पी.डब्ल्यू.डी. के छात्रों के हित में बहुत काम किए। वे अकसर इस ओर ध्यान देते रहते कि इन बच्चों की बेहतरी के लिए और क्या किया जा सकता है। बच्चे डॉ. राठौर से बहुत घुले-मिले थे। ईओसी के अन्य सदस्यों में डॉ. सुनंदा सिन्हा, डॉ. शरण्या, डॉ. अंजलि चंद्रा, मोना दास, कविता आदि कुछ स्थायी-अस्थायी शिक्षक-शिक्षिकाओं का योगदान भी सराहनीय रहा।"

डॉ. मंजुला दास के अनुसार, 'सत्यवती' इस बात का हमेशा ख़याल रखता है कि जब कोई छात्र कॉलेज आना शुरू करता है तो उसको क्या मिलना चाहिए... उसको घर जैसी आत्मीयता मिलनी चाहिए। खासतौर पर उन बच्चों को, जो शारीरिक अक्षमता को नकारकर दूरदराज से हमारे कॉलेज आते हैं, उन्हें घर जैसा वातावरण मिले, तभी तो वे सहज रह पाएँगे। उनके लिए छात्रवृत्ति योजना भी शुरू की गई, जिसका लाभ उन्हें हो रहा है। पिछले वर्ष सत्यवती का ही एक दिव्यांग छात्र जब बाद के वर्ष में पी.डब्ल्यू.डी. की आरक्षित सीट पर प्राध्यापक बना और मुझसे मिलने आया तो मैंने न सिर्फ बधाई दी, बल्कि उससे भी कहा कि वह भी सलाह दिया करे कि पी.डब्ल्यू.डी. के छात्रों के लिए और क्या-क्या किया जा सकता है? आज सत्यवती के ये छात्र अच्छी नौकरी पाते हैं और फिर कभी मिलने आते हैं तो हमें कितनी खुशी होती है, इसके लिए शब्द नहीं हैं। एक संतोष भी होता है कि बच्चा कुछ बन पाया।

इस कॉलेज में सिर्फ राठौरजी ही नहीं, अन्य ऐसे शिक्षक भी हैं, जिनके लिए व्हीलचेयर की अनिवार्यता है। एक सहायक उनके साथ होता है, मगर यह शारीरिक अक्षमता उनके मनोबल को कम नहीं करती और न ही उनमें किसी प्रकार के अभाव का भाव उत्पन्न करती है। इसका एक कारण सभी शिक्षकों का उनके प्रति आत्मीय भाव है। कोई दिखावा नहीं।

पी.डब्ल्यू.डी. के छात्र-छात्राओं के चेहरे पर विराजती खुशी, खिलखिलाती हँसी बता देती है कि उन्हें जो चाहिए, प्राप्त हो रहा। सुरक्षा, सहयोग और साथ का विश्वास उन्हें आगे बढ़ने का हौसला देता है। यही हौसला उन्हें समाज में अपनी नई पहचान बनाने की सोच भी देता है। कॉलेज से निकलने के बाद भी ये बच्चे कॉलेज को अपने प्रिय प्राध्यापकों को कभी नहीं भूलते।

अगस्त 2020 से राजनीतिशास्त्र की वरिष्ठ प्राध्यापिका डॉ. निर्मल जिंदल ने कार्यकारी प्राचार्या का दायित्व सँभाला। लॉकडाउन होने के बावजूद कॉलेज को लेकर उनकी प्रतिबद्धता सराहनीय है। वे भी इन छात्र-छात्राओं के हित के लिए नई योजनाएँ बना रही हैं।

छात्र उस दिन के इंतजार में हैं जब उनका विशिष्ट छात्रावास उन्हें आने की अनुमति दे, (छात्रावास कॉलेज का हिस्सा नहीं) फिर कॉलेज जाना आरंभ हो और वे फिर से बटोर सकें खुशी के लम्हे...।

असमिया साहित्य के प्रथम कवि 'हेम सरस्वती'

विभिन्न भाषाओं के साहित्य की तरह ही असमिया भाषा के साहित्य का भी एक गौरवशाली इतिहास है, लेकिन किसी भी भाषा के साहित्य का प्रारंभ अथवा युगों का विभाजन एक सटीक तारीख से किया नहीं जा सकता। असमिया साहित्य भी इससे व्यतिक्रम नहीं। 20वीं सदी के पंडितों व आलोचकों ने असमिया भाषा के उद्भव को आठवीं से 12वीं सदी के बीच में रखा था। परंतु 'नगाजरी खनिकर गाँव के शिलालेख' और 'उमाचल लिपि' की प्राप्ति तथा हाल ही में हुए अनुसंधान ने असमिया भाषा के इतिहास को पाँचवीं शताब्दी से भी आगे स्थापित किया। उल्लेखनीय यह है कि पाँचवीं शताब्दी में जन्म होने के बावजूद

नगाजरी खानिकर गाँव के शिलालेख

असमिया भाषा के लिखित साहित्य की परंपरा चर्या के पदों से प्रारंभ हुई। सहजिया बौद्ध-सिद्धों द्वारा आठवीं से 12वीं शताब्दी के बीच इन गीतों (पदों) की रचना हुई। ध्यान देने वाली बात यह है कि चर्यापदों में असमिया भाषा के साथ-साथ बंगाली, ओड़िया, मैथिली जैसे कुछ आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं के प्राचीन रूप भी निहित हैं। इसलिए इसे किसी एक भाषा का स्वतंत्र साहित्य नहीं कहा जा सकता। चर्या के दोहों के बाद वडू चंडीदास के 'श्रीकृष्ण कीर्तन', रमाइ पंडित के 'शून्य पुराण' और नाथ सिद्धाचार्यों द्वारा विभिन्न गीतों की रचना हुई। परंतु ये साहित्य कृतियाँ भी अन्य आर्यभाषाओं के स्पर्श से मुक्त नहीं हैं।

असमिया भाषा के इस आदि युग के बाद 13वीं शताब्दी के अंत से लिखित असमिया साहित्य के पूर्ण इतिहास का प्रारंभ हुआ। असमिया साहित्य के युग निर्माता शंकरदेव के पूर्वकाल होने की वजह से इस युग को 'पूर्व-शंकरी' अथवा 'प्राक्-शंकरी' युग कहा जाता है। अभी तक इस युग के पाँच कवियों के नाम प्राप्त हुए हैं। वे इस प्रकार हैं—हेम सरस्वती, कविरत्न सरस्वती, रुद्र कंडली, हरिवर विप्र और माधव कंडली। ये पाँचों कवि असम के विभिन्न जनजातीय राजाओं पर आश्रित थे और इसलिए इनके साहित्य में आश्रित राजा के गुणगान मिलते हैं। दूसरी ओर से इस युग के साहित्य वैष्णव धर्म से जुड़े हैं। फिर भी इनमें किसी धर्म का प्रचार नहीं किया गया है। साहित्य के माध्यम से धर्म प्रचार की परंपरा शंकरदेव से ही प्रारंभ हुई। इसलिए राजा व लोक रंजन के लिए ही ये साहित्य रचनाएँ की गई हैं।

हेम सरस्वती केवल पूर्व-शंकरी युग के ही नहीं, संपूर्ण असमिया साहित्य के भी प्रथम कवि हैं। उनके नाम पर दो काव्य प्राप्त हुए हैं—'प्रह्लाद चरित्र' और 'हर-गौरी संवाद'।

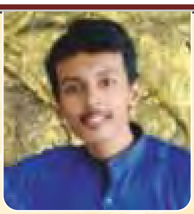

दीपज्योति बरा

जन्म : सितंबर 1997, जोरहाट, असम।

संप्रति : एम.ए. (असमिया), गौहाटी विश्वविद्यालय।

प्रकाशन : विभिन्न स्तरीय पत्र-पत्रिकाओं में लेखन, निबंध, पुस्तक समीक्षा, संस्मरण, अनूदित कविता और कहानियाँ प्रकाशित।

संपादन : जनमानस (2018-19), विहान (2019-20)।

संपर्क : मोबाइल– 6002106895

ई-मेल : jyotideepkasyap@gmail.com

दोनों काव्यों में हेम सरस्वती ने आत्मपरिचय दिए हैं। 'प्रह्लाद चरित्र' में लिखा है—

"कमतामण्डल दुर्लभ नारायण नृपवर अनुपाम।
ताहान राज्यत रुद्र सरस्वती देवयानी कन्या नाम ॥

ताहान तनय हेम सरस्वती ध्रुवर अनुज भाई।
पदवन्धे तेहो करिला प्रचार वामन पुराण चाई ॥"

'हर-गौरी संवाद' में भी उन्होंने कहा है—

"भूप दुर्लभ नारायण पात्र पशुपति सुत
सर्वश्रास्त्रे पण्डित सुजान ॥

ताहार तनय चारि धनन्जय आदि करि
ध्रुव भैल कुलत प्रधान।
अपर हेमन्त कवि हरगौरीपद सेवी
हेम सरस्वती भैल नाम ॥"

इससे स्पष्ट होता है कि हेम सरस्वती के पिता पशुपति सुत कमतामण्डल के राजा दुर्लभ नारायण के सभासद थे और उनकी माता का नाम 'देवयानी' था। रुद्र सरस्वती उनके पिता का ही अन्य एक नाम है। वे स्वयं विविध शास्त्रों के ज्ञाता-विद्वान थे। उनके नाम से जुड़े 'सरस्वती' सम्मान ही उनके ज्ञान का परिपूरक है। रुद्र सरस्वती व देवयानी के ध्रुव, धनन्जय आदि चार पुत्र थे। उनमें से कवि हेमंत अर्थात हेम सरस्वती सबसे अनुज थे। कवि हेम सरस्वती भी कमतामण्डल के राजा दुर्लभ नारायण के राजकवि थे।

पूर्व बंगाल और पश्चिमी कामरूप (प्राचीन असम) के कुछ क्षेत्र को लेकर दुर्लभ नारायण का कमतामण्डल राज्य परिव्याप्त था। सर एडवर्ड गेइट ने 'A History of Assam' में दुर्लभ नारायण का समय 13वीं शताब्दी का अंत कहा है। इसलिए, हेम सरस्वती का समय 13वीं शताब्दी के अंत अथवा 14वीं शताब्दी के प्रारंभिक स्तर माना गया है।

हेम सरस्वती का 'प्रह्लाद चरित्र' सौ पदों वाला एक संक्षिप्त काव्य है। दैत्यराज हिरण्यकशिपु के अपने पुत्र विष्णुभक्त प्रह्लाद पर किए अनगिनत अत्याचारों और अंततः नरसिंह रूपी महाविष्णु के हाथों दैत्यराज के वध का आख्यान ही इस काव्य की कहानी है।

इसके द्वारा कवि ने भगवान विष्णु की अनंत महिमा का बखान किया है। कवि हेम सरस्वती ने इस काव्य को मूल 'वामन पुराण' कहा है, किंतु अभी प्राप्त हुए 'वामन पुराण' में यह आख्यान नहीं मिलता। इसलिए कुछ आलोचकों का कहना है कि कवि के समय में 'वामन पुराण' नाम से एक महापुराण था अथवा उस समय इस काव्य का आख्यान भी वर्तमान प्राप्त 'वामन पुराण' के साथ संकलित था और समय के प्रवाह में वह कहीं खो गया।

प्राचीन आख्यान की तरह ही काव्य में प्रह्लाद भगवान विष्णु को अपना सब-कुछ मानते थे—'माधवत परे कोन आसे संसारत', जिसके कारण उनके पिता दैत्यराज हिरण्यकशिपु अत्यंत क्रोधित थे और प्रह्लाद को उनके वंश को कलंक कहा—

'आमार वंशत तई भैलि कुलंगार।
मोहोर वंशत उपजिल धूमकेतु।"

अपने सबसे बड़े शत्रु विष्णु को पूजने के कारण हिरण्यकशिपु ने अपने पुत्र को मृत्युदंड का आदेश दिया। दूसरी तरफ, माधव अर्थात भगवान विष्णु भी अपने भक्त से एकात्म थे। दैत्यराज के विभिन्न अत्याचारों और हत्या के हर प्रयासों को उन्होंने विफल किया जिससे प्रह्लाद के मन में भगवान विष्णु को लेकर विश्वास और भी दृढ़ हो गया। प्रह्लाद को यह यकीन हो गया कि भगवान विष्णु की इच्छा के बिना कोई भी उसका अनिष्ट नहीं कर सकता—'हरि जाक रक्षा करे मारे ताको कोने।'

प्रह्लाद को मृत्यु का भय दिखाकर विष्णुभक्ति से भटकाने तथा उसकी हत्या करने का हर मुमकिन प्रयास करने के बावजूद असफल होने के बाद दैत्यराज ने प्रह्लाद को अपने सिंहासन का लोभ दिया। परंतु भक्ति को जीवन का सार मानने वाले प्रह्लाद ने उसे भी ठुकरा दिया। प्रह्लाद ने कहा कि विष्णु पिता, माता व आत्मा से भी परे हैं और वही हर जीव का परम मित्र हैं—

'माधवेसे पितामाता माधवेसे प्राण।
माधवत परे कोन बन्धु आसे आन ॥'

शाही पात

साथ ही, प्रहलाद ने भगवान विष्णु को सर्वव्यापी होने की बात की। क्रोधित दैत्यराज के महल के स्तंभ में 'विष्णु कहाँ है?', बोलकर अपनी गदा से प्रहार किया और उसी स्तंभ से भगवान विष्णु अपने नरसिंह रूप में प्रकट हुए। दोनों में भीषण युद्ध हुआ। तीनों लोकों में त्राहि-त्राहि मच गई और अंत में ब्रह्मदेव के वरदान की लाज रखते हुए संध्याकाल में नरसिंह रूपी विष्णु ने हिरण्यकशिपु को अपनी जंघा पर उठाकर अपने नाखूनों से वध किया—

'अस्त्रे-सस्त्रे नकाटिल नोखे बिदरिला।
रात्रि-दिन किछु नोहे संध्यात मारिला॥'

पिता की मृत्यु के बाद प्रहलाद जैसे वास्तविक जीवन में लौट आया। उसके मन में अपराधबोध ने जन्म लिया। प्रहलाद के मन की इस व्यथा को नारायण ने भी भाँप लिया था। उन्होंने प्रहलाद से कहा कि जिस प्रकार रात्रि को एक ही वृक्ष में आश्रय लेने वाले पक्षी सुबह अपनी-अपनी दिशा को निकल जाते हैं, ठीक उसी प्रकार पिता-पुत्र को भी एक-दूसरे से जुड़े होने के बावजूद अपने-अपने रास्तों में विचरण करना उचित होता है। साथ ही, उन्होंने कहा कि प्रहलाद दैत्यराज हिरण्यकशिपु के वध का निमित्त मात्र है। सब उनकी इच्छा से ही हुआ है।

इसके बाद, प्रहलाद के मन में अपराधबोध के स्थान पर विष्णु के प्रति आत्मसमर्पण के भाव ने जन्म लिया और वे भगवान विष्णु की स्तुति करने लगे—

'नमो नारायण प्रभु देव यदुपति।
तोमार चरणें मोर थाकोक भकति॥

अभय चरणे मोई पशिलो शरण।
अपार सागरे पार करा नारायण॥'

काव्य के प्रारंभ से अंत तक विष्णुभक्ति का एक स्रोत मिलता है। इसे महसूस करके इस काव्य के प्रथम संपादक पंडित कालिराम मेधि ने 'प्रहलाद चरित्र' को 'असमिया साहित्य का प्रथम काव्य' के साथ-साथ 'प्रथम असमिया वैष्णव काव्य' का सम्मान भी दिया है।

हेम सरस्वती रचित दूसरा काव्य है—'हर-गौरी संवाद'। छह अध्यायों में विभाजित इस काव्य में कुल 899 पद हैं। काव्य के पहले अध्याय की कहानी 'नरसिंह पुराण' से और अन्य अध्यायों की कहानी 'हर-गौरी संवाद' नामक किसी महापुराण में से ली गई हैं।

पहले अध्याय में नरसिंह रूपी महाविष्णु के हाथों हिरण्यकशिपु के निधन का वर्णन है। अन्य पाँच अध्यायों में तारकासुर का अत्याचार, महादेव की तपस्या, तपोभंग करने के कारण कामदेव का भस्मीभूत होना, शिव-पार्वती का विवाह, कार्तिक का जन्म इत्यादि घटनाओं का वर्णन मिलता है। इस काव्य में महाकवि कालिदास के 'कुमार संभवम्', 'कालिका पुराण' आदि ग्रंथों का भी प्रभाव देखने को मिलता है। काव्य की लेखन-शैली की विशिष्टता को देखकर अध्यापक सत्येन्द्र नाथ शर्मा ने लिखा है कि—'हर-गौरी संवाद' कवि के परिपक्व आयु की रचना है और इस काव्य से ही कवि के मूल काव्य प्रतिभा का आकलन संभव है। परंतु समीक्षित व संपादित रूप में प्रकाशित न होने के कारण कवि की प्रतिभा आज भी अंधकार में है। भविष्य के अनुसंधानकारियों के लिए यह क्षेत्र खुला हुआ है।

जो भी हो, असमिया साहित्य के प्रथम काव्य 'प्रहलाद चरित्र' ने असमिया वैष्णव साहित्य का भी आगाज किया। हेम सरस्वती के बाद महामानव शंकरदेव के नेतृत्व में नव-वैष्णव धर्म के प्रचार के उद्देश्य से बहुत से काव्य, नाटक, गद्य आदि साहित्य की रचना हुई जिसमें विष्णु की महिमा और विष्णुभक्ति से होने वाले जगकल्याण की वाणी की उद्घोषणा की गई है। इन वैष्णव कवियों ने अपने कृत्य से असमिया साहित्य को समृद्ध किया।

यह सत्य है कि शंकरदेव, माधवदेव, अनन्त कंडली, राम सरस्वती इत्यादि प्रमुख कवियों ने असमिया वैष्णव काव्य का ध्वज वहन किया है, परंतु प्रारंभिक कवि के नाम पर हेम सरस्वती का नाम साहित्य के इतिहास में सर्वदा अमर रहेगा।

विकलांगों का व्यवसायगत पुनर्वास

विकलांगों की सबसे बड़ी समस्या है उनका अनुत्पादक व्यक्तित्व। विकलांगों की ऊर्जा का सही उपयोग उत्पादन क्षेत्र में नहीं हो पाता है। इसीलिए सामाजिक क्षेत्र में विकलांगों का स्थान सम्मानीय नहीं रहता है। विकलांग आर्थिक उत्पादन का स्रोत नहीं बन पाता है इसीलिए उसे परिवार एवं समाज में एक बोझ मान लिया जाता है। यहाँ तक कि वह स्वयं अपने जीवन के लिए उपार्जन नहीं करता है, उसे दूसरे के उपार्जन पर जीवन जीना पड़ता है। इन सबका परिणाम यह होता है कि विकलांग कुंठाग्रस्त हो जाते हैं। जब विकलांगों को परिवार में उचित सम्मान नहीं मिल पाता है तब वे परिवार

छोड़कर भिक्षावृत्ति के लिए मजबूर हो जाते हैं। आज हजारों विकलांग ट्रेन एवं बस में, तीर्थस्थलों में भिक्षा माँगते हुए जीवन जी रहे हैं। इसका लाभ अनेक दुराचारी लोग उठाते हैं। ये बच्चों की चोरी करके विकलांग बना देते हैं और उन्हें भिक्षा माँगने को मजबूर बना देते हैं। भिक्षावृत्ति का पूरा लाभ विकलांग को नहीं मिल पाता है। हर क्षेत्र में माफिया गिरोह सक्रिय होता है। ऐसा ही माफिया भिक्षावृत्ति में सक्रिय है। विकलांग भिक्षा माँगते हैं और इस भिक्षा का बड़ा हिस्सा भिक्षा माफिया की जेब में चला जाता है।

विकलांगों को आत्मनिर्भर बनाने के लिए उन्हें शिक्षित करना जरूरी है। शिक्षा ही एक ऐसा उपाय है, जिसके द्वारा विकलांगों का पुनर्वास किया जा सकता है। उनको योग्य व्यवसाय में डाला जा सकता है। यदि हम विकलांगों को शिक्षित कर सके तो हम उनकी ऊर्जा का सही उपयोग सामाजिक हित में कर पाएँगे। विकलांगों के पुनर्वास हेतु यहाँ कुछ क्षेत्रों की पहचान कराई जा रही है।

विकलांगों की समस्या को समझते हुए सरकार ने विकलांगों के कल्याण कार्य को अपनी पंचवर्षीय योजना में शामिल किया है। भारत के संविधान के अनुच्छेद 46 में विकलांग समुदाय के सर्वांगीण बेहतरी पर जोर दिया गया है। विकलांगों को पाँच वर्गों में विभाजित किया गया है—

1. दृश्य विकलांगता
2. अस्थि विकलांगता
3. श्रव्य विकलांगता
4. मानसिक विकलांगता
5. कुष्ठ विकलांगता

इस देश में विकलांगों की बहुत बड़ी जनसंख्या है और ये लोग किसी भी कार्य को एक चुनौती के रूप में लेते हैं। इसलिए सरकार ने इसे शारीरिक निःशक्त व्यक्ति या दिव्यांग के रूप में संदर्भित करना आरंभ कर दिया है।

निःशक्त लोगों के सशक्तीकरण की ओर कदम उठाते हुए सरकार ने उनके अधिकार के बारे में संयुक्त राष्ट्र संधि पर

प्रीति दुबे

शिक्षा : एम.एस-सी., बी.एड., बी.लिब.

संप्रति : प्रधानाचार्या, बुंदेलखंड पब्लिक सीनियर हायर सेकेंडरी स्कूल, हटा दमोह

लेखन : विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में सौ से अधिक आलेखों का प्रकाशन, विकलांग-विमर्श पर शोध कार्य, दो पुस्तकें प्रकाशित।

पुरस्कार : मध्य प्रदेश साहित्य अकादमी का दुष्यंत कुमार पुरस्कार, विकलांग-विमर्श राष्ट्रीय सम्मान।

संपर्क : मोबाइल– 9165219959

ई-मेल : jameraho1@gmail.com

30 मार्च, 2001 को हस्ताक्षर किए हैं। भारत उन पहले देशों में से एक है जिन्होंने 01 अक्तूबर, 2007 को इस संधि को अपनी स्वीकृति प्रदान कर दी है। यह संधि 03 मार्च, 2008 से प्रभावी हो गई है। इस संधि का उद्देश्य सभी निःशक्त लोगों के द्वारा सभी मानव अधिकारों

> "अनेक पत्र-पत्रिकाओं में लेखन पर अच्छा पारिश्रमिक मिलता है। बहुत से पत्रकार एवं लेखक केवल मसि जीवी हैं। विकलांग इस पेशे को अपनाकर अपनी क्षमताओं का अच्छा मूल्य पा सकते हैं। लेखन कला की शिक्षा देने वाले अनेक केंद्र हैं। इन केंद्रों से संपर्क करके लेखन कला के गुर सीखे जा सकते हैं। लेखन कला के कौशल को बढ़ाने के लिए अनेक पुस्तकें भी बाजार में उपलब्ध हैं। अनेक विश्वविद्यालय में लेखन कला से संबंधित पाठ्यक्रम चलाए जा सकते हैं और कार्यशालाएँ आयोजित की जाती हैं। जिन विकलांग जनों में लेखन प्रतिभा है, वे इन संस्थानों से संपर्क करके अपनी लेखन कला का विकास कर सकते हैं।"

तथा मौलिक स्वतंत्रता की समान रूप से प्राप्ति एवं उनको पूरी तरह से सुनिश्चित, सुरक्षित तथा उनका संवर्धन करना है। साथ-ही-साथ उनकी गरिमा में भी वृद्धि करना है। संधि का अनुच्छेद 3 आठों निदेशक तत्वों का विस्तृत वर्णन देता है और अनु. सामान्य बाध्यताओं को रेखांकित करता है।

एस.ई.ई.पी.एच. (सीफ) विकलांगों के पुनर्वास की ओर एक कदम के रूप में सरकार ने 1957 में बम्बई में शारीरिक दृष्टि विकलांगों के लिए विशेष रोजगार कार्यालय एस.ई.ई.पी.एच. (सीफ) खोला था। अब सरकार ने इनकी संख्या बढ़ाकर 42 कर दी है। दूसरे कदम के रूप में सरकार ने विकलांगों की व्यावसायिक क्षमताओं को सहायता पहुँचाने के लिए देश भर में मुख्य स्थानों पर व्यावसायिक पुनर्वास केंद्र (वी.आर.सी.) स्थापित किए हैं। इन 20 व्यावसायिक पुनर्वास केंद्रों में से पटना तथा बड़ोदरा केंद्रों को विशेष रूप से महिला विकलांगों के लिए बनाया गया है। इस तरह विकलांगों के पुनर्वास के लिए अनेक क्षेत्रों में सक्रियता स्पष्ट हो रही है। इन क्षेत्रों में कार्यानुभव प्राप्त करने वाले विकलांगों को पुनर्वास के अवसर निम्न क्षेत्रों में सुलभ हैं—

कताई-बुनाई

विकलांगों के पुनर्वास के लिए कताई-बुनाई एक बेहतर रोजगार है। इस क्षेत्र में ऐसे लोगों के लिए बेहतर संभावनाएँ तलाशी जा सकती हैं। इस हेतु जरूरत है इन कार्यों के प्रशिक्षण

की। ऐसे प्रशिक्षण केंद्र की जिनमें विकलांगों को उत्कृष्ट प्रशिक्षण देकर उन्हें स्वावलंबी बनाया जा सके।

साइबर कैफे

मोबाइल, इंटरनेट, कंप्यूटर आदि के आविष्कार ने कुछ नए धंधों का सृजन किया है। कंप्यूटर से टाइपिंग, प्रिंटिंग आदि अनेक काम संपन्न

किए जा सकते हैं। इंटरनेट से अनेक तरह की सूचनाएँ विज्ञापन आदि की उपलब्धता सुनिश्चित की जा सकती है। आजकल हर प्रकार के आवेदन ऑनलाइन किए जाते हैं। इस संपूर्ण क्रियाकलाप ने व्यवसाय का स्थान ग्रहण कर लिया है। कंप्यूटर चलाने वाले के पास अनेक तरह के कार्यों का संपादन जुड़ जाता है। डाटा एंट्री से लेकर पुस्तकें छापने का कार्य भी कंप्यूटर कर लेता है, इसलिए यदि कोई विकलांग कंप्यूटर में दक्ष हो जाता है तो उसके लिए रोजगार के अवसर के अनेक दरवाजे खुल जाते हैं। इंटरनेट के माध्यम से विकलांग जन अपने साइबर कैफे खोल सकते हैं, और सूचनाओं के आदान-प्रदान का कार्य कर सकते हैं। एस.डी.टी. बूथ भी चलाए जा सकते हैं। अब तो ई-मेल पर रेलवे आदि के टिकटों का विक्रय होता है। इस तरह के कार्यों में जो कमीशन मिलेगा, वह विकलांग को आत्मनिर्भर बनाने का आधार बनेगा।

शॉप कीपिंग

विकलांगों के लिए शॉप कीपिंग भी एक अच्छा धंधा है। यदि मार्केट में जगह मिल जाए तो विकलांग अपनी दुकान चला सकते हैं।

परचून की दुकान, खिलौनों की दुकान, स्त्रियों से संबंधित साज-सज्जा के सामान आदि की दुकान चलाने में विकलांग सहजता का अनुभव करेंगे। इसीलिए इस तरह की दुकानें विकलांगों को अर्जन कर सकते हैं।

लेखन

आजकल लेखन भी एक व्यवसाय है। अनेक पत्र-पत्रिकाओं में लेखन में अच्छा पारिश्रमिक मिलता है। बहुत से पत्रकार एवं लेखक

केवल मसि जीवी हैं। विकलांग इस पेशे को अपनाकर अपनी क्षमताओं का अच्छा मूल्य पा सकते हैं। लेखन कला की शिक्षा देने वाले अनेक केंद्र हैं। इन केंद्रों से संपर्क करके लेखन कला के गुर सीखे जा सकते हैं। लेखन कला के कौशल को बढ़ाने के लिए अनेक पुस्तकें भी बाजार में उपलब्ध हैं। अनेक विश्वविद्यालय में लेखन कला से संबंधित पाठ्यक्रम चलाए जा सकते हैं और कार्यशालाएँ आयोजित की जाती हैं। जिन विकलांग जनों में लेखन प्रतिभा है, वे इन संस्थानों से संपर्क करके अपनी लेखन कला का विकास कर सकते हैं। विकलांगों को यह ध्यान में रखने की बात है कि लेखन कला धैर्य व परिश्रम माँगती है। इस क्षेत्र में भी अन्य व्यवसाय क्षेत्रों के समान संघर्ष करना पड़ता है।

कागज के फूल बनाने की कला

मेरे विद्यालय में अकसर विभिन्न क्षेत्रों के कलाकार कार्यक्रम देने आते रहते हैं। कभी कोई जादूगर अपनी कला का प्रस्तुतीकरण करने आ

जाता है। कभी कोई ऐसा कलाकार भी मेरी संस्था में आ जाता है जो कागज से विभिन्न तरह की उपयोगी एवं कलात्मक चीजों को बनाता है। पिछले वर्ष एक विकलांग मेरे स्कूल में आया था, उसके पास एक ट्राई साइकिल थी। उसी साइकिल में उसने अपनी कला से संबंधित सभी सामग्री रख छोड़ी थी। मेरे विद्यालय में छात्र-छात्राओं के समक्ष उसने अपनी कागज की कला का प्रदर्शन किया था। वह रंग-बिरंगे कागजों के द्वारा अल्प समय में भी फूलों का निर्माण कर लेता है। गुलाब, गेंदा, कमल आदि के सुंदर फूल ऐसे बनाता था, जैसे वे हू-ब-हू फूल हों। बेल-बूटे बनाने का भी उसने प्रदर्शन किया था। मेंहदी लगाने के लिए डिजाइन बनाने में भी वह माहिर था। इसी तरह कागज से बने हुए कई तरह के ऐसे साँचे लिए जा सकते हैं, रंगोली एवं मेंहदी लगाने व सजाने के काम में आते हैं। इन कलाओं से संबंधित छोटी-छोटी पुस्तकें भी वह रखे हुए था। मेरे विद्यालय की छात्र-छात्राओं ने उससे ये प्रस्तुतियाँ सीखीं व साँचे खरीदे। यहाँ पर इस संस्मरण को लिखने का मेरा यह बताना उद्देश्य है कि विकलांग यदि कागज के फूल बनाने में पारंगत हो जाए तो इन फूलों को बेचकर इनकी कला बच्चों को सिखाकर अपने जीवन में रंग व सुगंध भर सकता है।

शिल्पकलाएँ

काष्ठ शिल्प, धातु शिल्प आदि में भी रोजगार की असीम संभावनाएँ हैं। काष्ठ शिल्प में बढ़ईगिरी की कलाएँ आ जाती हैं। बढ़ईगिरी घर के दरवाजों-चौखटों से लेकर सोफा, पलंग, मेज, कुर्सी, साज-सज्जा की वस्तुओं के निर्माण की कला से जुड़ी हुई है। इस धंधे में अगर

कुशलता हासिल कर ली जाए तो लाभ की अच्छी गुंजाइश है। आई.टी.आई. जैसे संस्थानों में विकलांगों के लिए इस तरह की कलाओं का प्रशिक्षण दिया जाता है। विकलांग इस पेशे को अपनाकर अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन तो करेंगे ही, उन्हें इससे व्यावसायिक लाभ भी मिलेगा। ठीक इसी तरह से धातु शिल्प कला का विकलांग प्रशिक्षण प्राप्त कर सकते हैं। वे प्रतीक चिह्न आदि बनाने में महारत हासिल कर सकते हैं। आजकल प्रतीक चिह्नों का बाजार भी काफी विस्तृत हो चुका है।

पेड़-पौधों का सामाजिक जीवन

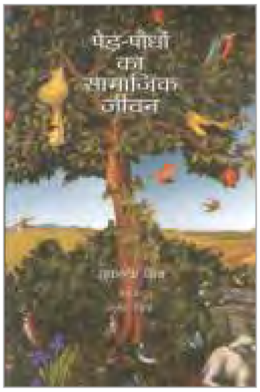

समीक्षक : **उमेश चतुर्वेदी**
लेखिका : **सुकन्या दत्ता**
अनुवादक : **स्नेह लता**
प्रकाशक : राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत, नई दिल्ली-110070
पृष्ठ : 304
मूल्य : रु. 160/-

20वीं सदी की शुरुआत में जब जगदीश चंद्र बसु ने प्रयोगों से यह प्रमाणित कर दिया था कि पेड़-पौधों में भी मनुष्य और दूसरे जीवों की तरह जीवन होता है, बल्कि वे बाहरी उत्प्रेरण या पीड़न पर भी प्रतिक्रिया देते हैं तो सहसा वैज्ञानिक दुनिया ने इसे स्वीकार नहीं किया था। लेकिन जब प्रत्यक्ष प्रयोगों से उन्होंने इसे दर्शाया तो विज्ञान जगत ने भी इसे स्वीकार कर लिया। लेकिन क्या पेड़-पौधों और जंगलों का भी अपना सामाजिक जीवन होता है? जल, जंगल या मैदानी इलाकों के पादप जीवन के साथ ही वहाँ निवास करने वाले पशु-पक्षियों के साथ ही कीड़ों-मकोड़ों का समन्वित सामाजिक बंधन होता है? इन सवालों का भी जवाब हाँ में है और पेड़-पौधों के इसी सामाजिक जीवन की स्पष्ट व्याख्या करती है यह पुस्तक।

हमें बचपन से ही पढ़ाया जाता रहा है कि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। कुछ आगे बढ़ने पर हम चींटियों, मधुमक्खियों, बंदरों, कुछ मछलियों आदि के बारे में भी पढ़ते हैं कि बुनियादी रूप से ये सभी जंतु भी सामाजिक हैं और उनका भी अपना समाज है। उस समाज के कुछ उसूल हैं, लेकिन उनमें एक तथ्य उभय है। प्रकृति से कम-से-कम लेकर उसको अधिक-से-अधिक देते हुए प्रकृति को भी बचाए रखना उनका स्वभाव है। लेकिन यह पुस्तक इससे भी आगे की बात करती है। वह बताती है कि अमेजन के जंगलों के पौधों के बीच भी आपसी रिश्ते होते हैं। कुछ पौधे तो पेड़ों के बीच या फिर कुछ पेड़ों के ऊपर ही उगते हैं। पेड़-पौधों के लिए अनिवार्य तत्व मिट्टी, पानी और सूर्य की किरणें हैं। लेकिन कुछ पौधे ऐसे भी होते हैं, जिनके लिए मिट्टी जरूरी नहीं, बल्कि उनकी खुली हवा में लटकती जड़ें ही वातावरण से जरूरी नाइट्रोजन और वाष्पीकृत रूप में स्थित पानी से अपनी जिंदगी चलाने भर की ऊर्जा हासिल कर लेती हैं। इसी तरह इस पुस्तक में बताया गया है कि एक पेड़ पर कितने ही तरह के जीवों का भी जीवन टिका होता है। मसलन कठफोड़वा जहाँ पेड़ों के तने की दरारों के बीच स्थित कीड़ों को खाता है तो कई कीड़े-मकोड़े वहाँ उपस्थित मक्खियों के लार्वा आदि को भी खाते हैं। इस पुस्तक में यह भी बताया गया है कि यह पेड़-पौधों का सामाजिक जीवन ही है कि कुछ कीट फूलों के पराग को अपना भोज्य बनाते हैं। इसी बहाने वे पौधों की संतानों की विकास प्रक्रिया यानी निषेचन का भी जरिया बनते हैं। लेखिका यह भी बताती है कि जैसे-जैसे गर्मियाँ बढ़ने लगती हैं, उत्तरी एरियोना के इलाकों में रहने वाले मृग ऊपरी इलाकों में चलते जाते हैं। इस दौरान वे स्कालेंट जिलिया नामक पेड़ के तनों को खाते जाते हैं। आमतौर पर ऐसी प्रक्रिया में पेड़-पौधे सूख जाते हैं, लेकिन यह एरियोना के मृगों और स्कालेंट जिलिया का सामाजिक जीवन ही है कि जैसे ही बसंत ऋतु आती है, जिलिया के जिन पेड़ों के तनों के छिलके को मृगों ने खा लिया होता है, उनमें अंकुर कुछ ज्यादा ही फूटते हैं।

पाँच खंडों की इस पुस्तक में पेड़-पौधों के सामाजिक जीवन को कुछ उसी अंदाज में प्रस्तुत किया गया है, जिस तरह मनुष्य का सामाजिक जीवन होता है। किसी भी सामाजिक जीवन की पहली बुनियादी जरूरत है—एक-दूसरे का साहचर्य और एक-दूसरे का विकास। इसके साथ ही सबकी जिंदगी में नैरंतर्य और उसके साथ ही सबकी संततियों का विस्तार। लेखिका ने इस पुस्तक में मनुष्य के सामाजिक जीवन की भाँति पेड़-पौधों के सामाजिक जीवन को इन्हीं निष्कर्षों के आधार पर विवेचित किया है। वे बताती हैं कि पेड़-पौधों के साथ ही प्रकृति के दूसरे जानवरों के बीच अद्भुत तौर पर आने वाली पीढ़ियों के लिए तैयारी भी दिखती है, एक-दूसरे के लिए साहचर्य भी दिखता है। इस बीच उनमें भी युद्ध होता है और फिर शांति भी होती है। अपने सामाजिक जीवन के दौरान ये अपना जीवन चलाने के लिए कई बार कुशल रणनीति भी अख्तियार करते हैं। यह सब प्रकृति के बीच प्रकृति के अनुकूल सहजता से चलता रहता है, लेकिन मनुष्य की तुलना में यह सामाजिक जीवन कुछ अलग है। अपने सामाजिक जीवन में प्रकृति के ये सहचर प्रकृति से जितना लेते हैं, उससे कहीं ज्यादा उसके विस्तार और परिरक्षण में अपना योगदान देते हैं। लेखिका ने उदाहरणों के जरिए जिस तरह से पादप जगत को लेकर रहस्योद्घाटन किया है, उसे देखते हुए कहा जा सकता है कि यह पुस्तक असाधारण बन पड़ी है।

वैसे तो भारतीय वाग्धारा और संस्कृति पहले से ही मानती रही है कि जगत की हर चीज में प्राण है। पेड़-पौधों में चेतना को भी संस्कृत वांग्मय स्वीकार करता रहा है। हजारी प्रसाद द्विवेदी के निबंध 'अशोक के फूल' या कुबेर नाथ राय के निबंध 'शरद बांसुरी और विपन्न मराल' के जरिए प्रकृति की अंतर्चेतना को महसूस

किया जा सकता है। कह सकते हैं कि आधुनिक वैज्ञानिक तर्कों और कसौटी के जरिए स्थापित पेड़-पौधों की चेतना को यह पुस्तक सहज तरीके से हमारे सामने रखती है। ज्ञान-विज्ञान और चेतन जगत में दिलचस्पी रखने वालों की यह पुस्तक बेहतर साथी बन सकती है।

अंधेरे में जगमग

(कहानी संग्रह)

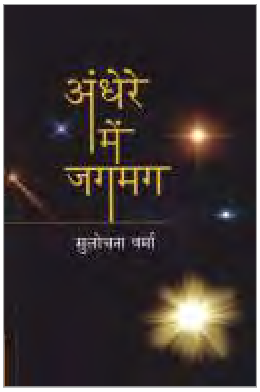

समीक्षक : **जनार्दन मिश्र**

कथाकार : **सुलोचना वर्मा**

अनुवादक : **डॉ. शैलेश कुमार मिश्र**

प्रकाशक : राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत, नई दिल्ली-110070

पृष्ठ : 140 (पेपर बैक)

मूल्य : रु. 160/-

'महिला प्रोत्साहन योजना' अंतर्गत न्यास द्वारा प्रकाशित इस कहानी-संग्रह में कुल 30 कहानियाँ संकलित हैं। इस पुस्तक की लेखिका सुलोचना वर्मा की अनेक रचनाएँ हिंदी और बांग्ला की पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुकी हैं और यह क्रम आगे भी जारी है।

इस पुस्तक की पहली कहानी है—'सौमित्र के छह अध्याय।' इस कहानी की रूपरेखा सामान्य कहानियों से कुछ अलग हटकर है। पाँच अध्यायों में विभक्त इस कहानी में नायक 'सोमू' यानी सौमित्र के स्वप्न भंग को बड़ी ही मार्मिकता से रेखांकित किया गया है। उनकी आकाक्षाएँ माता-पिता की पुरातन मान्यताओं एवं अहम् के सामने कैसे एक-एक करके दम तोड़ देती हैं, उस भावबोध को लेखिका ने ऐसे उकेरा है मानो अपनी साँसों की इबारत में गढ़ा हो। सौमित्र के जीवन में एक-एक कर तीन लड़कियाँ आती हैं जिनको वे अपनी जीवन संगिनी के रूप में देखना चाहते हैं, पर जातीय स्वाभिमान एवं जमींदारी के रौब में जीने वाले उनके पिता के सामने उन्हें हर बार अपने प्यार का गला घोटना पड़ता है और अंत में जहाँ माता-पिता शादी तय करते हैं, वहीं उन्हें शादी करनी पड़ती है। दो बच्चे होने के बाद भी पत्नी और सौमित्र के बीच किसी प्रकार का संवाद तभी होता है जब अत्यंत आवश्यक हो। इस कहानी की लेखिका ने बड़ी शिद्दत से दर्शाने का प्रयास किया है कि भारत में जात-पाँत तथा संप्रदाय शादी-ब्याह के मामले में बहुत बड़ा अवरोध है। यहाँ यदि लड़का-लड़की एक-दूसरे को पसंद करते हैं और उनको लगता है कि एक-दूसरे के लिए योग्य जीवनसाथी साबित होंगे, पर जात-पाँत एवं संप्रदाय उनके बीच ऐसा अवरोध बन जाता है कि उनकी एक-दूसरे से शादी नहीं हो पाती। फिर उनके माँ-बाप, अभिभावक जो रिश्ता तय करते हैं, न चाहते हुए भी उसे स्वीकार करना पड़ता है और उस रिश्ते को लेकर पति-पत्नी जीवनभर एक-दूसरे को कोसते रहते हैं।

इस पुस्तक की अंतिम कहानी का शीर्षक है—जीवन का स्वाद। इस कहानी में कनकप्रभा अपने डॉ. पति के व्यवहार से दुखी रही। उनके निधन के बाद नर्स का काम करते हुए अपनी इकलौती पुत्री को पढ़ाया-लिखाया। उसके कहे मुताबिक उसकी शादी कर दी, पर वह भी अपनी 'माँ' को भगवान भरोसे छोड़कर अपनी दुनिया में मस्त हो गई। बेटी द्वारा तिरस्कृत होने पर निराश-हताश होने के बजाय उन्हें बेटी और उसके परिवार की सेवा करने के बनिस्बत अनजान मरीजों की सेवा करना अपने जीवन का बेहतर विकल्प लगा और उसी में जीवन का स्वाद महसूस करते हुए इस दुनिया से विदा हो गई।

इस संग्रह की शीर्षक कहानी 'अंधेरे में जगमग' एक उत्कृष्ट कहानी है। वास्तव में आज भी भारत में पुराने ख़यालात के लोग अपनी संतानों को अपने मन-मुताबिक जीवनसाथी चुनने का अधिकार नहीं देते। वे सब-कुछ अपने हिसाब से तय करते हैं। ऐसे में यदि लड़का-लड़की कहीं दूर जाकर अपने मन से शादी कर लेते हैं, तो मुसीबत के समय उनके माता-पिता एवं अभिभावक उनका साथ नहीं देते। उलटा उन्हें ताना देते हैं। ऐसा ही कहानी की पात्र संध्या के साथ भी होता है। पति की आकस्मिक मृत्यु के बाद संध्या बुरी तरह टूटकर बिखर जाती है, पर कुछ ही दिनों के बाद एक नए पड़ोसी का हर सदस्य संध्या के जीवन में खुशी लाने का प्रयास करता है। दुख के क्षणों में अवसाद हमें अपने शिकंजे में इस कदर ले लेता है कि हम अपनी तुलना निर्जीव वस्तु से करने लगते हैं, पर 'दीया' जलते ही जैसे चारों ओर उजाला फैलता है वैसे ही हमारी चेतना प्रदीप्त होती है, तो समाज और परिवेश में उजाला फैलता है। इस तथ्य को इस कहानी में बड़ी ही मार्मिकता से दर्शाया गया है।

आकार की दृष्टि से 'होलिका दहन' इस संग्रह की एक छोटी-सी कहानी है, पर लेखिका ने इस कहानी में पौराणिक संदर्भों को आज के संदर्भ में ऐसे तोड़-मरोड़ कर पेश किया गया है कि उचित नहीं ठहराया जा सकता। 'हिरण्यकश्यप', 'प्रह्लाद', 'होलिका' भारतीय वांग्मय में बहुत ही महत्वपूर्ण पात्र हैं। 'योगवशिष्ठ' में भी राजा बलि के पूर्वज प्रह्लाद का नाम बड़े सम्मान के साथ उद्धृत है। ऐसे पौराणिक पात्रों के साथ छेड़छाड़ करना कतई उचित नहीं है। 'हिरण्यकश्यप' को प्रगतिशील विचार का दिखाया गया है और शुरुआती दौर में प्रह्लाद को अंधभक्ति का पोषक, पर 'होलिका' के प्रयास से वह प्रगतिशील विचार का बन जाता है। समग्रता में कथानक, भाषा, शिल्प एवं कसाव की दृष्टि से इस संग्रह की अनेक कहानियाँ समाज को जागृत करने में अहम भूमिका अदा करती हैं।

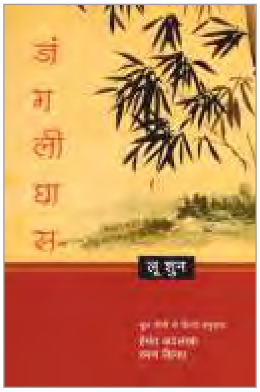

समीक्षक : **बीरेन्द्र कुमार चौधरी**

लेखक : **लू शुन**

अनुवादक : **हेमंत अदलखा और रमण सिन्हा**

प्रकाशक : राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत, नई दिल्ली-110070

पृष्ठ : 72

मूल्य : रु. 125/-

जंगली घास

(मूल : चीनी भाषा)

साहित्य, संगीत और कला किसी भी देश की वे विशेषताएँ हैं जिसके आधार पर वहाँ के समाज की बारीकियों को आसानी से समझा जा सकता है...और इस साहित्यकोश को समृद्ध करने का काम साहित्यकार करते हैं। निश्चय ही साहित्य समाज के अंदर की बारीक से बारीक घटनाओं को अपने विस्तृत फलक में छिपाए होता है, फिर वह साहित्य अंग्रेजी हो, भारतीय हो, रूसी हो, चीनी हो या फिर कोरियाई और जापानी ही क्यों न हो। इस कड़ी में 19वीं और 20वीं सदी का अभूतपूर्व योगदान रहा है। इसी दौर में दुनिया भर में एक से बढ़कर एक साहित्यकारों का जन्म हुआ और उन्होंने साहित्याकाश में अपनी अमिट छाप छोड़ी। बात यदि लेखकीय कौशल की हो तो भारत में सहज और सुबोध्य भाषा के अनेक लेखक और कवि हुए तो दुरूह लिखने वालों की भी लंबी फेहरिश्त रही। किंतु मुक्तिबोध ने जिस शैली का प्रयोग अपने लेखन में किया और जिस प्रकार बहुअर्थी शब्दों एवं बिंबों को चुना, अपने आप में अनुपम है। मुक्तिबोध की भाषा को समझना सामान्य छात्रों की तो दूर अच्छे-अच्छे विद्वानों के वश की भी बात नहीं है। इसी शैली के चीन में भी एक कवि 'लू शुन' हुए जिनकी लेखन कला जनसामान्य के समझ से परे की बात है। ऐसी दुरूह काव्य-कला का अनुवाद करना अत्यंत दुष्कर कार्य है जिसे 'हेमंत अदलखा और रमण सिन्हा' ने संपन्न किया है। यह कार्य इसलिए और भी महत्वपूर्ण हो जाता है कि चीनी भाषा को समझना बहुत मुश्किल कार्य है। इसकी कोई निश्चित लिपि नहीं है। यह संकेतात्मक लिपि में लिखी जाने वाली भाषा है जिसे आड़ी-तिरछी लकीरों और चित्रात्मक संकेतों के माध्यम से व्यक्त किया जाता है।

आधुनिक चीनी साहित्य के सर्वश्रेष्ठ चीनी साहित्यकारों में से एक 'लू शुन' (1881-1936) जिनका असली नाम 'चौ शू रन' था, कवि, संपादक, आलोचक, कथाकार, उपन्यासकार और निबंधकार भी थे। शुन आधुनिक चीनी जनभाषा और क्लासिकल चीनी, दोनों भाषा में लिखते थे। इनकी लेखन कला से प्रभावित हो 'माओ त्से तुंग' ने इनकी मृत्यु के पश्चात यह घोषणा की थी कि लू शुन का दर्शनशास्त्र नए समाजवादी चीन का दर्शनशास्त्र है। किंतु यह एक कटु सत्य है कि लू शुन ने आजीवन कभी भी चीन के कम्युनिस्ट पार्टी की सदस्यता नहीं ली। इनकी अन्य कृतियों से इतर 'जंगली घास' एक गद्यात्मक कविता है और इनकी अनुपम कृति भी, जो सबसे छोटी रचना है, लेकिन आधुनिक चीनी साहित्य को लू शुन द्वारा दी गई एक अमूल्य भेंट। इसमें कुल 23 गद्य कविताएँ हैं जो 1924-26 के बीच लिखी गई हैं। इसकी प्रस्तावना में स्वयं लू शुन लिखते हैं—"इतना तो कह ही सकता हूँ कि मेरे लिखे ये अधिकांश निबंध लघु लेख हैं और उजाड़ नर्क के हाशिए पर फूटते पीत्पुष्प की बौर की तरह हैं, और यही वजह है कि इन निबंधों को किसी भी दृष्टि से खूबसूरत लक्ष्य नहीं माना जा सकता। लेकिन यह भी निश्चित है कि इस नर्क का भी अंत तो होना है...इन निबंधों के बाद और फिर मैंने इस शैली में नहीं लिखा। वर्तमान समयचक्र जो प्रतिदिन तेजी से बदल रहा है, अब ऐसे लेखन और ऐसे विचारों को पनपने नहीं दे रहा है। मुझे लगता है यही सही है।" लू शुन के आलोचक टी. ए. शिया ने लिखा था—"इसमें ऐसा प्रामाणिक काव्य है जो अभी भ्रूण में है : तीव्र भावात्मक तीव्रता से ओतप्रोत बिंब, धुँधले और अनोखे आकार की पंक्तियों में बहते और रुकते हुए, मानो कोई पिघलता हुआ धातु किसी साँचे को ढूँढ़ पाने में असफल हो रहा हो।"

यदि जंगली घास की कविताओं की मूल भावनाओं में हम झाँकें तो इसमें कवि ने बिंबों और प्रतीकों के माध्यम से इतनी गहराई भरी बातें कही हैं कि उसे पकड़ पाना अत्यंत दुष्कर है। अपनी पहली कविता 'जाड़े की रात' का आरंभ ही कवि ने खजूर के दो पेड़ों को प्रतीक रूप में लिया है। पहली पंक्ति में वे लिखते हैं—"मेरे घर के पिछवाड़े की दीवार के पार दो पेड़ देखे जा सकते हैं, एक खजूर का पेड़ है और दूसरा भी खजूर का ही पेड़ है।" ऋतुओं का परिवर्तन जो एक स्वाभाविक प्रक्रिया है, इस पर वे सहज ढंग से लिखते हैं—"स्वाभाविक है पहले शिशिर का आना, फिर शीत का आना। और फिर बसंत का आना तो निश्चित ही है, जब होगी तितलियों की मटरगश्ती और भवरों की गुनगुनाहट।" 'परछाई की विदाई' में लिखते हैं—"अब तुम्हारा साथ मुझे आनंद नहीं देता। दोस्त, मुझे तुम्हारे साथ अब और नहीं रहना...", वहीं 'विलुप्तप्राय मेरा प्रेम' में वे कहते हैं—"पर्वतों के बीच रहता है मेरा सर्वस्व, प्रेम; चाहता हूँ उसे पाना पर है वह इतना ऊँचा..."। इस प्रकार बिंबों और प्रतीकों का सभी 23 गद्य कविता में जिस सटीकता के साथ कवि ने प्रयोग किया है, उसी सहजता के साथ अनुवादक ने उसे यथोचित सम्मान दिया है और अनुवाद के दौरान कविता की मूल भावना के साथ किसी प्रकार का खिलवाड़ न हो, इसका भी ध्यान रखा है। अनुवादक यह मानते हैं कि जहाँ कहीं मुझे किसी कठिन शब्द का सटीक हिंदी अर्थ नहीं मिला मैंने उसे यथावत चीनी भाषा में ही रहने दिया, जो अपने आप में ईमानदारी का नमूना है।

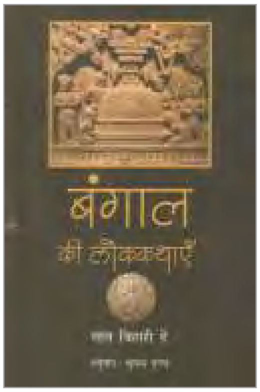

समीक्षक : **लक्ष्मी नारायण मित्तल**

लेखक : **लाल बिहारी डे**

अनुवादक : **सुषमा गुप्ता**

प्रकाशक : राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत, नई दिल्ली-110070

पृष्ठ : 212

मूल्य : रु. 230/-

बंगाल की लोक-कथाएँ

लोक-कथाएँ किसी भी समाज की आंतरिक धड़कन होती हैं। शिष्ट साहित्य की तुलना में लोक साहित्य उस समाज के जीवनयापन सोच-विचार और आचरण संहिता का लेखा-जोखा होता है।

लाल बिहारी डे द्वारा लिखित यह संग्रह पहले सन् 1883 में अंग्रेजी में छपा था। विशेषकर यह विदेशी पाठकों के लिए था क्योंकि सन् 1880 के दशक में आम जनता का अंग्रेजी से ज्यादा परिचय न था। हिंदी में अनूदित इस संग्रह में डे की 22 लोक-कथाएँ प्रस्तुत की गई हैं। इन कथाओं के मुख्य पात्र प्रायः राक्षस, भूत या जानवर हैं। इन्हीं पात्रों के इर्द-गिर्द कहानी का घटनाचक्र बुना गया है। इस कहानियों को मूल अंग्रेजी में लिखे यद्यपि डेढ़ सौ साल बीत चुके हैं, फिर भी बांग्ला संस्कृति में ये घटनाएँ आज भी प्रासंगिक हैं। कहानी का अंत सुखद होता है, मानो लेखक कहना चाहता है कि अंततः बुराई पर अच्छाई की विजय होती है।

सभी कहानियों का अंत सुखद है और कपटी का नाश करके सदाचार और शिष्टता की स्थापना दर्शाता है। 'आदमी जो संपूर्ण बनना चाहता है' में अंत में दिखलाया गया है कि कैसे कपटी संन्यासी का अंत काली माँ के सामने राजकुमार ने अपना सिर धड़ से अलग करके किया और इसके परिणामस्वरूप वे सब खोपड़ियाँ जीवित हो गईं जिनको उस संन्यासी ने कपट और धोखे से बंदी बना रखा था। इस प्रकार संन्यासी की पूजा अधूरी रह गई और सारी खोपड़ियाँ अपने-अपने शरीरों में जाकर जिंदा हो गईं और कथा का अंत सुखांत रहा।

इसी प्रकार 'भूतनी पत्नी' कहानी में बताया गया है कि कैसे एक भूतनी ने एक गरीब ब्राह्मण की पत्नी को बंदी बनाकर पेड़ के कोटर में डाल दिया था और स्वयं उस ब्राह्मण की पत्नी का स्वाँग करके उसके घर रहने लगी।

कथानक में भूतनी के चमत्कारों को भी बतलाया गया है कि कैसे वह लकड़ी न जलाकर स्वयं अपना पैर जलाकर भोजन तैयार कर देती थी और अपनी जादूगिरी से सब काम जल्दी-जल्दी खत्म कर देती थी। लोक धारणा है कि यदि किसी भूतनी को हल्दी की गाँठ जलाकर सुँघाई जाए तो वह इसकी गंध बरदाश्त नहीं कर सकती और उसका भेद खुल जाता है। आज भी ग्रामीण अंचल में और विशेषकर बंगाल में प्रायः कहा जाता है कि अमुक स्त्री पर कोई पिशाचिनी आ गई है और गाँव के ओझा अपने तंत्र-मंत्र से उस स्त्री को उस पिशाचिनी/भूतनी से छुड़ा देते हैं। भूतनी को जूतों से पीटना भी कहानी में वर्णित है जिसे आज भी गाँवों में ऐसी घटनाओं में देखा जा सकता है। लोक-कथाओं का अंत होता है—सुखद। इस कहानी का अंतिम वाक्य है—वे दोनों बहुत सालों तक खुशी-खुशी रहे।

अनेक कहानियों के पात्र जीव-जंतु हैं। यह भारतीय संस्कृति के सह-अस्तित्व को दर्शाता है कि पश्चिमी आधुनिक सोच के विपरीत भारतीय धारणा सह-अस्तित्व की है और यह धरती जितनी मानवों के लिए है उतनी ही वनस्पति जगत और जीव-जंतुओं के लिए भी है। 'शादी कराने वाला गीदड़' कहानी में एक जानवर मनुष्यों की बोली में राजकुमारियों से बात करता है। इसकी प्रेरणा शायद लेखक को 'पंचतंत्र की कहानियों' से मिली है। इस कहानी में एक गीदड़ कैसे एक गरीब जुलाहे का विवाह संपन्न घराने की राजकुमारी से करवा देता है और राजकुमारी को जब मालूम पड़ता है तो कैसे वह अपने पति को सचमुच का राजकुमार बना देती है। क्योंकि कहानी जीव-जंतुओं के इर्द-गिर्द है इसी से यह भी बतलाया गया है कि राजकुमारी ने धन-दौलत से संपन्न होने पर बीमार जानवरों के लिए कई अस्पताल बनवाए। असल में कहानी में अमीर बनने की जो युक्ति है, वह लोक-कथाओं का सार भी है।

लोक-कथाओं में चतुर बुद्धि की अपेक्षा जिसे कॉमन सैन्स कहते हैं, उसकी सफलता दिखलाई गई है। असली ब्राह्मण के स्थान पर एक भूत ब्राह्मण, गरीब ब्राह्मण के घर रहने लगा। व्यापार के सिलसिले से वापस आकर जब असली ब्राह्मण ने अपना स्थान ग्रहण करना चाहा तो भूत ब्राह्मण ने उसे टरका दिया। राजा भी उसका न्याय नहीं कर सका, पर चरवाहे जो राजा, वजीर और कोतवाल का स्वाँग कर रहे थे, उन्होंने नकली ब्राह्मण को बोतल में बंद कर दिया और असली ब्राह्मण को उसका हक मिल सका। कहानी का सार है कि जो न्याय शहर का राजा न कर सका, वह एक मामूली से चरवाहे ने पलभर में कर दिया। जैसे कि लोक-कथाओं के अंत में होता है—वह ब्राह्मण बहुत दिनों तक खुशी-खुशी रहा और उसके कई बेटी-बेटियाँ भी हुईं।

अनुवादक ने सरल हिंदी और मुहावरेदार शैली का प्रयोग किया है ताकि थोड़ी-सी भी हिंदी जानने वाला इनको पढ़ और समझ सके। ये लोक-कथाएँ मनोरंजन के साथ-साथ ज्ञानवर्धक भी हैं और जीवन के विभिन्न पक्षों में आने वाली विपदाओं का सरल व सीधा उपाय भी सुझाती हैं।

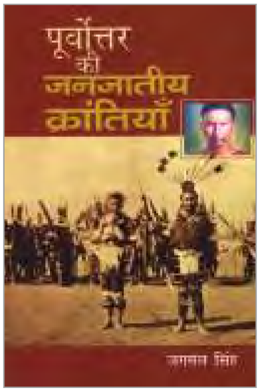

पूर्वोत्तर की जनजातीय क्रांतियाँ

समीक्षक : **प्रवीन कुमार**

लेखक : **जगमल सिंह**

प्रकाशक : राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत, नई दिल्ली-110070

पृष्ठ : 72

मूल्य : रु. 100/-

भारत के पूर्वोत्तर राज्यों में सैकड़ों जनजातियाँ अनेक दुर्गम पर्वतमालाओं के बीच घने जंगलों में निवास करती आ रही हैं। इन जनजातियों की प्रारंभ से ही स्वतंत्रताप्रिय अवधारणा थी। ये अपने शांतिप्रिय वातावरण में किसी दूसरे का हस्तक्षेप बरदाश्त नहीं करतीं, परंतु अंग्रेजों के अमानवीय कृत्यों से इनमें असंतोष फैलने लगा और इन जनजातियों ने 1784 में तिलका मांझी के नेतृत्व में संथाल क्रांति के माध्यम से अंग्रेजों के विरुद्ध विद्रोह शुरू कर दिया। हालाँकि भारत में इस तरह की अनेक जनजातीय क्रांतियाँ हुईं, परंतु इतिहास में उनका विवरण बहुत संक्षेप में मिलता है। जिनका विवरण उपलब्ध है उनमें मिजो क्रांति, डिमासा क्रांति, कूकी क्रांति, कबुई क्रांति, रियाँग क्रांति प्रमुख हैं। इन जनजातियों ने भारत की स्वाधीनता की लड़ाई में अप्रतिम वीरता का परिचय दिया। हालाँकि ये क्रांतियाँ असफल रहीं, लेकिन बावजूद इसके ये इतिहास के ग्रंथों में स्वर्णाक्षरों में अंकित हो गईं। इस पुस्तक में पूर्वोत्तर की अनेक अज्ञात या अल्पज्ञात जनजातीय क्रांतियों के बारे में विस्तृत चर्चा की गई है।

मिजोरम के जनजातीय लोगों ने अंग्रेजों से अपनी स्वाधीनता एवं संसाधनों की रक्षा हेतु मिजो क्रांति की। जब ईस्ट इंडिया कंपनी ने 1777 में इनके क्षेत्रों में हस्तक्षेप आरंभ किया तो मिजो लोगों ने अंग्रेजों के विरुद्ध क्रांति का बिगुल फूँक दिया। मिजोरम की क्रांति अभूतपूर्व सिद्ध हुई। मिजो-लुसाई जनजातियाँ 15 अगस्त, 1947 तक निरंतर चाय बागानों को अंग्रेजों से मुक्त कराने के लिए संघर्षरत रहीं।

पूर्वोत्तर राज्य सिक्किम में लेपचा और भूटिया जनजातियों के मध्य भ्रातृवत संबंध थे। इन्होंने मिलकर अंग्रेजों के विरुद्ध क्रांतियाँ की थीं। यह क्रांतियों का ही परिणाम था कि अंग्रेजों ने वार्षिक धन देकर क्रांतिकारियों से संधियाँ कीं। सिक्किम के लेपचा-भूटिया जनों की सहायता से ही नामग्याल अंग्रेजों से लड़ सके। वास्तव में ये जनजातीय लोग ही प्रत्येक क्रांति के वीर योद्धा थे।

अरुणाचल में अनेक जनजातियाँ कबिलाई व्यवस्था अपनाकर निवास करती रही हैं, परिणामतः आपस में सांघातिक विरोध के चलते संघर्ष एवं गृहयुद्ध होते रहे। अंग्रेजों ने इन लोगों पर आधिपत्य स्थापित करने के लिए इनके आपसी मतभेदों का भरपूर लाभ उठाया। फलतः, इन जनजातियों में टकराव हुआ और ये जनजातियाँ विद्रोह के लिए मुखर हो उठीं, लेकिन अंग्रेजों के विरुद्ध अलग-अलग नेतृत्व में विद्रोह होने के कारण अपेक्षित सफलता नहीं मिली।

मेघालय की खासी, गारो और जयंतियाँ पर्वतमालाओं में निवास करने वाली निडर, साहसी जनजातियों ने ब्रिटिश हुकूमत का कड़ा मुकाबला किया। उ रामसिंह, उ कियाँग एवं उ तिरोत सिंह द्वारा किए गए कृत्य एवं बलिदान वंदनीय, अभिनंदनीय एवं चिरस्मरणीय हैं। वहीं नगा क्षेत्र में चाय और पेट्रोलियम पदार्थों की प्रचुरता के कारण अंग्रेजों ने अपने व्यापारिक हितों को पूरा करने के लिए आधिपत्य हासिल करने के लिए पुरजोर कोशिश की जिसके फलस्वरूप नगा क्रांति हुई। नगा एवं अंग्रेजों के बीच हुए युद्धों एवं क्रांतियों की स्मृति कथाएँ, लोक गीत और लोक गाथाएँ अंगामी क्षेत्र में आज भी प्रचलित हैं।

डिमासा जाति का इतिहास युद्ध एवं संघर्षों से रक्त रंजित है। अंग्रेजों के अतिक्रमण से ये स्वतंत्रताप्रिय जनजातीय लोग अस्त-व्यस्त हो गए। वीर सम्बूधन के नेतृत्व में डिमासा क्रांति हुई। डिमासा लोग सम्बूधन को आज भी देवता की तरह पूजते हैं। उनका नाम डिमासा इतिहास में स्वर्णाक्षरों में अंकित है।

मणिपुर के जनजातीय इतिहास में दो महत्वपूर्ण घटनाएँ घटित हुईं। इनमें पहली थी—कूकी जनजातीय क्रांति (1917-1919)। कूकी क्रांति एक व्यक्ति के नेतृत्व में नहीं लड़ी गई, बल्कि यह समूह द्वारा लड़ी गई थी। यह इतिहास की सबसे बड़ी जनजातीय क्रांति थी। दूसरी थी—कबुई या जलियांग क्रांति (1930-32)। जब अंग्रेजों ने इन लोगों पर गुलामों जैसा व्यवहार करना शुरू किया तो कबुई जनजाति के जादोनाङ् ने उनके विरुद्ध विद्रोह शुरू कर दिया, किंतु 1931 में न्याय के नाम पर अंग्रेजों ने जादोनाङ् को फाँसी की सजा दे दी। उनके पश्चात रानी गाइडिन्ल्यू के नेतृत्व में स्वतंत्रता संग्राम अविरल गति से चलता रहा।

त्रिपुरा की जनजातियों ने 1765 से 1863 के बीच स्वाधीनता के लिए सशस्त्र संघर्ष किया, किंतु उन्हें सफलता नहीं मिली। 1943 में रतनमणि के नेतृत्व में रियांग क्रांति हुई। यह क्रांति मात्र एक माह की क्रांति थी। यह क्रांति भी पूर्व की क्रांतियों की भाँति असफल रही।

इस पुस्तक में पूर्वोत्तर की जनजातीय क्रांतियों के प्रत्येक पहलू को तथ्यपरकता एवं बारीकी से उकेरा है। पुस्तक बहुत ही रोचक एवं जानकारीपरक है।

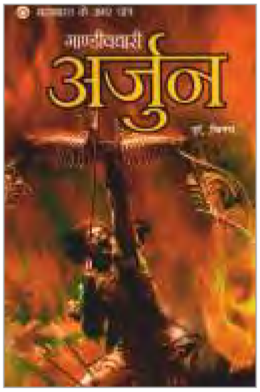

गांडीवधारी अर्जुन

समीक्षक : **मोहन शर्मा**

लेखक : **डॉ. विनय**

प्रकाशक : मंजुल पब्लिशिंग हाउस, भोपाल।

पृष्ठ : 160

मूल्य : रु. 150/-

महाभारत के अमर पात्रों में गांडीवधारी अर्जुन का नाम श्रेष्ठतम है और यह पुस्तक उनके जीवन-दर्शन का आख्यान प्रस्तुत करती है। लेखक ने पुस्तक को इस ढंग से लिखा है कि पात्र से संबंधित सभी प्रसंग क्रमवार आ गए हैं। अर्जुन के जन्म से लेकर उनकी शिक्षा-दीक्षा, द्रौपदी स्वयंवर में उनका पराक्रम, दृढ़प्रतिज्ञ अर्जुन का वनवास, अग्निदेव की क्षुधा शांत करने हेतु खांडव वन दहन में देवराज इंद्र से टकराव, अपने ज्येष्ठ भ्राता की इच्छापूर्ति हेतु दिग्विजय यात्रा, तपोपरांत दिव्यास्त्रों की प्राप्ति, किन्नर रूप धारण कर विराट नगरी की विजय निश्चित करना, महाभारत के युद्ध क्षेत्र में भीष्म पितामह, गुरु द्रोण, दुर्योधन, दुशासन, कर्ण आदि महारथियों से टक्कर लेना, दृढ़प्रतिज्ञ रहकर जयद्रथ वध को अंजाम देने के साथ-साथ श्रीकृष्ण का मित्रवत व्यवहार, असमंजस परिस्थितियों में सारथी रूपी वासुदेव के ज्ञानपरक उपदेशों का अनुपालन, श्रीकृष्ण का द्वारका नगरी को प्रस्थान, श्रेष्ठ धनुर्धारी द्वारा कर्तव्य का निर्वाह करते हुए यज्ञ अश्व की रक्षा करना, अर्जुन का परलोकगमन आदि प्रसंगों को लेखक ने बड़े ही खूबसूरत ढंग से शब्दों में पिरोया है।

महाभारत, जिसका ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद एवं अथर्ववेद के पश्चात पाँचवें वेद के रूप में व्याख्यान जग प्रसिद्ध है, वह भारतीय संस्कृति का अन्यतम ग्रंथ है, जिसमें न्याय, शिक्षा, युद्ध नीति, योगशास्त्र, अर्थशास्त्र, धर्मशास्त्र, मोक्ष आदि विषयों पर गहन चिंतन प्रस्तुत किया गया है अर्थात यह ग्रंथ समस्त मानव-जीवन का दर्शन है। लेखक ने भी पुस्तक की भूमिका में इस बात के साक्ष्य दिए हैं कि धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के संदर्भ में जो कुछ इस ग्रंथ में है, वही और स्थानों पर है और जो इसमें नहीं है, वह कहीं नहीं है। भक्ति की दृष्टि से महाभारत के प्रतिपाद्य श्रीकृष्ण हैं और जो पात्र उनके अनुकूल नहीं है, वह मानवता-विरोधी, अधर्मी और त्याज्य है। लेखक डॉ. विनय की यह पुस्तक इसलिए भी अधिक महत्वपूर्ण है, क्योंकि इसके मुख्य पात्र श्रीकृष्ण के घनिष्ठ सखा, प्रिय शिष्य और बहनोई गांडीवधारी अर्जुन हैं, जिन्होंने हर पग पर श्रीहरि की भक्ति पर विश्वास रखा और हर मुश्किल घड़ी में स्वयं को उनके सहारे छोड़ दिया। प्रभु की कृपा ऐसी रही कि पाँचों पांडुपुत्रों में से अर्जुन श्रीहरि के सर्वप्रिय बन गए और जीवनभर वे प्रभु-भक्ति की कृपा के पात्र बने रहे। इस पात्र में ऐसे क्या विचित्र गुण थे, जिनके चलते ये श्रीवासुदेव के प्रिय व घनिष्ठ बन गए इससे परदा उठाने के प्रयोजनार्थ रचित यह पुस्तक अर्जुन के जन्म से परलोकगमन तक के वृत्तांत पर प्रकाश डालती है।

जब किंदम मुनि कुमार के शाप से ग्रस्त हस्तिनापुर नरेश पांडु वानप्रस्थ जीवन व्यतीत कर रहे थे, तब उनकी पत्नियों कुंती और माद्री ने पुत्र रत्न की प्राप्ति हेतु धर्मराज, वायुदेव, इंद्रदेव और अश्विनी कुमार का आह्वान किया, जिनमें से इंद्रदेव की कृपा से अर्जुन ने जन्म लिया। तत्पश्चात आकाशवाणी हुई, जिसे डॉ. विनय ने अपनी पुस्तक में प्रभावशाली शब्दों का प्रयोग कर प्रस्तुत किया है—'हे कुंती! यह बालक कार्त्तवीर्य अर्जुन और भगवान शंकर के समान पराक्रमी तथा इंद्र के समान अपराजित होकर तुम्हारा यश बढ़ाएगा, जैसे विष्णु ने अपनी माँ अदिति को प्रसन्न किया था, वैसे ही यह तुम्हें प्रसन्न करेगा। तुम्हारा यह पुत्र बहुत से सामंतों को पराजित करेगा, राजाओं पर विजय प्राप्त करके अश्वमेध यज्ञ करेगा। स्वयं भगवान रुद्र भी इसके पराक्रम से प्रसन्न होकर इसे पाशुपत अस्त्र प्रदान करेंगे। यह इंद्र की आज्ञा से निवात कवच आदि राक्षसों का संहार करेगा और अपने श्रम एवं कर्तव्यनिष्ठा से सारे दिव्य अस्त्र प्राप्त करेगा।' यहाँ लेखक ने अर्जुन के समस्त परिचयात्मक गुणों को चंद शब्दों में समेटा है, ऐसा कार्य एक अध्ययनशील व सफल लेखक की सामर्थ्य से ही संभव है। लेखक ने अर्जुन के हरेक प्रसंग को छोटी-छोटी प्रेरक कथाओं के रूप में प्रस्तुत किया है, जिन्हें पढ़कर पात्र के जीवन से जुड़ा संशय रह जाए, ऐसा कहीं मालूम नहीं होता। फिर चाहे बालक अर्जुन की शिक्षा-दीक्षा का वह प्रसंग हो, जिसमें शिष्य के मन की एकाग्रता जाँचने के उद्देश्य से गुरु द्रोण ने पेड़ पर टँगी एक नकली चिड़िया पर निशाना लगाने का आदेश दिया था या द्रौपदी स्वयंवर में रखी गई शर्त को ब्राह्मण वेशधारी अर्जुन द्वारा पूरा करने का प्रसंग हो या अर्जुन द्वारा विभिन्न देवों को प्रसन्न कर अस्त्र धारण करने की घटना हो, सभी को लेखक ने कथा रूप में बड़े ही अच्छे ढंग से प्रस्तुत किया है।

उपन्यास के एक स्थान पर लेखक ने खांडव वन दहन के उस रहस्य को भी खोला है, जिसमें अग्निदेव की क्षुधा शांत करने के लिए अर्जुन और वासुदेव ने उनकी सहायता की थी तथा उन्होंने तेजोमय दावानल का प्रदीप्त रूप धारण कर अपनी सातों ज्वालाओं से सुंदर खांडव वन को घेर वहाँ प्रलय का वातावरण विकसित कर दिया था। इस दौरान खांडव वन की रक्षा के लिए आए इंद्र आदि देवताओं और अर्जुन के मध्य भयंकर युद्ध किया, जिसमें अर्जुन के कोप का शिकार लगभग देव हुए। तभी भविष्यवाणी से इंद्र आदि देवों को ज्ञान हुआ कि काल रूपी श्रीकृष्ण व कोपित अर्जुन ही देवों के चिर-परिचित नर-नारायण हैं। तत्पश्चात इंद्र ने अस्त्र वापस ले लिए तथा श्रीकृष्ण व अर्जुन के समक्ष आकांक्षी बनकर प्रस्तुत हुए। लेखक ने इस प्रसंग की एक-एक कड़ी को भलीभाँति जोड़ा है जिसके पठन के पश्चात समस्त रहस्यों पर से परदा उठ जाता है तथा तपस्वी अर्जुन द्वारा देवों के देव महादेव को प्रसन्न कर देवराज इंद्र द्वारा दिए जाने वाले अपने समस्त अस्त्रों को अर्जुन को भेंट करने की पृष्ठभूमि भी तैयार हो जाती है।

आजादी का अमृत महोत्सव

"हमें भगतसिंह, नेताजी सुभाषचंद्र बोस, गांधी, टैगोर, सावरकर, कर्तार सिंह सराभा का भारत बनाना है। जब तक देश को अपने अंदर नहीं जिएँगे तब तक ऐसा नहीं हो सकता। हम स्वाधीनता की 75वीं वर्षगाँठ के रूप में शहीदों पर 75 पुस्तकें प्रकाशित करने जा रहे हैं। दुनिया उन्हें माला पहनाएगी और हम उनकी कहानियाँ लिखेंगे।" उक्त उद्गार राष्ट्रीय पुस्तक न्यास के निदेशक श्री युवराज मलिक ने 'आजादी का अमृत महोत्सव' कार्यक्रम के दौरान व्यक्त किए। श्री मलिक ने दांडी मार्च से पहले महात्मा गांधी द्वारा दिए गए भाषण को संदर्भित करते हुए कहा कि उन्होंने कहा था कि हम रहें न रहें, हमारे पीछे कारवाँ आते रहेंगे, इसी प्रकार जब तक आप लक्ष्य की प्राप्ति न कर लें, आप के सामने कितनी भी बाधाएँ आएँ, आप न रुकें। जब लक्ष्य बड़ा होता है तब सफलता और असफलता का कोई मूल्य नहीं होता और वह साधारण व्यक्ति को आसाधारण बना देती है। उन्होंने 'एक काम देश के नाम' की अपील के साथ अपने उद्गार समाप्त किए।

ध्यातव्य है कि आजादी की 75वीं वर्षगाँठ को समर्पित 'आजादी का अमृत महोत्सव' का आयोजन महात्मा गांधी के दांडी मार्च यानी 12 मार्च को साबरमती आश्रम से किया गया। देश निर्माण में अहम भूमिका निभाने वाले अग्रणी संस्थान राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत भी इस महोत्सव में बढ़-चढ़ कर भाग ले रहा है। इस संबंध में न्यास परिसर में आयोजित कार्यक्रम में हिंदी भाषा के संपादक श्री पंकज चतुर्वेदी ने कहा कि जब हम देश की आजादी की बात करते हैं तो हमें किसानों और आदिवासी संघर्षों की बात अवश्य करनी चाहिए जिन्होंने देश हित में सर्वत्र न्योछावर कर दिया। मेरे सपनों का देश कैसा होगा?, हमारे कर्तव्य व अधिकार क्या होंगे?, और इस देश की प्रशासनिक व्यवस्था कैसे चलेगी?, यह तय करना भी स्वाधीनता की लड़ाई का उद्देश्य था। हमें स्वाधीनता की लड़ाई का विश्लेषण करना है। आजादी में सभी समुदायों के योगदान का इतिहास हमसे अछूता है। न्यास के संपादक श्री कुमार विक्रम ने कहा कि गांधीजी के नेतृत्व में स्वतंत्रता का आंदोलन चला। देश के कोने-कोने से लोगों ने उनके इस आंदोलन में भाग लिया। अलग-अलग तरीकों से आई ऐतिहासिक क्रांति का प्रचार-प्रसार हुआ। कार्यक्रम का संचालन न्यास के उप निदेशक श्री राकेश कुमार ने किया।

अमृतसर साहित्य उत्सव

खालसा कॉलेज, अमृतसर में आयोजित चार दिवसीय साहित्य उत्सव (02-05 मार्च, 2021) में राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत ने भागीदारी की। उद्घाटन सत्र में विशिष्ट अतिथि के रूप में न्यास के निदेशक श्री युवराज मलिक ने शिरकत की, जबकि मुख्य अतिथि पदमंत्री सरजीत पातर थे। कार्यक्रम की अध्यक्षता खालसा कॉलेज गवर्निंग कौंसिल के सचिव सरदार राजेन्द्र मोहन सिंह छीना ने की। अतिथियों का स्वागत खालसा कॉलेज के प्राचार्य डॉ. महल सिंह ने किया। श्री मलिक ने कहा कि खालसा कॉलेज में दाखिल होते ही ऐसा लगता है कि जैसे इतिहास में प्रवेश कर लिया है। उन्होंने राष्ट्रीय शिक्षा नीति तथा मातृभाषाओं के महत्व संबंधी जानकारी दी। साथ ही, 'प्रधानमंत्री मेंटरशिप योजना' के बारे में भी बताया। पूरे साहित्य उत्सव के दौरान कई गोष्ठियाँ और सांस्कृतिक कार्यक्रम आयोजित किए गए। इन कार्यक्रमों में विद्यार्थी तथा स्थानीय लोग बड़ी संख्या में शामिल हुए।

रीडर्स क्लब मूवमेंट पर ओरिएंटेशन प्रोग्राम

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत द्वारा लखनऊ में समग्र शिक्षा के तहत स्कूलों में पाठक मंच स्थापित करने के लिए रीडर्स क्लब मूवमेंट पर एक ओरिएंटेशन प्रोग्राम आयोजित किया गया। कार्यक्रम में सेवानिवृत्त अतिरिक्त मुख्य सचिव, उच्च शिक्षा विभाग, उत्तर प्रदेश व रा.पु. न्यास की समिति सदस्य डॉ. अनिता भटनागर जैन ने शिक्षकों की प्रशंसा करते

हुए कहा कि वे भविष्य गुरु हैं और कुम्हार की तरह हैं जो विद्यार्थियों के मस्तिष्क को सही दिशा देते हैं। न्यास के राष्ट्रीय बाल साहित्य केंद्र की संपा. सुश्री कंचन वांचु शर्मा ने बताया कि कैसे पुस्तकालयों को रोचक और आकर्षक बनाकर बच्चों में पुस्तक पठन की अभिरुचि को विकसित किया जाए? कार्यक्रम में 1400 शिक्षकों, पुस्तकालयाध्यक्षों, शिक्षाविदों और शिक्षा विभाग के अधिकारियों ने भाग लिया।

लेखक-चित्रकार कार्यशाला आयोजित

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास और सिक्किम अकादमी के संयुक्त तत्वावधान में चार दिवसीय (23-26 मार्च, 2021) लेखक-चित्रकार कार्यशाला का आयोजन सर ताशी नमग्याल सीनियर सेकेंडरी स्कूल, गंगटोक, सिक्किम में किया गया। कार्यशाला का उद्देश्य मूल नेपाली और बांग्ला बाल पुस्तक विकसित करना है।

सफल आयोजन के लिए राष्ट्रीय पुस्तक न्यास के अध्यक्ष श्री गोविंद प्रसाद शर्मा ने सभी लेखकों और चित्रकारों को बधाई देते हुए उन्हें स्थानीय कहानियों, संस्कृति और लोकाचार से समृद्ध सामग्री सृजन के लिए प्रोत्साहित किया। उन्होंने कहा कि बाल साहित्य सभ्यता की रीढ़ है और इसे सर्वाधिक महत्व दिया जाना चाहिए। कार्यशाला के दौरान पुस्तक प्रदर्शनी भी आयोजित की गई।

अगरतला पुस्तक मेला

भोपाल पुस्तक मेला

स. बलबीर सिंह जुनेजा स्टेडियम, रायपुर पुस्तक मेला

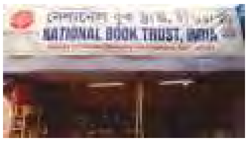

डिब्रूगढ़ पुस्तक मेला

लखनऊ पुस्तक मेला

पाठकीय प्रतिक्रिया

पत्रिका का नवंबर-दिसंबर 2020 अंक प्राप्त हुआ जिसमें प्रकाशित—'राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 : दिशा व दृष्टि' लेख पढ़कर बहुत अच्छा लगा। आजादी के बाद शिक्षा के सुधार के लिए गठित आयोगों, राष्ट्रीय शिक्षा नीतियों (1968 व यथा संशोधित-1986) व राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 के बीच के अंतर को बेहद तार्किक तथ्यों के साथ रखा गया है। यह लेख इस बात पर प्रकाश डालता है कि नई शिक्षा नीति भारत के लिए बेहद जरूरी क्यों है? इस बात चिंता की गई है कि पुरानी शिक्षा नीतियों में क्या खामियाँ रहीं और इसमें पाश्चात्य संस्कृति का कितना प्रभाव था। लेख प्रश्न उठाता है कि कई सालों से भारत अपनी शिक्षा नीति क्यों नहीं लागू कर पाया? यूरोपियन सोच और वामपंथी विचारधारा किस तरह से हावी रही कि भारत को इस ओर कदम उठाने में इतना समय लग गया? राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 लागू होने के बाद से इस विषय को लेकर कई लेख लिखे गए, मगर आपका लेख 'दिशा व दृष्टि' देता है। विदेशी हुकूमत भारत को आजाद तो कर गई, मगर उन्होंने अपनी शिक्षा नीति के प्रभाव को जमाए रखा। आजादी से लेकर अब तक भारतीयों की सोच हमेशा विदेशियों के अधीन रही। पिछले 150 सालों से विदेशी विश्वविद्यालय भारतीयों को आकर्षित करते रहे हैं। एक समय में भारत की शिक्षा विदेशियों को यहाँ पढ़ने को मजबूर करती थी। कई विदेशी यात्रियों ने यहाँ पढ़कर ज्ञान प्राप्त किया, मगर क्या कारण रहे कि हम अपनी संस्कृति को सँभालकर नहीं रख पाए, आपके लेख में यह चिंता दिखती है। यह नीति नए भारत की अवधारणा को साकार करने के लिए है। आपका लेख विश्वास दिलाता है कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 से भारत वैश्विक स्तर पर महाशक्ति जल्द बनेगा।

अंशुल शर्मा (उप संपा., दैनिक जागरण), कौशलपुरी, कानपुर।

पत्रिका का मार्च-अप्रैल 2021 अंक 'लोककला विशेषांक' प्राप्त हुआ, जिसमें सभी लेख स्तरीय हैं। संपादन की कुशलता लेखों में साफ दिखाई देती है। संपादकीय टीम को बहुत-बहुत साधुवाद!

प्रो. गोविंद प्रसाद शर्मा का संपादकीय हमारी सांस्कृतिक विरासत और वर्तमान के बीच एक सेतु का कार्य करता है। यह हमारी समग्र सांस्कृतिक विरासत पर सकारात्मक दृष्टिकोण का निर्माण करता है। इसमें भारतीय प्राचीन ज्ञान परंपरा, सांस्कृतिक मूल्यों तथा प्रकृति द्वारा प्राप्त विरासत के विषय में बहुत ही सरल, सहज भाषा में व्याख्या की गई है। पत्रिका का आवरण पृष्ठ बहुत ही आकर्षक है। मुझे पूरा विश्वास है कि साहित्य एवं पठन संस्कृति को बढ़ावा देने के लिए यह पत्रिका भविष्य में भी कारगर साबित होगी।

सौरभ सिंह राजावत, सदस्य (हिंदी साहित्य संग्रह, साहित्य वेब पोर्टल)

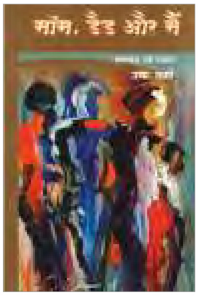

मॉम, डैड और मैं

उषा वर्मा

यह उपन्यास उषा वर्मा, दिव्या माथुर, वंदना मुकेश शर्मा, कादंबरी मेहरा, उषा राजे सक्सेना, रमा जोशी और कविता वाचक्नवी जैसी सात नामचीन लेखिकाओं का सामूहिक प्रयास है। इसका प्रेरक तत्व आज की समकालीन समस्याओं से गुजरना है। इसमें विदेशी परिवेश और भारतीय संस्कारों की टकराहट को भी दिखाया गया है।

अनामिका प्रकाशन, इलाहाबाद।

पृ. 144; रु. 495.00

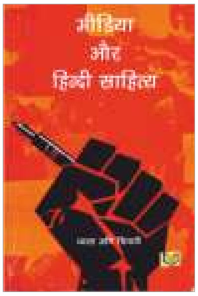

मीडिया और हिंदी साहित्य

व्यास मणि त्रिपाठी

मीडिया और साहित्य की समाज-निर्माण में अहम भूमिका है। 17 निबंधों की इस पुस्तक में मीडिया और हिंदी साहित्य के अंतर्संबंध, भाषा शिक्षण में सोशल मीडिया की भूमिका, राष्ट्रीय आंदोलनों में हिंदी पत्रकारिता के योगदान, राष्ट्रीय एकता में हिंदी तथा उसके भविष्य पर विचार किया गया है। साथ ही राम विलास शर्मा, हजारी प्रसाद द्विवेदी, दिनकर तथा भवानी प्रसाद मिश्र के विचार व दृष्टिकोण को भी इसमें शामिल किया गया है।

इंडिया नेटबुक्स, नोएडा।

पृ. 176; रु. 250.00

मेरे राम का रंग मजीठ है

सदानंद शाही

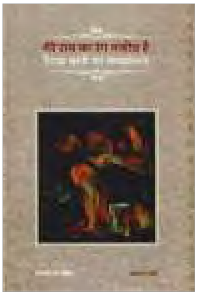

इस पुस्तक में संत रैदास की बानी को आधुनिक हिंदी में प्रस्तुत किया गया है। इसमें 41 पद्य हैं, जिनका भाव सरल व सहज रूप से समझाने के लिए सदानंद शाही ने पद्यों का आधुनिक हिंदी में रूपांतरण किया है, ताकि नई पीढ़ी के लोगों को भी नए सिरे से रैदास बानी को जानने-समझने का अवसर मिल सके।

लोकायत प्रकाशन, वाराणसी।

पृ. 144; रु. 100.00

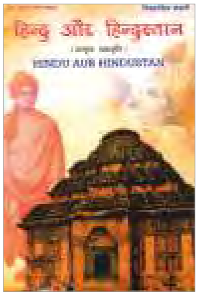

हिंदू और हिंदुस्तान

विश्वामित्र भंडारी

यह पुस्तक हिंदू धर्म और हिंदुस्तान के बीच संबंध को स्थापित करती है। इसमें कुल 16 निबंध हैं, जिनके माध्यम से हिंदूवादी विचारधारा, जीवनचर्या, संस्कृति, ग्रंथ, दर्शन, ज्योतिष विज्ञान, योग-विद्या आदि के बारे में बताया गया है। विदेशों में हिंदू संस्कृति व विचारों का किस तरह प्रचार हुआ, इसकी चर्चा भी इसमें है।

व्हाइट फाल्कन पब्लिशिंग, चंडीगढ़।

पृ. 102; रु. 220.00

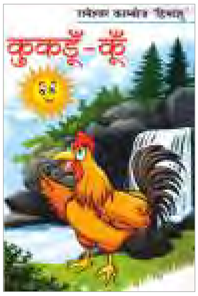

कुकड़ूँ-कूँ

रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु'

यह 54 बाल-कविताओं का संग्रह है। इसमें विविध विषयों पर आधारित छोटी-छोटी रोचक कविताएँ हैं, जिनमें प्रार्थना, माता-पिता, मोर, रेल चली, गुड़िया रानी, तारे, तिरंगा, फल, तोता, मोटूराम, प्यारे बादल, हरी पत्तियाँ, सावन आया, विद्यालय, नन्ही चींटी, मेरा घोड़ा, मदारी आदि शीर्षक शामिल हैं।

अयन प्रकाशन, मेहरौली, नई दिल्ली।

पृ. 40; रु. 50.00

जन्नत एवं अन्य कहानियाँ

पंकज साहा

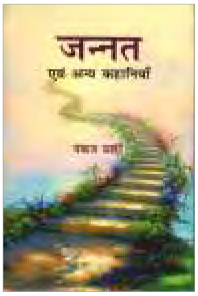

यह पुस्तक कहानी संग्रह है, जिसमें 16 कहानियाँ हैं। ये कहानियाँ किसी परंपरा या प्रवृत्ति को ध्यान में रखकर नहीं लिखी गई हैं, बल्कि इनमें निज मन की व्यथा के अलावा परिवार, समाज, देश, प्रेम, मानवता और युग-सत्य को कथा के आवरण में प्रस्तुत करने की चेष्टा की गई है।

आनन्द प्रकाशन, कोलकाता।

पृ. 104; रु. 250.00

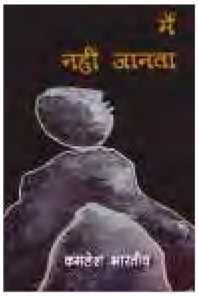

मैं नहीं जानता

कमलेश भारतीय

यह पुस्तक प्रसिद्ध लेखक कमलेश भारतीय का लघुकथा संग्रह है। इसमें लगभग पाँच दशकों में उनके द्वारा लिखित 100 से अधिक लघुकथाएँ हैं, जिनमें जन्मदिन, ईश्वर का जन्म, शर्त, चुभन, ख़याल, परंपरा, रिश्ते, बैग, ओले, मन का चोर, इतनी सी बात आदि सम्मिलित हैं। इनमें जीवन के लगभग हर खट्टे-मीठे अनुभव का प्रवेश मिलता है।

हंस प्रकाशन, नई दिल्ली।

पृ. 136; रु. 195.00

शिक्षा ही समाधान

डॉ. संजय कुमार

शिक्षा क्या है? समस्याओं के समाधान में शिक्षा की भूमिका क्या है? भारत में शिक्षा का वर्तमान स्वरूप कैसा है? उसकी दशा कैसी है? उसमें सुधार करने के लिए क्या-क्या प्रयत्न किए जा सकते हैं? इन सब विषयों को ध्यान में रखते हुए यह पुस्तक लिखी गई है। इसमें राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के सुधारात्मक पहलुओं पर भी प्रकाश डाला गया है तथा शिक्षक, अभिभावक और विद्यार्थियों के लिए भी कुछ सुझाव दिए गए हैं।

परिकल्पना, लक्ष्मी नगर, दिल्ली।

पृ. 152; रु. 350.00

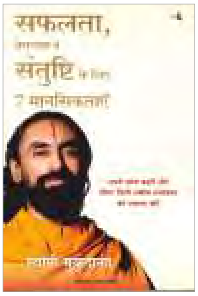

सफलता, प्रसन्नता व संतुष्टि के लिए 7 मानसिकताएँ

स्वामी मुकुंदानंद

अनुवाद : **रचना भोला 'यामिनी'**

मनुष्य की मानसिकता ही उसका भविष्य निर्धारित करती है। इस पुस्तक में सात मानसिकताओं को विकसित करने के लिए प्रेरित किया है, जिसके बाद मानव-जीवन में सफलता, प्रसन्नता व संतुष्टि का भाव प्राप्त करना संभव होगा तथा अपनी सोच बदलने और अपने भीतर छिपी असीम संभावनाओं को उजागर करने का अवसर मिलेगा।

मंजुल प्रकाशन, भोपाल।

पृ. 200; रु. 250.00

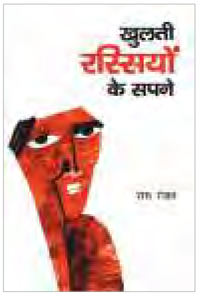

खुलती रस्सियों के सपने

राग रंजन

इस काव्य संकलन में 80 से अधिक कविताएँ हैं। इन छोटी-छोटी, कुछेक लंबी रचनाओं के माध्यम से कवि ने जीवन के विविध पहलुओं का उल्लेख किया है। मेरी कहानी, रियाज, पहले के बहुत पहले, पापा सब ठीक कर देते हैं, मरता हुआ आदमी, रात की बारिशों में, नींद का गाँव, आवाजें, आत्मा, पीत होते पात, कितने सारे सपने आदि शीर्षक इस संकलन में शामिल हैं।

लिटिल बर्ड पब्लिकेशन, नई दिल्ली।

पृ. 108; रु. 325.00

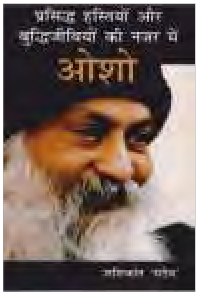

प्रसिद्ध हस्तियों और बुद्धिजीवियों की नजर में ओशो

शशिकांत 'सदैव'

इस पुस्तक में ओशो के प्रति बुद्धिजीवियों और कला जगत की प्रसिद्ध हस्तियों के क्या विचार हैं, इस बारे में बताया गया है। इसमें उन लोगों ने अपने शब्दों में ओशो के व्यक्तित्व, उनकी विचारधारा, वाणी, लेखन, प्रवचन के प्रभाव तथा समाज को दिए गए उनके योगदान के बारे में बताया है।

डायमंड बुक्स, नई दिल्ली।

पृ. 254; रु. 250.00

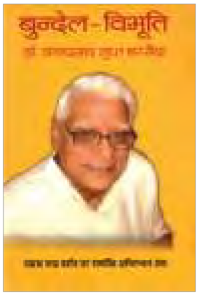

बुंदेल-विभूति

डॉ. गंगाप्रसाद गुप्त बरसैंया

यह पुस्तक बहुमुखी प्रतिभा के धनी, साहित्यकार, समीक्षक, कवि और श्रेष्ठ व्यंग्यकार, बुंदेल-विभूति डॉ. गंगाप्रसाद बरसैंया की जीवनी है। इसमें उनका परिचय, शिक्षा, साहित्यिक यात्रा, अनुभव के साथ-साथ प्रसिद्ध साहित्यकारों के गुप्तजी के प्रति विचार प्रस्तुत किए गए हैं। इसमें प्रसिद्ध साहित्यकारों के पत्रों का संकलन भी है जो बरसैंयाजी के नाम लिखे गए थे।

अनुज्ञा बुक्स, नई दिल्ली।

पृ. 544; रु. 999.00

RNI NO. DELHIN / 2016 / 68219

मनोरंजन, ज्ञान और जिज्ञासा की अनूठी दुनिया!

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत के कुछ नए प्रकाशन

विज्ञान संचार और संचारक

डॉ. मनीष मोहन गोरे

समाज में विज्ञान संचार के मायने व उद्देश्य, विज्ञान संचार की पृष्ठभूमि, भारतीय भाषाओं में विज्ञान संचार के साथ-साथ प्रतिष्ठित विज्ञान संचारकों के विचारों व उनके संवाद से निकले निष्कर्ष को इस पुस्तक में शामिल किया गया है। इसमें भारत में विज्ञान नीतियों, अनुच्छेद 51A(h) पर भी चर्चा की गई है।

पृ. 186; रु. 200.00

वंदना मुकेश : संकलित कहानियाँ

वंदना मुकेश

यह 12 कहानियों का संकलन है, जिसमें बचपन से लेकर आज तक के आस-पास के अनुभवों व घटनाओं को उन्होंने कहानियों के जरिए पाठकों तक पहुँचाने का प्रयास किया है। इसमें मशीन, छाँह, घर, ऋण, साजिदा नसरीन, छोटी-सी बात, चाची, गॉड ब्लैस यू, फ्री लंच, बिल्ली, तस्वीरें बोलती हैं, आदि रचनाएँ हैं।

पृ. 98; रु. 125.00

बापू एक कर्मयोगी

प्रो. जे. एस. राजपूत, मधुपंत

चित्र : **दीपक कुमार**

महात्मा गांधी यानी बापू 'कर्म के पुजारी' थे। उनके हर कर्म में उनका जीवन-दर्शन छिपा था। नेहरू बाल पुस्तकालय पुस्तकमाला के अंतर्गत 12 से 14 वर्ष के बच्चों के लिए प्रकाशित इस पुस्तक में बापू के चर्चित जीवन-प्रसंगों को गद्य और पद्य में एक साथ प्रस्तुत किया गया है, जिसमें कितने कुर्ते, स्वच्छता एवं मितव्ययिता, उपहार की पेंसिल, 'बा' की शाला आदि उल्लेखनीय हैं।

पृ. 68; रु. 65.00

एक युग प्रवर्तक भिक्षु कुशक बकुला रिन्पोछे : एक जीवनी

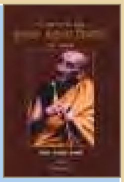

सोनम वंगचुक शक्स्पो; *अनुवाद* : **नितिन वैद्य**

यह पुस्तक कुशक बकुला के 19वें अवतार श्री लोबजंग थुबतन छोगनोर, जो कुशक बकुला रिन्पोछे के नाम से प्रसिद्ध हुए, की जीवन-यात्रा है। वे एक राजकुमार, विद्वान, समाज सुधारक तथा राजनीतिज्ञ के रूप में प्रसिद्ध हुए, जिन्हें 'आधुनिक लेह-लद्दाख का निर्माता' भी कहा जाता है। उन्होंने दशकों तक भारत राष्ट्र व लद्दाख के नागरिकों की सेवा की और मंगोलिया के सांस्कृतिक पुनर्जागरण में भी बड़ा योगदान दिया।

पृ. 546; रु. 570.00

पर्यावरण नैतिकता और पर्यावरण के प्रति भारत का परिप्रेक्ष्य

निरंजन देव भारद्वाज

अनुवाद : **प्रवीण शर्मा**

यह पुस्तक पर्यावरण का परिचय देते हुए नैतिक मूल्यों के प्रति जागरूक करती है। इसमें पर्यावरणीय सिद्धांतों, भारत में इससे संबंधित मुद्दों, यहाँ की संस्कृति, वेद, भगवद्गीता के पर्यावरण से संबंध पर प्रकाश डाला गया है। साथ ही रवींद्रनाथ टैगोर, महात्मा गांधी और प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की पर्यावरण के प्रति नैतिक दृष्टि को भी इसमें समाहित किया गया है।

पृ. 120; रु. 150.00

असाधारण कायाकल्प

सुकन्या दत्ता

अनुवाद : **मनीष मोहन गोरे**

इस पुस्तक में जैवविविधता पर प्रकाश डाला गया है। रेगिस्तान या गरम प्रदेशों, ठंडे प्रदेशों, भूमिगत या हवा, पानी, गहरे समुद्र में, पर्वतों या गुफाओं में किस-किस तरह के जीव पाए जाते हैं तथा उनकी क्या-क्या विशेषताएँ होती हैं, उनका जीवन किस तरह मनुष्य से अलग होता है, इसमें उन जीवों का विवरण दिया गया है। पुस्तक के अंत में संबंधित पारिभाषिक शब्दावली भी दी गई है।

पृ. 186; रु. 210.00

प्रेमचंद चित्रात्मक जीवनी

कमल किशोर गोयनका

यह पुस्तक 9 से 12 वर्ष तक के बाल पाठकों के लिए है। इसमें उपन्यास सम्राट प्रेमचंद की चित्रात्मक जीवनी प्रस्तुत की गई है। इसमें उनके बचपन से लेकर बड़े होने, लेखक बनने और आखिर में परलोकगमन तक की यात्रा का वर्णन है। इसमें प्रेमचंद के जीवन से जुड़े दुर्लभ चित्र, उनकी पुस्तकों के मूल आवरण पृष्ठ, समाचार-पत्रों में प्रकाशित लेख आदि संकलित हैं।

पृ. 64; रु. 50.00

nbt.india
एकः सूते सकलम्

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत

शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार

नेहरू भवन, 5 इंस्टीट्यूशनल एरिया, फेज़-II, वसंत कुंज, नई दिल्ली-110070.

फोन : 011-26707761 ● **ई-मेल** : nro.nbt@nic.in

वेबसाइट : www.nbtindia.gov.in